ISSN : 2348-2656

तेईसवां अंक

पूसा सुरभि

अप्रैल - सितंबर, 2024

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
नई दिल्ली-110012

ISSN : 2348-2656

तेईसवां अंक

पूसा सुरभि

(अप्रैल - सितंबर, 2024)

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
नई दिल्ली-110012

पूसा सुरभि
अप्रैल - सितंबर, 2024

संरक्षक एवं अध्यक्ष
डॉ. सीएच. श्रीनिवास राव
निदेशक

सह-अध्यक्ष
डॉ. विश्वनाथन चिन्नुसामी
संयुक्त निदेशक (अनुसंधान)

संपादक मंडल
डॉ. ज्ञान प्रकाश मिश्रा, अध्यक्ष, बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संभाग
डॉ. दिनेश कुमार, प्रधान वैज्ञानिक, सस्यविज्ञान संभाग
डॉ. राधा मोहन शर्मा, प्रधान वैज्ञानिक, फल एवं औद्यानिकी प्रौद्योगिकी संभाग
डॉ. नफीस अहमद, प्रधान वैज्ञानिक, कैटेट
डॉ. राकेश पांडे, प्रधान वैज्ञानिक, पादप कार्यिकी संभाग
डॉ. इन्दु चोपड़ा, वरिष्ठ वैज्ञानिक, मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विज्ञान संभाग
श्रीमती कृति शर्मा, तकनीकी सहायक/हिंदी अनुवादक

संपर्क सूत्र
हिंदी अनुभाग
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली - 110 012
दूरभाष: 011-25843588, (एक्सटेंशन नं. 4231/4235)
ई-मेलः hindicell@iari.res.in, hindicelliari@gmail.com

ISSN - 2348-2656

आवश्यक सूचना
इस अंक में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचारों/आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी है

मुद्रण: दिसंबर, 2024
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली के लिए हिंदी अनुभाग द्वारा प्रकाशित एवं मै. एम एस प्रिंटर्स, सी-108/1 बैक साइड नारायणा इंडस्ट्रीयल एरिया, फेस-1, नई दिल्ली - 110 028 द्वारा मुद्रित। फोनः 7838075335, ईमेलः msprinter1991@gmail.com

आमुख

असामयिक वर्षा, मृदा लवणीकरण, सूखा, तापमान में सतत वृद्धि, कीट एवं बीमारियों का अनआपेक्षित प्रस्फोट आदि जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न गंभीर समस्याएं हैं, जिनका फसल गुणवत्ता व सकल उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव देखा जा रहा है। इसके अलावा घटती मृदा उर्वरता और बढ़ता जल प्रदूषण का प्रभाव भी उत्पादन क्षमता पर प्रत्यक्ष रूप से देखा जा सकता है। गुणवत्तायुक्त सतत कृषि उत्पादन और मृदा स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए किसानों को स्मार्ट और नवोन्मेषी तकनीकों व बीजों के साथ-साथ आधुनिक उर्वरक स्रोतों को अपनाने की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त आधुनिक सिंचाई पद्धतियों को प्रयोग में लाकर भारत सरकार की ''पर ड्रोप मोर क्रोप'' योजना में योगदान देने की अविलंब अवश्यकता है।

इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए किसान को आधुनिक खेती के तरीके सीखने और अपनाने की आवश्यकता है। इसके लिए उन्हें बायोफोर्टीफाईड किस्मों, पौष्टिक फलों, मिलेट्स (मोटे अनाज) को अपनाने के साथ पारंपरिक खेती से हटकर अन्य विकल्पों का चयन करना चाहिए, ताकि आत्मनिर्भरता के साथ-साथ पोषण सुरक्षा के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके। निरंतर घटती कृषि योग्य ज़मीन भी आज की मुख्य समस्याओं में से एक है, जिसका निदान करने के लिए किसानों को फ्लोटिंग कृषि, संरक्षित खेती, हाइड्रोपोनिक्स, वर्टीकल फार्मिंग, सघन बागवानी इत्यादि जैसे विकल्पों को अपनाने की आवश्यकता है।

अपनी मेहनत और उत्पादन का उचित मूल्य पाने के लिए किसानों को कृषि उत्पादन को बढ़ाने के साथ-साथ उत्पादों के प्रसंस्करण और उनके व्यवसायीकरण पर भी ध्यान देना चाहिए, ताकि प्रति क्षेत्रफल अधिक से अधिक आर्थिक लाभ एवं रोज़गार के साधन सृजित हो सकें। कृषि में बढ़ते अवसरों और लाभ को देखते हुए यह युवाओं को रूचिनुसार अधिक से अधिक जुड़ने को प्रेरित करेगा।

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान किसानों की आर्थिक समृद्धि हेतु वर्षों से प्रतिबद्ध है। प्रति वर्ष 40 हज़ार से भी ज्यादा किसान, संस्थान की तकनीकियों व गुणवत्ता युक्त बीज व फल पौधे पाकर लाभान्वित होते हैं। इसके अतिरिक्त संस्थान, राजभाषा हिंदी के माध्यम से किसान व जन सामान्य को कृषि संबंधी जानकारियां लगातार उपलब्ध करवाता रहता है। इसी क्रम में संस्थान की गृह पत्रिका **''पूसा सुरभि'' का तेईसवां अंक** आपके सम्मुख प्रस्तुत है। मैं पत्रिका के इस सफल प्रकाशन के लिए डॉ. विश्वनाथन चिन्नुसामी, संयुक्त निदेशक (अनुसंधान) और हिंदी अनुभाग को बधाई देता हूं, जिनके अथक प्रयासों से इसको मूर्तरूप प्रदान किया गया है। इस पत्रिका को और अधिक आकर्षक बनाने के लिए संपादन मंडल के सभी सदस्यों को भी बधाई देता हूं। साथ ही इस अंक में सम्मिलित लेखों के लेखकों के प्रति भी आभार व्यक्त करता हूं। आशा है कि यह प्रकाशन सर्वोपयोगी सिद्ध होगा।

श्रीनिवास राव

(सीएच. श्रीनिवास राव)
निदेशक

प्राक्कथन

भारत विविध कृषि फसलों, वनस्पतियों, वृक्षों एवं जड़ी बूटियों से समृद्ध देश है। यह जैव विविधता हमारी कृषि की रीढ़ है और इसका विकास लाखों वर्षों में हुआ है। प्राचीन काल से ही मनुष्य का जीवन विविध प्रकार की वनस्पतियों पर निर्भर रहा है और साथ ही वन्य-वनस्पतियां अकाल के समय में मानव का जीवन बचाते रहे हैं। भारत में इस पादप जैव विविधता का प्रतिबद्ध अध्ययन, अन्वेषण, प्रतिस्थापन, संचयन एवं इसके द्वारा फसल सुधार के लिए पद्मश्री डॉ. हरभजन सिंह जी को 'भारतीय वेविलोव' एवं 'भारत में पादप आनुवंशिकी संसाधनों के जनक' के रूप में याद किया जाता है। इस अंक में पादप जैव विविधता संरक्षण में डॉ. हरभजन सिंह जी के अग्रणी एवं सर्वोपरि योगदान को याद किया गया है। इसी कड़ी में इस अंक में फसल संरक्षण एवं प्रवंर्धन में कुछ तकनीकों का वर्णन है, वे हैं- कृत्रिम बीज उत्पादन, नींबूवर्गीय पौधों का प्रवर्धन, स्ट्रॉबेरी, अमरुद एवं आम की सघन बागवानी - जोकि किसान को अधिक आय दिला सकते हैं। आम की आधुनिक बागवानी तकनीक द्वारा उच्च आय लेने वाले प्रगतिशील किसान का उदाहरण हैं- श्री धनंजय कुमार सिंह जी। इसी कड़ी में इस अंक में फसलों के पोषक तत्वों को जिन लेखों में महत्व दिया गया है, वे हैं- श्रीअन्न, सहजन, हरी सोयाबीन इत्यादि।

फसल संरक्षण एवं प्रवर्धन के साथ-साथ प्राकृतिक संसाधनों का समुचित प्रबंध भी अतिआवश्यक है। इस कड़ी में हम कांग्रेस घास (पार्थेनियम) जैसे हानिकारक पौधे से जैवउर्वरक बनाना जानेंगे। साथ ही अन्य लेख जैसे कि फ्लोटिंग एग्रीकल्चर, धान की सीधी बुआई (डीएसआर), जी.आई.एस. का प्रयोग, नवीकरण ऊर्जा आदि लेख भी संसाधनों के समुत्थानशील उपयोग पर जोर देते हैं। इस दिशा में कृषि में नैनोटेक्नालॉजी का उपयोग भी संसाधनों की उपयोगिता दक्षता बढ़ा सकता है। प्राकृतिक संसाधनों की समय-समय पर स्वचालित रूप से जांच पड़ताल भी एक जरुरी कार्य है, जैसे कि मृदा नमी का सेंसर द्वारा मापन। इस दिशा में अब काफी प्रगति हो रही है, जिसमें विभिन्न प्रकार के संवेदक (सेंसर) एवं आई. ओ. टी. यंत्रों का प्रयोग हो रहा है। इसे पोर्टेबल कृषि का नाम दिया जा रहा है। इसके साथ ही मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विज्ञान संभाग का परिचय भी दिया जा रहा है। यह संभाग पूसा संस्थान का प्राचीनतम संभाग है और फिफ्स लेबोरेटरी के नाम से भी जाना जाता है। आशा है कि पूसा सुरभि के इस तेइसवें अंक में आपको कृषि उपयोगी आधुनिक जानकारी मिलेगी। इस प्रकाशन के संपादन में योगदान देने वाले सभी लेखकों, संपादन मंडल एवं हिंदी अनुभाग के सदस्यों को मैं अपना हार्दिक धन्यवाद व्यक्त करता हूं। ''जय हिंद''।

(विश्वनाथन चिन्नुसामी)
संयुक्त निदेशक (अनुसंधान)

संपादकीय

कोई भी भाषा केवल भाषा नहीं होती, वह अपने आप में पूरी संस्कृति होती है। भाषा के साथ किसी भी प्रकार का समझौता करना, यानी अपनी संस्कृति की अखंडता से समझौता करना होता है। हिंदी की भाषाई संस्कृति और हिंदुस्तान की अखंड संस्कृति एक दूसरे पर आश्रित हैं। भारत राष्ट्र की संस्कृति की सुरक्षा के लिए हमारी राजभाषा की सुरक्षा भी आवश्यक है। हिंदी एक वरदान है, दायित्व नहीं। लेकिन इस वरदान की सहजता बनाए रखना हमारा दायित्व अवश्य है। हमारे जीवन में हिंदी इस सीमा तक व्याप्त है, कि कभी समाप्त नहीं होगी। हिंदी हमारे कंठ का आभूषण है, हमारी विद्या की संपन्नता का प्रताप है। हिंदी से दूर होकर हम अपनी वाणी की ओजस्विता, व्यक्तित्व की प्रखरता, बुद्धि की तीक्ष्णता, मन की निर्मलता और स्वभाव की सरलता को खो देंगे। हिंदी का व्याकरण इतना समृद्ध है, कि किसी भी भाषा के शब्द इस व्याकरण के परिवेश में आते ही हिंदी का हो जाता है। हिंदी में फ़ारसी और अंग्रेजी ही नहीं, पुर्तगाली, तुर्की, अरबी, फ्रेंच और यहां तक कि कुछ यूनानी शब्द भी अनवरत प्रयुक्त होते हैं। हिंदी ने अपने सौष्ठव से इन सब विदेशी शब्दों को अपने भीतर समाहित कर लिया है। जैसे- पुर्तगाली : अचार, चाबी, संतरा, साबुन, पपीता, बाल्टी, गमला, कमीज, आलपिन, आलू, इस्पात, कनस्तर, कार्बन, गोभी, गोदाम, नीलाम, पादरी, पिस्तौल, फीता, बस्ता, बटन, बाल्टी, पतलून, प्याज एवं मेज। तुर्की : कैंची, आका, चम्मच, तोप, बारूद, कालीन, खंजर, काबू, चेचक, चुगली, चोगा, तमाशा, बावर्ची, बेगम, बहादुर, मुगल, लाश एवं उर्दू। फ्रेंच : काजू, कारतूस, मेयर, कूपन, अंग्रेज, मीनू, रेस्टोरेंट एवं सूप। डच : तुरुप, बम एवं चिड़िया। रूसी शब्द : बुजुर्ग। यूनानी : एकेडमी, टेलिफोन एवं एटम।

हमारा देश एक कृषि प्रधान देश है। देश की उन्नति का रास्ता भारतीय कृषि की संपन्नता से ही होकर गुजरता है। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली के वैज्ञानिक नवीन कृषि तकनीकों एवं किस्मों को विकसित करके देश को आत्मनिर्भर बनाने के लिए हमेशा से प्रतिबद्ध रहे हैं। कृषि की संपन्नता के लिए यह अत्यंत आवश्यक है, कि नवीन तकनीकों की जानकारी हमारे किसान भाइयों तक आम बोल-चाल की भाषा में अविलंब पहुंचे। इस दिशा में हमारे संस्थान के निदेशक, डॉ. सीएच. श्रीनिवास राव व संयुक्त निदेशक (अनुसंधान), डॉ. विश्वनाथन चिन्नुसामी के दिशा निर्देशन में ''पूसा सुरभि'' का यह अंक प्रकाशित किया जा रहा है, जिसमें विभिन्न संस्थानों के वैज्ञानिक/तकनीकी/लेखकों ने अपना सराहनीय योगदान दिया है। हम आशा करते हैं कि ''पूसा सुरभि'' का यह अंक कृषि से जुड़े सभी हित धारकों के ज्ञान एवं आय बढ़ाने में सहायक सिद्ध होगा। हम संस्थान के निदेशक व संयुक्त निदेशक (अनुसंधान) के मार्गदर्शन के लिए हृदय से धन्यवाद करते हैं। हम इस अंक के लिए अपने बहुमूल्य लेख उपलब्ध करवाने वाले सभी लेखकों के प्रति आभार व्यक्त करते हैं। इसके अतिरिक्त हम संपादक मंडल के सभी सदस्यों, हिंदी अनुभाग के संविदा कर्मचारी, श्री अजय कुमार एवं अन्य प्रत्यक्ष तथा परोक्ष रूप से सहयोग देने के लिए सभी का धन्यवाद करते हैं।

संपादक मंडल

विषय सूची

आमुख (iii)
प्राक्कथन (v)
संपादकीय (vii)

तकनीकी खंड...

1. डॉ. हरभजन सिंह : भारतीय वाविलोव और भारत में पादप आनुवंशिक संसाधनों के जनक 1
– राज कुमार गौतम, रिंकी रेशमा पांडा, कुलदीप त्रिपाठी एवं ज्ञानेन्द्र प्रताप सिंह

2. खाद्य उत्पादन एवं आधुनिक कृषि में नैनो-तकनीक का महत्व 4
– नीरज पतंजलि, राजेश कुमार एवं अनुपमा सिंह

3. सहजन (ड्रमस्टिक) की खेती और फायदे 7
– अर्चना उदय सिंह एवं ओम प्रकाश

4. जैवकि खाद के लिए कांग्रेस घास का उपयोग : तैयार करने की वैज्ञानिक विधि 10
– चन्दू सिंह, अशोक जायसवाल, विपिन कुमार, संजीव कुमार शर्मा, नरेश कुमार सिंह एवं सुमित कुमार

5. उत्तर पश्चिमी भारत में नींबू वर्गीय पौधों का व्यवसायिक प्रवर्धन 14
– तनजील सिंह चहल एवं विक्रमजीत सिंह

6. ऑयल ब्लेंडिंग : भविष्य का पोषण और स्वाद 17
– आनवी गोयल, प्राची त्यागी, बृजेश लेखक, अजीत सिंह, अरुणा त्यागी एवं चिराग माहेश्वरी

7. तैरती खेती (फ्लोटिंग एग्रीकल्चर) : जलवायु-स्मार्ट कृषि तकनीक 20
– अंचल दास, रणबीर सिंह एवं शिवाधार मिश्रा

8. बाजरा, रागी एवं कुटकी की जैव संवर्धित (बायोफोर्टीफाइड) किस्में 26
– सुमेरपाल सिंह, तृप्ति सिंघल, निरुपमा सिंह एवं चन्दन कपूर

9. कृषि में भूगोल (जीआईएस) का अभिसरण 29
– ज्योति शर्मा, शिखा त्रिपाठी, शिव शंकर शर्मा, रंजीत कुशवाहा, स्नेहा गुप्ता, पूजा गर्ग, अनामिका कश्यप, सुजाता कुमारी एवं महेश राव

10. हरी सोयाबीन : खेती से उद्यिता की और एक नई राह 31
– मनीषा सैनी, अक्षय तालुकदार, मनु यादव, मेंनिअरी टाकू, अम्बिका राजेंद्रन, एस.के. लाल एवं ब.प. मल्लिकार्जुन

11. धान की सीधी बुआई 35
– राज कुमार गौरव, रणबीर सिंह एवं बिल्लू सिंह

12. पोर्टेबल खेती 40
– सुक्रमपाल सिंह, सौरभ एवं रणबीर सिंह

13. स्ट्रॉबेरी उत्पादन : एक अच्छा कृषि आय स्त्रोत 43
– जितेन्द्र कुमार, के.के. प्रमाणिक, संतोष वाटपड़े, धर्मपाल एवं दीपक नेगी

14. कृत्रिम बीज (आर्टिफिशियल सीड) उत्पादन तकनीक 46
- चन्दू सिंह एवं रणबीर सिंह

विविधा...

1. मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विज्ञान संभाग : परिचय एवं उपलब्धियां 53
- इन्दु चोपड़ा, विनोद कुमार शर्मा एवं देबाशीष मंडल
2. नवीकरणीय ऊर्जा : संभावनाएं, चुनौतियां और लाभ 57
- नरेन्द्र मोहन सिंह, रंजिनी वी.आर, उत्कर्ष तिवारी, एम. बालासुब्रमनियन, सूर्य प्रताप सिंह नगदली एवं अलका सिंह
3. असम राज्य में पशुपालन की चुनौतियां और भविष्य के अवसर 61
- मनीष पाण्डे, अलगुराजा एम, दा उ रुही पदे, एम.बी. चौधरी, बर्नाली हैंडिक, अरुणज्योति बरुआ, दीपज्योति बरुआ एवं अमजद के बालंगे
4. सूत्रकृमि विज्ञान : आजीविका के अवसर 66
- राशिद परवेज़, पंकज, चंद्रमानी बाघमारे एवं विकास वामेंल
5. मायकोटॉक्सिन और मानव स्वास्थ्य पर उनका प्रभाव 67
- दीबा कामिल, विष्णु माया बस्याल, रश्मि अग्रवाल, अमृता दास एवं महेंद्र सिंह सहारण
6. अमरुद की वैज्ञानिक बागवानी 70
- मधुबाला ठाकरे, पूनम मौर्या, शुभम जग्गा, संजय सिरोही, अमित कुमार गोस्वामी एवं चवलेश कुमार
7. आम की सघन बागवानी तकनीक से किया कमाल : एक प्रगतिशील किसान की करोड़पति बनने की कहानी 77
- नरेंद्र मोहन सिंह, अलका सिंह, नफ़ीज़ अहमद, निशी शर्मा एवं प्रतिभा जोशी

राजभाषा खंड...

1. भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान राजभाषा प्रगति रिपोर्ट 83
2. बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संभाग, नई दिल्ली 87
3. आनुवंशिकी संभाग, नई दिल्ली 89
4. सूत्रकृमि विज्ञान संभाग, नई दिल्ली 90
5. जैव रसायन विज्ञान संभाग, नई दिल्ली 92
6. कृषि रसायन संभाग, नई दिल्ली 94
7. कैटेट, नई दिल्ली 95
8. भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र, पुणे 96
9. भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र, शिमला 97
10. भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र, कालिम्पोंग 99
11. हिंदी का वैश्विक स्तर 100
- रणबीर सिंह एवं ओम प्रकाश सिंह
12. आओ मनाएं अब हिंदी वर्ष ! 102
13. कविताएं 104
14. पुरस्कार व सम्मान 105

तकनीकी खंड...

डॉ. हरभजन सिंह : भारतीय वाविलोव और भारत में पादप आनुवंशिक संसाधनों के जनक

राज कुमार गौतम, रिंकी रेशमा पांडा, कुलदीप त्रिपाठी एवं ज्ञानेन्द्र प्रताप सिंह

भा.कृ.अनु.प.- राष्ट्रीय पादप अनुवांशिक संसाधन ब्यूरो, नई दिल्ली-110 012

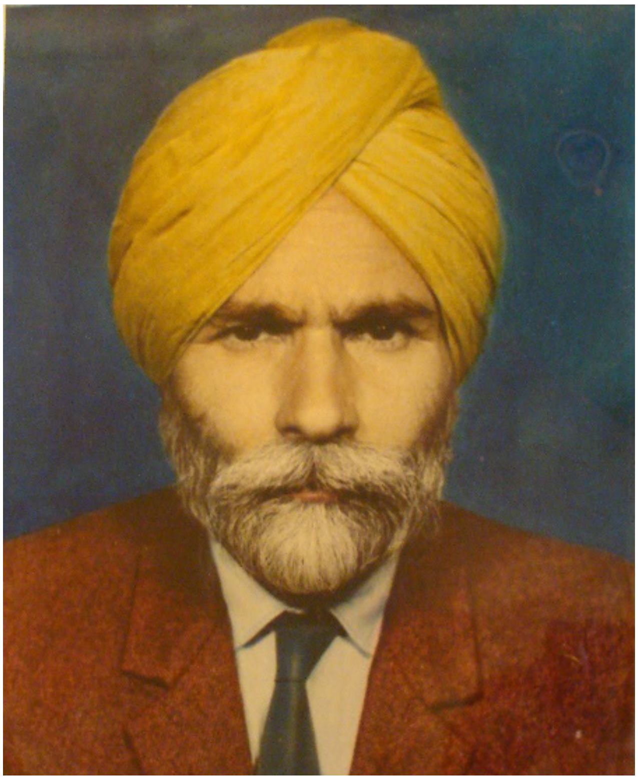

भारतीय वेविलोव : डॉ. हरभजन सिंह

डॉ. हरभजन सिंह, पादप आनुवंशिक संसाधनों (PGR) के क्षेत्र में एक अद्वितीय व्यक्तित्व, का जन्म दिनांक 6 फरवरी, 1916 को पूसा, बिहार में हुआ था। डॉ. सिंह ने आगरा विश्वविद्यालय से मास्टर डिग्री पूरी की और बाद में इंपीरियल एग्रीकल्चरल रिसर्च इंस्टीट्यूट अब (भा.कृ.अनु.प.-भा.कृ.अनु.सं.) से आर्थिक वनस्पति विज्ञान में एसोसिएटशिप का डिप्लोमा पाठ्यक्रम पूरा किया। आर्थिक वनस्पति विज्ञान और पादप आनुवंशिकी के प्रति उनके गहरे लगाव ने उन्हें पादप परिचय और आनुवंशिक संसाधनों में अनुसंधान की ओर अग्रसर किया, जिससे वे इस क्षेत्र के अग्रदूत बन गए।

उन्होंने भा.कृ.अनु.सं. की वनस्पति विज्ञान संभाग में एक नियमित शोध कर्मचारी के रूप में कार्य शुरू किया। बाद में, वे नई दिल्ली स्थित भा.कृ.अनु.सं. के पादप परिचय संभाग के प्रमुख के रूप में प्रतिष्ठित पद पर नियुक्त हुए। उन्होंने अपने अनूठे वैज्ञानिक और मानवीय गुणों से कई स्नातकोत्तर छात्रों को शिक्षित किया और मार्गदर्शन प्रदान किया। "भारतीय वाविलोव" के रूप में विख्यात, डॉ. सिंह की विरासत हरित क्रांति और भारत की कृषि समृद्धि से गहराई से जुड़ी हुई है। पादप परिचय, आर्थिक वनस्पति विज्ञान और फसल सुधार में उनका आजीवन योगदान भारत के आधुनिक कृषि विज्ञान की नींव बना।

डॉ. सिंह के पादप परिचय में उल्लेखनीय योगदान ने भारत के कृषि क्षेत्र को बदल दिया। उनके अथक प्रयासों ने भारत में विविध फसल जननद्रव्य लाए, जिससे उच्च उपज और रोग प्रतिरोधी किस्मों का विकास हुआ।

अनाज और दलहन

डॉ. सिंह ने गेहूं और धान की उन्नत किस्मों को भारत में प्रस्तुत किया, जो हरित क्रांति का आधार बने। उन्होंने मटर, लोबिया और फ्रेंच बीन जैसे दलहनों के विविध जननद्रव्य को भी शामिल किया, जिससे भारत की खाद्य सुरक्षा को मजबूत किया गया।

तिलहन और सब्जियां

पोषण सुरक्षा में तिलहनों की भूमिका को समझते हुए, उन्होंने भारत में सोयाबीन जननद्रव्य का आयात कराया, जिससे इसकी व्यापक खेती संभव हुई। टमाटर, फूलगोभी, भिंडी, शलजम और गाजर जैसी सब्जियों में उनके योगदान ने भारत के आहार विविधता को समृद्ध किया।

बागवानी फसलें

डॉ. सिंह ने कम ठंडक सहन करने वाले और समशीतोष्ण फलों जैसे सेब, आड़ू और चीनी गूसबेरी को भारतीय जलवायु

परिस्थितियों में अनुकूल बनाया। उन्होंने पोम्पोन क्रिसेंथेमम जैसे शोभनीय पौधों को भी प्रस्तुत किया, जिससे भारत के पुष्प उद्योग को समृद्धि मिली। डॉ. सिंह के इन अभूतपूर्व योगदानों ने भारत की कृषि को नई ऊंचाइयों तक पहुंचाया।

डॉ. हरभजन सिंह की सबसे उल्लेखनीय उपलब्धियों में से एक थी भिंडी की किस्म ‹**पूसा सावनी**› का विकास। यह किस्म अपनी **जैसिड और पीला मोज़ेक वायरस** के प्रति प्रतिरोधक क्षमता के कारण व्यापक रूप से स्वीकार की गई। इसकी उच्च उपज और अनुकूलता ने इसे किसानों की पहली पसंद बना दिया, जिससे भारत में सब्जी उत्पादन में महत्वपूर्ण वृद्धि हुई।

डॉ. सिंह ने जई की ऐसी किस्में भी विकसित की, जो हरे चारे और नाश्ते के खाद्य उद्योग के लिए उपयुक्त थी। इन किस्मों ने पशु पोषण को बेहतर बनाने और खाद्य स्रोतों को विविधता प्रदान करने में अहम भूमिका निभाई, जो डॉ. सिंह की दूरदर्शी सोच को दर्शाता है। आर्थिक वनस्पति विज्ञान के प्रति उनकी गहरी रुचि ने कई महत्वपूर्ण पौधों के आयात और अनुकूलन में क्रांतिकारी कार्य किए। उनके प्रयासों में शामिल थे:

समशीतोष्ण फल: कम ठंडक सहने वाले सेब और आड़ू की किस्मों का अनुकूलन, जिससे उनका उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में उत्पादन संभव हुआ।

पौष्टिक सब्जियां: मटर, शकरकंद और खीरे जैसी सब्जियों के माध्यम से सब्जियों की विविधता में वृद्धि।

सजावटी पौधे: पोम्पोन क्रिसेंथेमम जैसे शोभनीय पौधों का परिचय, जिससे भारत के पुष्प उद्योग का विकास हुआ।

पादप परिचय तक सीमित न रहते हुए, डॉ. सिंह पौध प्रजनन के क्षेत्र में भी अग्रणी थे। उन्होंने कीट और रोग प्रतिरोध पर अनुसंधान किया, जिससे भारत में स्थाई कृषि की नींव पड़ी। नवीन जननद्रव्य का उपयोग करके, उन्होंने ऐसे सहनशील किस्मों का विकास किया जो जैविक और अजैविक तनावों का सामना कर सकें। उनकी नवोन्मेषी फसल सुधार दृष्टिकोण ने पौध प्रजनकों और आनुवंशिकीविदों की एक पीढ़ी को प्रेरित किया, जिससे भारत के कृषि संस्थानों में एक सशक्त अनुसंधान संस्कृति को बढ़ावा मिला।

डॉ. हरभजन सिंह के कृषि में असाधारण योगदान ने उन्हें कई प्रतिष्ठित पुरस्कार और सम्मान दिलाए, जो उनके क्षेत्र पर गहरे प्रभाव को दर्शाते हैं:

पद्म श्री पुरस्कार (1971): कृषि और पादप आनुवंशिक संसाधनों में उनके उत्कृष्ट योगदान के लिए भारत के राष्ट्रपति द्वारा प्रदान किया गया।

मानद डॉक्टरेट (डॉक्टर ऑफ साइंस): 1971 में पंजाब कृषि विश्वविद्यालय द्वारा उनके वैज्ञानिक कार्यो और अग्रणी उपलब्धियों के लिए सम्मानित।

"भारतीय वाविलोव" की उपाधि: प्रसिद्ध रूसी आनुवंशिकीविद और पादप भूगोलवेत्ता निकोलाई वाविलोव के कार्यों से समानता के लिए उन्हें यह सम्मान दिया गया।

130 से अधिक शोध पत्र, बुलेटिन, मोनोग्राफ और लोकप्रिय लेख प्रकाशित किए। उन्होंने कई संगठनों के सलाहकार के रूप में सेवा की और अंतरराष्ट्रीय मंचों पर देश का प्रतिनिधित्व किया।

डॉ. हरभजन सिंह का जीवन और कार्य यह दर्शाते हैं कि विज्ञान की शक्ति कैसे वास्तविक जीवन की चुनौतियों का समाधान कर सकती है। उनकी दूरदृष्टि और समर्पण ने न केवल भारत की हरित क्रांति को सशक्त किया बल्कि भविष्य के लिए स्थाई कृषि का आधार भी तैयार किया।

डॉ. सिंह के प्रयासों से उच्च उत्पादकता वाले गेहूं और धान की किस्मों का परिचय संभव हुआ, जो भारत की **हरित क्रांति** का आधार बने। इस क्रांति ने भारत को खाद्यान्न की कमी वाले देश से आत्मनिर्भर राष्ट्र में परिवर्तित कर दिया। उनके कार्यों ने उन जीनोटाइप्स और जननद्रव्य का आधार प्रदान किया, जिनका उपयोग प्रजनन कार्यक्रमों में करके उत्पादकता बढ़ाई गई और लाखों लोगों के लिए **खाद्य सुरक्षा** सुनिश्चित की गई।

डॉ. सिंह एक दूरदर्शी वैज्ञानिक थे जिन्होंने भविष्य की पीढ़ियों के लिए पादप आनुवंशिक संसाधनों के संरक्षण के महत्व को समझा। उन्होंने **जीन बैंकों की स्थापना** का समर्थन किया और **देशी जननद्रव्य के संग्रह और संरक्षण** को बढ़ावा दिया, यह पहचानते हुए कि ये संसाधन स्थाई और सहनशील फसल किस्मों के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

डॉ. हरभजन सिंह का जीवन और कार्य यह दर्शाते हैं कि **विज्ञान की परिवर्तनकारी शक्ति** वैश्विक चुनौतियों को हल करने में कितनी प्रभावी हो सकती है। पादप आनुवंशिक संसाधनों के प्रति उनके जुनून और कृषि नवाचार के प्रति उनकी प्रतिबद्धता ने भारत के कृषि क्षेत्र पर अमिट छाप छोड़ी।

उन्होंने विविध फसल जननद्रव्य का परिचय कराया, सहनशील किस्मों का विकास किया और पादप आनुवंशिक संसाधनों के संरक्षण का मार्ग प्रशस्त किया। इन प्रयासों से न केवल भारत की हरित क्रांति को सशक्त किया गया, बल्कि **स्थाई कृषि** के लिए भी आधार तैयार किया गया।

"भारतीय वाविलोव" के रूप में डॉ. सिंह की विरासत आज भी वैज्ञानिकों, नीति-निर्माताओं और किसानों के लिए प्रेरणा का स्रोत है। उनकी दूरदृष्टि और समर्पण यह दर्शाते हैं कि **आनुवंशिक विविधता** एक खाद्य-सुरक्षित और स्थाई भविष्य के निर्माण में कितना महत्वपूर्ण योगदान देती है।

खाद्य उत्पादन एवं आधुनिक कृषि में नैनो-तकनीक का महत्व

नीरज पतंजलि, राजेश कुमार एवं अनुपमा सिंह

कृषि रसायन संभाग, भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110 012

कृषि के क्षेत्र में अभूतपूर्व प्रगति होने पर भी विश्वभर में कुपोषण एवं भुखमरी चिंताजनक समस्याएं है। बढ़ती जनसंख्या, जलवायु परिवर्तन, कृषि योग्य भूमि की कमी, कृषि भूमि एवं जल की निरंतर घटती गुणवत्ता के चलते इस समस्या से पार पाना और कठिन हो गया है। एक अनुमान के अनुसार वर्ष 2050 में दुनिया की जनसंख्या 900 करोड़ से अधिक हो जाएगी। इतने विशाल जनसमूह का सुपोषण सुनिश्चित करने के लिए कृषि उत्पादन में लगभग 50-60% की वृद्धि अपेक्षित है। इस संदर्भ मे नैनो-तकनीक का महत्व बढ़ गया है। नैनो-तकनीक के कृषि में उपयोग से कृषि उपज में वृद्धि के साथ-साथ उपज एवं गुणवत्ता में वृद्धि की संभावनाएं हैं। नैनो-तकनीक की उपयोगिता कृषि के विभिन्न क्षेत्रों में लाभकारी साबित हो रही है और नित नए आयाम खुलते जा रहे है। किसी भी पदार्थ की 1 से 100 नैनोमीटर के आयामों पर समझ एवं नियंत्रण नैनो तकनीक कहलाता है। इतना सूक्ष्म आकर ही इन पदार्थों के अद्वितीय गुणों के लिए उत्तरदायी होता है। कोई भी कण जो किसी भी एक आयाम में 10^{-7} से 10^{-9} मीटर के आकार का होता है वह नैनो-कण (नैनो-पार्टिकल) कहलाता है। विभिन्न आयामों में नैनो-कणों के आकार के आधार पर नैनो-कणों को चार श्रेणियों में बांटा गया है:

शून्यआयामी नैनो-कण: वे कण जो सभी आयामों में 10^{-9} मीटर से छोटे होते हैं वे शून्यआयामी नैनो-कण कहलाते है। उदाहरण के लिए कार्बन फुलरिनस (carbon fullerenes), क्वांटम डॉट्स (quantum dots)।

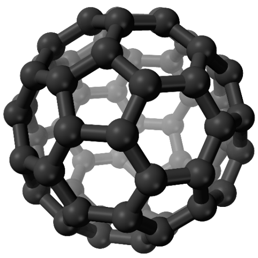

कार्बन फुलरिनस *(carbon fullerenes)*

एकआयामी नैनो-कण: वे नैनोकण जो किसी भी एक आयाम में 10^{-9} मीटर से बड़े होते है और अन्य आयामों में 10^{-9} मीटर से छोटे होते हैं एक आयामी नैनो-कण कहलाते है। उदाहरण के लिए कार्बन नैनो ट्यूब (carbon nanotube)।

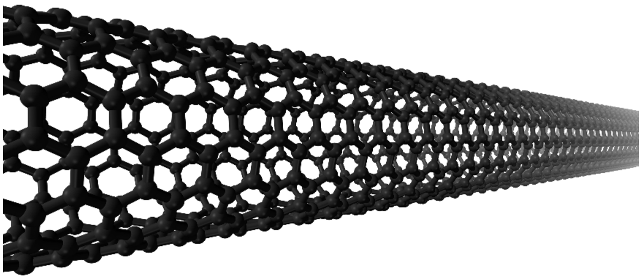

कार्बन नैनो ट्यूब ***(carbon nanotube)***

द्विआयामी नैनो-कण: वे नैनोकण जो किन्हीं भी दो आयामों में 10^{-9} मीटर से बड़े होते है और अन्य आयाम में 10^{-9} मीटर से छोटे होते हैं द्विआयामी नैनो-कण कहलाते हैं। उदाहरण के लिए ग्राफिन फ़िल्म (graphene film)।

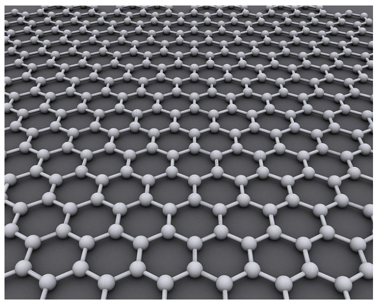

ग्राफिन फ़िल्म ***(graphene film)***

त्रिआयामी नैनो-कण: ये सभी तीन आयामों में 10^{-9} मीटर से बड़े होते हैं लेकिन उनके घटक आकार में 10^{-9} मीटर से कम के होते हैं। नैनो रेंज के कण एक साथ मिलकर त्रि-आयामी नैनोमटेरियल बनाते हैं। उदाहरण के लिए नैनोफाइबर बंडल (nanofibre bundle), नैनो कम्पोजिट (nano composite) अपने वज़न

के अनुपात में असाधारण रूप से उच्च सतह क्षेत्र (very high surface to mass ratio) की वजह से नैनो-कणों को अपने अद्वितीय गुण मिलते हैं। उदहारण के लिए सोना अपने सामान्य स्वरुप में एकदम अक्रिय (inert) होता है किंतु अपने नैनो स्वरुप में वही सोने के कण अत्यधिक प्रतिक्रियाशील (reactive) हो जाते हैं।

कृषि में नैनो-तकनीक

नैनो-तकनीक का मुख्य रूप से उपयोग कीट प्रबंधन एवं पोषक-तत्त्वों के प्रबंधन में देखा जा रहा है। नैनो-तकनीक आधारित पीड़कनाशी सूत्रण एवं नैनो-उर्वरक अब बाज़ार में भी आने को तैयार है। नैनो-तकनीक द्वारा संेसरो (sensors) के विकास के लिए भी काफ़ी अनुसंधान किया जा रहा है जो कि फ़सल पर कीट अथवा बीमारी आने पर शुरूआती चरण में ही उसका पता लगा कर उस से होने वाले नुकसान को कम करने में सहायक होते हैं। इसके अतिरिक्त नैनो-तकनीक का इस्तेमाल जेनेटिक-इंजीनियरिंग (genetic engineering) में पौधों की उन्नत किस्में बनाने, कीटनाशकों के अवशेष (pesticide residue) की जांच, कटाई के बाद फसल के भंडारण आदि में भी किया जा रहा है।

पीड़कनाशकों और उर्वरकों में नैनो तकनीक

कृषि विज्ञान में नैनो-तकनीक द्वारा नैनो-कैप्सूल और नैनोकणों का उपयोग करके विभिन्न प्रकार के नैनो पीड़कनाशी सूत्रण बनाए जा सकते हैं। इसके अलावा नैनो बहुलको (nano polymers) का इस्तेमाल पीड़कनाशकों के नियंत्रित रिलीज़ (controlled release) के लिए वाहकों (pesticidal carriers) के रूप में किया जा सकता है। अपने अत्ति सूक्ष्म आकार के कारण नैनो पीड़कनाशक पत्तियों/कीटों पर छिड़के जाने पर आसानी से अवशोषित कर लिए जाते हैं। फलस्वरूप कम पीड़कनाशक के प्रयोग से भी अधिक जैव-प्रभावकारिता प्राप्त की जा सकती है। इससे कृषि रसायनों द्वारा पर्यावरण को पहुंचने वाली हानि को भी एक स्तर तक कम किया जा सकता है। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा विकसित नैनो सल्फर जब कवकनाशी के रूप में इस्तेमाल किया गया तो बाज़ार में उपलब्ध सामान्य सल्फर फॉर्मूलेशन की तुलना में लगभग दो गुणा अधिक प्रभावी पाया गया। इसी तरह नैनो हेक्साकोनाज़ोल (nano hexaconazole) भी राइज़ोक्टोनिया सोलानी कवक (Rhizoctonia solani fungus) के खिलाफ बाज़ार में उपलब्ध फॉर्मूलेशन की तुलना में 2-6 गुना अधिक प्रभावकारी पाया गया। इसी प्रकार नैनो पीड़कनाशी बेहतर प्रभावकारिता के चलते कम मात्रा में भी प्रभावी होते है। इसी तरह अपने छोटे आकर क चलते नैनो-उर्वरक भी फ़सल द्वारा आसानी से अवशोषित कर लिए जाते हैं। फलस्वरूप कम उर्वरक के इस्तेमाल से भी फसल को पर्याप्त मात्रा में पोषक तत्त्व प्राप्त हो जाते हैं। हाल ही में इफको (IFFCO) द्वारा विकसित किया गया नैनो यूरिया तरल एक नया और अनोखा उर्वरक है। इसके एक कण का आकार लगभग 100 नैनोमीटर से भी कम होता है। सामान्य यूरिया की तुलना में इसका सतह क्षेत्र और आयतन अनुपात (surface to mass ratio) हज़ारों गुना अधिक होता है। फलस्वरूप अपने अति-सूक्ष्म आकार और सतही विशेषताओं के चलते नैनो यूरिया पत्तियों पर छिड़के जाने पर पौधों द्वारा आसानी से अवशोषित कर लिया जाता है एवं सामान्य यूरिया के मुकाबले कम मात्रा में इस्तेमाल पर भी अधिक प्रभावकारी होता है। पौधों के जिन भागों में नाइट्रोजन की आवश्यकता होती है ये कण वहां पहुंचकर संतुलित मात्रा में पोषक तत्व प्रदान करते हैं। इसके अतिरिक्त अनेकों शोध पत्रों में प्रकाशित अध्ययनों से यह साबित हो चुका है कि सामान्य अवस्था के मुकाबले अपनी नैनो अवस्था में फॉस्फोरस, जिंक, आयरन, मैंगनीज कहीं अधिक प्रभावी होते है।

जेनेटिक-इंजीनियरिंग में नैनो-तकनीक

पिछले कुछ समय में पादप जेनेटिक इंजीनियरिंग में पारंपरिक तकनीकों से संबंधित समस्याओं को दूर करने के लिए नैनो-तकनीकों का प्रयोग किया जा रहा है। नैनोकणों के जीन-वाहकों (gene-carriers) के रूप में इस्तेमाल मुख्यतः किया जाता है। डीएनए के साथ संयुग्मित चुंबकीय आयरन-ऑक्साइड नैनोकणों (magnetic iron-oxide nanoparticles conjugated with DNA) का उपयोग कपास के पराग में जीन प्रतिपादन (gene delivery) के लिए किया जाना इसका एक उदहारण है।

नैनो-तकनीक आधारित सेंसर

सेंसर वे उपकरण होते हैं जो किसी संभावना को शुरूआती चरण में ही पहचानने में सक्षम होते है। नैनो-तकनीक आधारित सेंसरो का इस्तेमाल फसल में कीट अथवा बीमारी आने पर शुरूआती चरण में ही उसका पता लगाकर उचित निदान द्वारा उनसे होने वाले नुकसान को कम किया जाने में किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त कृषि में नैनोसेंसर का उपयोग मिट्टी की नमी, कीटनाशक

अवशेषों, पोषक तत्वों की आवश्यकता आदि का पता लगाने के लिए किया जाता है। नैनो सेंसरों की उच्च संवेदनशीलता उन्हें स्मार्ट कृषि के लिए अत्याधिक उपयोगी बनाती है। नैनो-तकनीक आधारित सेंसर फसल उर्वरक आवश्यकताओं के बारे में सटीक जानकारी प्रदान कर सकते हैं, जो अनुपयोगी उर्वरकों के बोझ को कम कर किसानों की लागत को कम करने में सहायक हो सकते हैं।

खाद्य पैकेजिंग (food packaging) में नैनो तकनीक

खाद्य उत्पादन जितना ज़रूरी है उतना ही ज़रूरी उत्पाद का सुरक्षित भंडारण एवं पैकेजिंग भी है। नैनो-तकनीक पर आधारित कोटिंग फिल्मस (coating films) फल एवं सब्ज़ियों की शेल्फ-लाइफ को बढ़ाने में सहायक है। नैनो सेंसरो का उपयोग खाद्य सामग्री में रसायनों, कीटों और रोग-जनकों का पता लगाने के लिए किया जाता है। आधुनिक शब्दावली में, इस प्रकार की पैकेजिंग को स्मार्ट पैकेजिंग के रूप में जाना जाता है।

इसमें कोई शंका नहीं है कि नैनो-तकनीक आधारित प्रौद्योगिकियां अपने गुणों के कारण अभूतपूर्व परिणाम दे रही है एवं भविष्य में खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण होंगी। किंतु इस क्षेत्र में अभी भी संभावनाओं का अपार भंडार है अतः इस क्षेत्र में और अधिक अन्वेषण करना होगा। इसके अतिरिक्त नैनो-तकनीक आधारित उत्पादों के इस्तेमाल एवं सुरक्षा से जुड़ी नियामावली का भी आभाव है एवं इस क्षेत्र में भी कार्य किए जाने की आवश्यकता है। अंत में यही कहा जा सकता है कि कृषि के आधुनिकीकरण में नैनो-तकनीक का योगदान महत्वपूर्ण हो सकता है।

सहजन (ड्रमस्टिक) की खेती और फायदे

अर्चना उदय सिंह[1] एवं ओम प्रकाश[2]

[1]सूत्रकृमि विज्ञान संभाग एवं [2]कृषि प्रसार संभाग

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110 012

सहजन भारत में उगाई जाने वाली एक प्रमुख बहु वर्षीय सब्जी है। इसको वैज्ञानिक भाषा में *मोरिंगा ओलीफेरा* के नाम से जाना जाता है। इसको विभिन्न राज्यों में अलग-अलग नामों से जाना जाता है, जैसे हिंदी भाषी राज्यों में इसे सहजन, मराठी में रोवागा, तमिल में मुरुन्गाई, मलयालम में मुरिंगनगा तथा तेलगू में मुनगकाया। सहजन की खेती का व्यापक रूप से भारत में क्षेत्रफल बढ़ रहा है। सहजन की दो प्रकार की प्रजातियां होती है - एक वर्षीय एवं बहुवर्षीय। इसकी खेती मुख्यतः तमिलनाडु, केरला, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, छत्तीसगढ़, बिहार, पश्चिम बंगाल, राजस्थान एवं गुजरात में की जाती है। सहजन की 13 प्रजातियां भारत के हिमालय क्षेत्र में पाई जाती है।

चित्र-1. मातृ वृक्ष पर लगी सहजन की फलियां

सहजन का प्रत्येक भाग (पत्तियां, फली छाल, जड़ एवं फूल) बहुत ही उपयोगी होता है। यह मनुष्य एवं पशुओं दोनों के लिए बहुत ही उपयोगी होता है। इसकी पत्तियों का उपयोग हरी सलाद, सब्जी, दाल करी, पराठा, पकोड़ा, अंडा रोल, आलू भुर्जी व फली का उपयोग आचार, सूप एवं दाल करी आदि में किया जाता है (चित्र 1-2.)

चित्र-2. सहजन फलों से निर्मित व्यंजन

इसकी पत्तियों का उपयोग पशुओं के लिए हरे चारे के लिए भी कर सकते हैं। इसका बीज से निकले तेल का उपयोग परफ्यूम बनाने में होता है। इसकी सूखी एवं हरी पत्तियों का उपयोग खाद बनाने में भी करते हैं।

पोषक मान

सहजन की पत्ती व फली दोनों ही पोषण के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है जिनका पोषक मान तालिका–1 में वर्णित है।

तालिका – 1. पत्तियों और फलों का संगठन (प्रति 100 ग्राम खाद्य भाग)

क्र. स.	पोषक तत्त्व	पत्तियां में	फलियों में
1.	खाद्य योग्य भाग (%)	75	83
2.	नमी (%)	75.0	86.9
3.	प्रोटीन (ग्राम)	6.7	2.5
4.	वसा (ग्राम)	1.7	0.1
5.	कार्बोहाइड्रेट (ग्राम)	13.4	3.7
6.	खनिज पदार्थ (ग्राम)	2.3	2.0
7.	रेशा (ग्राम)	0.9	4.8
8.	उर्जा (केलोरी)	92	26
9.	कैल्शियम (मि.ग्रा.)	440	30
10.	मैगनीशियम (मि.ग्रा.)	24	24
11.	ऑक्सालिक एसिड (मि.ग्रा.)	101	101
12.	फॉस्फोरस (मि.ग्रा.)	70	110
13.	पोटेशियम (मि.ग्रा.)	259	250
14.	कॉपर (मि.ग्रा./ग्रा.)	1.1	3.1
15.	लौह (मि.ग्रा.)	7.0	5.3
16.	गंधक (मि.ग्रा.)	137	137
17.	विटामिन ए (आ.यू)	11,300	184
18.	किलोरिन (मि.ग्रा.)	423	423
19.	थायमिन (मि.ग्रा.)	0.06	0.05
20.	रिबोफ्लोविन (मि.ग्रा.)	0.05	0.07
21.	निकोटिनिक एसिड (मि.ग्रा.)	0.8	0.2
22.	विटामिन सी (मि.ग्रा.)	220	120

मृदा एवं जलवायु - इसकी खेती जलमग्न मर्दा के अतिरिक्त सभी प्रकार की मृदाओं में की जा सकती है। इसकी खेती के लिए 6.5 से 8.5 पी.एच. मान वाली मृदा अच्छी मानी जाती है। सहजन के फूलों के विकास के लिए 25 से 30 डिग्री सेंटीग्रेट तापमान अच्छा माना जाता है।

प्रसारण एवं लगाने की विधियां - इसके प्रसारण की दो विधियां हैं - 1. सीधे खेत में बीज की बुआई करना 2. नर्सरी में पौध तैयार द्वारा खेत में रोपाई करना। सहजन की दो प्रकार की किस्म पाई जाती हैं। एक वर्षीय एवं बहुवर्षीय। वार्षिक सहजन को सीधे खेत में गड्ढ़ों में बीज की बुआई कर सकते है और बहुवर्षीय किस्म को नर्सरी में पौध तैयार करके लगाया जा सकता है। नर्सरी में पौध तैयार करने के लिए बालू, गोबर की खाद और बाग की मिटटी की आवश्यकता होती है। नर्सरी में पौध तैयार करने के लिए 650-750 ग्राम बीज प्रति हैक्टेयर की आवश्यकता होती है। बीज के अंकुरण के 10-15 दिन बाद पौध विरलन कर देना चाहिए। प्रत्येक पोलीबेग में 2 पौधे रखने चाहिए। जब पौधे 40-50 सेमी ऊंचाई के हो जाए तब खेत में रोपाई कर देना चाहिए। पौधों को खेत में 45 सेमी x45 सेमी x45 सेमी आकार के बने गड्ढ़ों में 2.5 मी. x 2.5 मी. की दूरी पर रोपित कर देना चाहिए। खेत में रोपाई जुलाई से अगस्त के महीने में करना उचित रहता है।

प्रमुख किस्में - सहजन की प्रमुख उन्नत प्रजातियां पीकेएम-1, पीकेएम-2, केएम-1, रोहित-1, कोयेम्बटूर-1 और भाग्य (केडीएम-1) हैं।

जल प्रबंधन - सहजन का पौधा काफी नाजुक एवं मुलायम होता है। इसको अधिक मात्रा में सिंचाई देने की आवश्यकता नहीं होती है। इसे शुष्क क्षेत्रों में प्रथम दो महीने तक लगातार सिंचाई की आवश्यकता होती है और उसके बाद आवश्यकता पड़ने पर सिंचाई करते हैं। जल की पर्याप्त उपलब्धता होने पर 15 दिन में दो बार सिंचाई करने पर फलियां जल्दी प्राप्त होने लगती हैं वही एक समान वर्षा वाले क्षेत्रों में यह उपज लगातार प्राप्त होती रहती है।

सहजन (ड्रमस्टिक) के गुण- यह एंटी-ऑक्सीडेंट, एंटी-अस्थमैटिक, एंटी पैरासाइटिक, एंटी-बैक्टेरियल, एंटी-फंगल, एंटी-अल्सर एजेंट, एंटी-स्पास्मोडिक (मांसपेशियों की ऐंठन से राहत देने वाला), एंटी-एलर्जिक आदि गुड़ों से परिपूर्ण है। इसके अतिरिक्त सहजन का सेवन रक्तचाप व खून में शक्कर को कम करने के साथ-साथ कई बीमारियों से बचाने में सहायक होता है।

सहजन (ड्रमस्टिक) लेते समय बरती जाने वाली सावधानियां- आम तौर पर सहजन को सुरक्षित माना जाता है अगर इसे कम मात्रा में खाया जाए। सहजन एंटी-फर्टिलिटी एजेंट के रूप में कार्य करता है और गर्भपात का कारण बन सकता है। यह गर्भावस्था के दौरान आरोपण की प्रक्रिया को भी प्रभावित करता है। इसलिए गर्भवती महिलाओं को सहजन का सेवन करते समय सावधानी बरतनी चाहिए। हालांकि यदि सेवन के उपरांत कोई असामान्य लक्षण दिखाई देता है तो तुरंत अपने चिकित्सक से परामर्श करें।

"जैविक खाद के लिए कांग्रेस घास का उपयोग : तैयार करने की वैज्ञानिक विधि"

चन्दू सिंह, अशोक जायसवाल, विपिन कुमार, संजीव कुमार शर्मा, नरेश कुमार सिंह एवं सुमित कुमार

बीज उत्पादन इकाई, भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110 012

बिना बुआई उगे पौधे अवांछित पौधे या खरपतवार कहलाते हैं। खरपतवार हमेशा फसल की पैदावार व गुणवत्ता पर विपरीत असर डालते हैं। गाजर घास भी एक ऐसा ही खतरनाक खरपतवार हैं, जो फसल के साथ-साथ मनुष्य के स्वास्थ्य पर भी यह बहुत बुरा असर डालता है। इसका वैज्ञानिक नाम पारथेनियम हिस्ट्रोफोरस है यह एस्टेरेसी कुल का सदस्य है। गाजर घास को ही कांग्रेस घास, कड़वी घास, चटक चांदनी आदि नामों से जाना जाता है। यह खरपतवार भारत में सन् 1955 में अमेरिका व कनाडा से आयातित गेहूं के साथ आया था और अब यह लाखों हैक्टेयर अकृषित व कृषित भूमि पर फैल चुका है और दिन-प्रतिदिन किसानों के लिए ही नहीं अपितु मानव, पर्यावरण व जैव विविधता के लिए खतरा बन गया है। वर्तमान समय में इस खरपतवार की रोकथाम के लिए वैज्ञानिक इसका उपयोग खाद बनाने के लिए कर रहे हैं। जिससे किसान खरपतवार से फसल में होने वाले नुकसान से बच जाते हैं साथ ही साथ खाद बनाकर भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ा सकते हैं तथा आमदनी प्राप्त कर सकते हैं।

गाजर घास की पहचान

यह उष्ण कटिबंधीय जलवायु का पौधा है। यह अक्सर सड़क किनारे या गंदी जगह में देखने को मिलता है इसकी लंबाई लगभग 90 सें.मी. से 1 मीटर तक होती है। यह वर्षभर उगने वाला पौधा है। यह हर प्रकार की मिट्टी में उग जाता है यह 25 से 30 डिग्री सेल्सियस तापमान पर अंकुरण करता है।

गाजर घास से खाद बनाए

सघन कृषि प्रणाली के चलते रासायनिक उर्वरकों के अत्यधिक उपयोग करने से, मानव के स्वास्थ्य एवं पर्यावरण पर होने वाले घातक परिणाम किसी से छिपे नहीं हैं। भूमि की उर्वरा शक्ति में लगातार गिरावट आती जा रही है। रसायनिक खादों द्वारा पर्यावरण एवं मानव पर होने वाले दुष्प्रभावों को देखते हुए जैविक खादों का महत्व भारत में दिन प्रतिदित बढ़ रहा हैं। गाजर घास से जैविक खाद बनाकर हम पर्यावरण की सुरक्षा करते हुए धनोपार्जन भी कर सकते हैं। निराई-गुड़ाई कर हम जहां एक तरफ खेतों से गाजर घास एवं अन्य खरपतवारों को निकाल कर फसल की सुरक्षा करते हैं, वहीं इन सभी खरपतवारों से वैज्ञानिक विधि अपनाकर अच्छा जैविक खाद प्राप्त कर सकते हैं। जिसे फसलों में डालकर किसान अपने खेत की पैदावार बढ़ा सकते हैं।

मिट्टी लगी जड़ के पौधे का उपयोग नहीं करना चाहिए जैविक खाद बनाने के लिए

इस तरह के जड़ के पौधे का उपयोग करना चाहिए जैविक खाद बनाने के लिए

क्यों लगता है किसानों को गाजर घास से खाद बनाने में डर?

कुछ समय पहले एक सर्वेक्षण में पाया गया है कि किसान गाजर घास से खाद बनाने से डरते हैं कि अगर गाजर घास खाद का प्रयोग करेंगे तो खेतों में और अधिक गाजर घास हो जाएगी। कुछ किसानों के गाजर घास से अवैज्ञानिक तरीकों से खाद बनाने के कारण यह भ्रम की स्थिति उत्पन्न हो गई है। सर्वेक्षण में पाया गया कि जब कुछ किसानों ने फूलों युक्त गाजर घास से नाडेप विधि द्वारा खाद बना कर उपयोग की तो उनके खेतों में अधिक गाजर घास हो गई। इसी प्रकार गांवों में गोबर से खाद खुले हुऐ टाकों या गड्ढ़ों में बनाते हैं।

फुल निकले पौधे का उपयोग नहीं करना चाहिए जैविक खाद बनाने के लिए

इस तरह के पौधे का उपयोग करना चाहिए जैविक खाद बनाने के लिए

जब फूलों युक्त गाजर घास को खुले गड्ढ़ों में गोबर के साथ डाला गया तो भी इस खाद का उपयोग करने पर खेतों में अधिक गाजर घास का प्रकोप हो गया। एक निदेशालय में किए गए अनुसंधानों में पाया गया कि नाडेपया खुले गड्ढ़ों या टाकों में फूलों युक्त गाजर घास से खाद बनाने पर इसके अतिसूक्ष्म बीज नष्ट नहीं हो पाते हैं। एक अध्ययन में यह पाया गया कि केवल 300 ग्राम खाद में ही 500 तक गाजर घास के पौधे पाए गए। इन्हीं कारणों से भारतीय किसान गाजर घास से खाद बनाने में डरते हैं। यदि किसान वैज्ञानिक विधि से गाजर घास की खाद बनाए तो यह एक सुरक्षित खाद होगा।

गाजर घास से जैविक खाद बनाने की विधि

गाजर घास से सर्दी-गर्मी के प्रति असंवेदनशील बीजों में सुप्तावस्था न होने के कारण एक ही समय में फूल युक्त और फूल विहीन गाजर घास के पौधे खेतों में दृष्टिगोचर होते हैं। अतः निराई करते समय फूलयुक्त पौधों का निदान अपरिहार्य हो जाता है। फिर भी किसान भाइयों को गाजर घास को खाद बनाने में उपयोग करने के लिए हर संभव प्रयास करने चाहिए कि वो उसे ऐसे समय में उखाड़ें जब फूलों की मात्रा कम हो। जितनी छोटी अवस्था में गाजर घास को उखाड़ेंगे उतना ही अधिक अच्छी खाद बनेगी।

1. खेत या भूमि पर एक उपयुक्त थोड़ी ऊंचाई वाले स्थान पर जहां पानी का जमाव न होने पाए वहां पर 3x6x10 फीट (गहराई x चौड़ाई x लंबाई) का गड्ढ़ा बना लें। अपनी सुविधानुसार और खेत में गाजर घास की मात्रा के अनुसार लंबाई चौड़ाई कम कर सकते हैं पर गहराई तीन फीट से कम होनी चाहिए।
2. अगर संभव हो सके तो गड्ढ़े की सतह पर और साइड की दीवारों पर पत्थर की चोपें इस प्रकार लगाए कि कच्ची जमीन का गड्ढ़ा एक पक्का टांका बन जाए। इसका लाभ यह होगा कि कंपोस्ट के पोषक तत्व गड्ढ़े की जमीन नहीं सोख पाएगी।
3. अगर पत्थर का प्रबंध न हो पाए तो गड्ढ़े के फर्श और दीवार की सतह को मुगदर से अच्छी प्रकार से पीटकर समतल कर लें।
4. अपने खेतों की फसलों के बीच से मेंड़ों से और आस-पास के स्थानों से गाजर घास को जड़ समेत उखाड़कर गड्ढ़े के समीप इकट्ठा कर लें।
5. गड्ढ़े के पास 75 से 100 कि. ग्राम कच्चा गोबर, 5-10 कि.ग्रा. यूरिया या रॉक फॉस्फोरस की बोरी भुरभुरी (एक या दो क्विंटल) और एक पानी के ड्रम की व्यवस्था कर लेनी चाहिए।
6. लगभग 50 कि.ग्रा. गाजर घास को गड्ढ़े की पूरी लंबाई-चौड़ाई में सतह पर फैला दें।

7. 5-7 कि.ग्रा. गोबर को 20 लीटर पानी में घोल बनाकर उसका गाजर घास की परत पर छिड़काव करें।
8. इसके ऊपर 500 ग्राम यूरिया या 3 कि.ग्रा. रॉक फॉस्फेट का छिड़काव करें। जैविक खेती में खाद को उपयोग करना हो तो यूरिया न डालें।
9. उपलब्ध होने पर ट्राइकोडरमा विरिडि अथवा ट्राइकोडरमा हारजानिया नामक कवक के कल्चर पाउडर को 50 ग्राम प्रति परत के हिसाब से डाल दें। इस कवक कल्चर को डालने से गाजर घास के बड़े पौधों का अपघटन भी तेजी से हो जाता है एवं खाद शीघ्र बनती है। चूंकि दूर-दराज के गांव-देहातों में इस कल्चर का मिलना कठिन होता है। अतः इस कारक का प्रयोग इसकी उपलब्धि पर निर्भर है। इस प्रकार इन सब अवयवों को मिलाकर एक परत की लेयर बना लें।
10. इसी प्रकार एक परत के ऊपर दूसरी-तीसरी और अन्य परतें तब तक बनाते जाएं जब तक गड्ढ़ा ऊपरी सतह से एक फीट ऊपर जमाते समय गाजर घास को पैरों से अच्छी प्रकार दबाते रहना चाहिए।
11. यहां पर गाजर घास को जड़ से उखाड़कर परत बनाने के निर्देश दिए गए हैं। जड़ से उखाड़ते समय जड़ों के साथ ही काफी मिट्टी आ जाती है। अतः परत के ऊपर भुरभुरी मिट्टी डालने का विकल्प खुला है। अगर आप महसूस करते हैं कि जड़ों में मिट्टी अधिक नहीं है तो 11-12 कि.ग्रा. भुरभुरी मिट्टी प्रति परत की दर से डालनी चाहिए।
12. अब इस प्रकार भरे गड्ढ़े को गोबर मिट्टी भूसा आदि के मिश्रण लेप से अच्छी प्रकार बंद कर दे 5-6 माह बाद गड्ढ़ा खोलने पर अच्छी खाद प्राप्त होती है।
13. उपरोक्त वर्णित गड्ढ़े में 37 से 42 क्विंटल ताजी उखाड़ी गाजर घास आ जाती है जिससे 73 से 45 प्रतिशत तक कंपोस्ट प्राप्त हो जाती है।

खाद की छनाईः 5 से 6 माह बाद भी गड्ढ़े से खाद निकालने पर आपको प्रतीत हो सकता है कि बड़े मोटे तने वाली गाजर घास अच्छी प्रकार से गली नहीं है। पर वास्तव में यह गल चुकी होती है। इस खाद को गड्ढ़े से बाहर निकालकर छायादार जगह में फैलाकर सुखा लें। हवा लगते ही यह नम होने लगती हैं एवं गीली खाद शीघ्र सूखने लगती है। थोड़ा सूख जाने पर इसका ढ़ेर कर लें। यदि अभी भी गाजर घास के रेशे युक्त तने मिलते हैं तो इसका ढेर को लाठी या मुगदर से पीट दें। जिन किसान भाईयों के पास बैल या ट्रैक्टर हैं वे इन्हें इसके ढ़ेर पर थोड़ी देर चला दें। ऐसा करने पर गाजर घास के मोटे रेशे युक्त तने टूट कर बारीक हो जाएगें जिससे और अधिक खाद प्राप्त होगी। इस खाद को 2-2 सें.मी. छिद्रों वाली जाली से छान लेना चाहिए। जाली के ऊपर बचे ठूठों के कचरे को अलग कर देना चाहिए। किसान द्वारा स्वयं के उपयोग के लिए बनाएं खाद को बिना छाने भी इस्तेमाल किया जा सकता है। इस प्रकार प्राप्त खाद को छांव में सुखाकर प्लास्टिक जूट या अन्य प्रकार के बड़े या छोटे थैलों में भरकर पैकिंग कर दें। व्यक्ति या कृषक गाजर घास के खाद बनाने को व्यवसायिक रूप में करना चाहते हैं तो किचन गार्डन में उपयोग के लिए 1, 2, 3, 4, 5, किलो. के पैकेट और व्यवसायिक सब्जियों फसलों या बागवानी में उपयोग के लिए 25 से 50 कि.ग्रा. के बड़े पैकेट बना सकते हैं।

गाजर घास के खाद में पोषक तत्व की मात्रा

अब तक तुलनात्मक अध्ययन में यह पाया गया कि गाजर घास से बनी खाद में मुख्य पोषक तत्वों की मात्रा गोबर से दुगनी और केंचुआ खाद के लगभग होती है। अतः गाजर घास से खाद बनाना इसके उपयोग का एक अच्छा विकल्प भी है और फायदा भी।

सारणी - 1 खाद में कितने पोषक तत्व पाए जाते हैं, वो निम्नलिखित है:

जैविक खाद का प्रकार	प्रतिशत में				
	N	P	K	Ca	Mg
गाजर घास खाद	1.05	10.84	1.11	0.90	0.55
केंचुआ खाद	1.61	0.68	1.31	0.65	0.43
गोबर खाद	0.45	0.30	0.54	0.59	0.28

सावधानियां

गाजर घास से खाद तैयार करते समय कुछ निम्न बातों पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

- ❖ गड्ढे छायादार, ऊंचे और खुली हवा और पानी की उचित व्यवस्था वाले स्थान पर बनाएं।
- ❖ गाजर घास को हर हाल में फूल आने से पहले ही उखाड़ना चाहिए। उस समय पत्तियां अधिक होती हैं और तने कम रेशे वाले होते हैं। अतः खाद उत्पाद अधिक होता है और खाद जल्दी बन जाती है।
- ❖ गड्ढे को अच्छी प्रकार से मिट्टी, गोबर एवं भूसे के मिश्रण के लेप से बंद करें। अच्छे से बंद न होने पर ऊपरी परतों में गाजर घास के बीज मर नहीं पाएगें।
- ❖ प्रायः गड्ढे के पास जहां खाद बनाने के लिए गाजर घास इकट्ठा करते हैं, वहां 20-25 दिनों में ही गाजर घास अंकुरित हो जाती है। ऐसा गाजर घास के फूलों से पके बीज गिरने के कारण होता है। यदि आपने अधिक फूलों वाली गाजर घास का खाद बनाने में उपयोग की होगी तो उस अनुपात में वहां गाजर घास का अंकुरण अधिक पाएगें। इन नए अंकुरित गाजर घास को फूल आने से पहले अवश्य जड़ से उखाड़ देना चाहिए अन्यथा इन्ही पौधों के सूक्ष्म बीज आपके खाद को संक्रमित कर देंगे।
- ❖ एक माह बाद आवश्यकतानुसार गड्ढे पर पानी का छिड़ाकाव करते रहें। अधिक सूखा महसूस होने पर ऊपरी परत पर सब्बल आदि की सहायता से छेदकर पानी अंदर भी डाल दें। पानी डालने के बाद छिद्रों को बंद कर देना चाहिए।

गाजर घास के खाद से लाभ

- ❖ गाजर घास खाद एक ऐसी जैविक खाद है, जिसके प्रयोग से फसलों, मनुष्यों ओर पशुओं पर कोई भी प्रभाव नहीं पड़ता है।
- ❖ खाद बनाने पर गाजर घास की जीवित अवस्था में पाया जाने वाले विषाक्त रसायन "पार्थेनिन" का पूर्णतः विघटन हो जाता है।
- ❖ गाजर घास खाद एक संतुलित खाद है, जिसमें नाइट्रोजन, फॉस्फोरस तथा पोटाश की मात्रा गोबर खाद से अधिक होती है। इन मुख्य पोषक तत्वों के अलावा गाजर घास खाद में सूक्ष्म पोषक तत्व भी होते हैं।
- ❖ जैविक खाद होने के कारण यह पर्यावरण मित्र है।
- ❖ यह बहुत कम लागत में भूमि की उर्वरा शक्ति को बढ़ाती है।
- ❖ गाजर घास से जैविक खाद बनाने के लिए एक तरफ गाजर घास की निराई कर कृषक भाई अपनी गाजर घास से ग्रसित फसलों की उत्पादकता बढ़ा सकते हैं वहीं दूसरी तरह इस खाद का फसलों में इस्तेमाल कर या इसे बेचकर अधिक धनोपार्जन कर सकते हैं।

उत्तर पश्चिमी भारत में नींबू वर्गीय पौधों का व्यवसायिक प्रवर्धन

तनजीत सिंह चहल एवं विक्रमजीत सिंह

पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, फल अनुसंधान केंद्र, जल्लोवाल, जालंधर, पंजाब-144 303

नींबू वर्गीय फल (नींबू, संतरा, मीठी नारंगी, किन्नू, ग्रेपफ्रूट आदि) हमारी दैनिक जिंदगी का अहम हिस्सा हैं। यह फल सेहत के लिए बहुत फायदेमंद हैं और इनसे कई दवाइयां भी बनती हैं। हमारा देश दुनिया में इन फलों के सबसे बड़े उत्पादकों में से एक है। भारत में अलग-अलग तरह की जलवायु और मिट्टी होने की वजह से यहां हर तरह के नींबू जाती के पौधे आसानी से उग जाते हैं। लेकिन कभी-कभी कई समस्याएं भी आती हैं, जैसे पौधों में फफूंद लग जाना, कीड़े लग जाना या मौसम की मार। इन समस्याओं से बचने के लिए और अच्छी किस्म के पौधे तैयार करने के लिए नई-नई तकनीकों का इस्तेमाल करना और सही किस्म के मूलवृन्तों का चुनाव करना बहुत जरूरी है।

नए बाग लगाने के लिए अच्छे और स्वस्थ पौधों की जरूरत होती है, और इसके लिए नींबू जाती के पौधो की नर्सरी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। नर्सरी में हम अच्छी किस्म के नए पौधे तैयार करते हैं। ये पौधे नए बाग लगाने के काम आते हैं या पुराने खराब पौधों की जगह लगाए जाते हैं। आजकल किसानों को बहुत संख्या में अच्छे पौधों की जरूरत है। कागज़ी नींबू व लेमन को छोड़कर सभी नींबू वर्गीय फल कलम (बडिंग) विधि द्वारा प्रवर्धित होते हैं। एक नींबू जाती के पौधे में मुख्य रूप से दो प्राथमिक भाग होते हैं मजबूत जड़ वाला पौधा (मूलवृंत) और अच्छी किस्म की कली (सांकुर), इन दोनों को जोड़कर एक नया पौधा तैयार किया जाता है। इस प्रक्रिया को ग्राफ्टिंग या बडिंग के रूप में जाना जाता है।

मूलवृंत तैयार करना

नींबू जाती के पौधों के लिए सही बीज चुनना और उनका उपचार करना बहुत आवश्यक होता है। अच्छे बीज से ही मजबूत पौधे तैयार होते हैं। उत्तर पश्चिमी भारत में आमतौर पर जम्भीरी (रफ लेमन) को मूलवृंत के रूप में प्रयोग किया जाता है। सितंबर-अक्टूबर के महीने में पके हुए और स्वस्थ फल चुनें। फल को बीच से काटकर उसके बीज निकालें और उन्हें पानी से अच्छी तरह धो लें। इस दौरान सिकुड़े, सूखे या छोटे बीजों को अलग कर दें।

बीजों को बीमारियों से बचाने के लिए दो तरीके हैं। पहले तरीके में बीजों को मलमल के कपड़े में बांधकर 52 डिग्री के गर्म पानी में 10-15 मिनट रखते हैं, इसके बाद, बीजों को कमरे के तापमान पर ठंडा किया जाता है और 15 से 20 मिनट के लिए 10% सोडियम हाइपोक्लोराइट घोल में डुबोया जाता है, फिर साफ पानी से धोया जाता है। दूसरा आसान तरीका है कि बाजार में मिलने वाली फफूंदनाशी दवा टॉपसिन-एम से बीजों का उपचार बुआई से पहले कर लें। इन दोनों में से कोई भी तरीका अपनाएं, बीज बीमारियों से बच जाएंगे और अच्छे पौधे तैयार होंगे। इन सारी बातों का ध्यान रखने से आपको स्वस्थ मूलवृंत के पौधे मिलेंगे।

चित्र - 1: प्राथमिक नर्सरी के उत्पादन के लिए ग्रीन हाउस

मूलवृंत पौधे उगाने के लिए कई तरीके हैं, जैसे, खुले मैदान में बुआई जिसमें बीजों को अच्छी तरह से तैयार नर्सरी बेड या खुले मैदान में सीधे बोया जा सकता है। यह तरीका उन जगहों के लिए अच्छा है, जहां मौसम और पर्यावरण पौधों के उगने व वृद्धि के लिए अनुकूल होते हैं। दूसरी ओर, मूलवृंत के बीज बोने के लिए ग्रीनहाउस या स्क्रीनहाउस भी प्रयोग में लाए जाते हैं। बीजों को प्रोट्रे (मल्टी-सेल कंटेनर) या कंटेनर में बोया जाता है (चित्र-2)। इस तरीके से वातावरण को नियंत्रित किया जा सकता है, जैसे कि तापमान, नमी और रोशनी, जिससे बीज जल्दी और सही तरीके से उगते हैं और पौधे स्वस्थ होते हैं।

चित्र - 2: प्रोट्रे सेल में जम्भीरी (नमेल फ़र) के पौधे।

पौधों का प्रत्यारोपण

मूलवृंत के पौधे सही ऊंचाई, यानी लगभग 10-12 सेंटीमीटर बड़े हो जाते हैं, तो उन्हें बड़े कंटेनर या पॉलीबैग में प्रत्यारोपित किया जाता है। इसके लिए हल्के वजन वाले प्लास्टिक के कंटेनर, जिन्हें सिट्री पॉट कहा जाता है, का उपयोग किया जाता है। पौधों के लिए सिट्री पॉट की ऊंचाई करीब 34 सेंटीमीटर और चौड़ाई 10 सेंटीमीटर होती है, जो पौधों के लिए बिलकुल सही होती है। रोपाई करते समय, मजबूत और स्वस्थ पौधों का चुनाव करना जरूरी है। पौधों की रेशेदार जड़ें अच्छी तरह से बढ़े, इसके लिए मूल जड़ को काट देना चाहिए। रोपाई के बाद, पौधे के आसपास की मिट्टी को अच्छे से दबाना चाहिए, ताकि हवा की कोई खाली जगह न रहे और पौधा सही से बढ़े।

प्रवर्धन

नींबू के पौधों को उगाने के लिए सही तरीके से प्रवर्धित करना बहुत जरूरी है। इसके लिए अच्छी गुणवत्ता वाली टहनी (बड-वुड) का चुनाव और कलम लगाने की सही तकनीक का इस्तेमाल करना चाहिए। इसके लिए सबसे सामान्य तरीका टी-बडिंग है, जिसमें एक कली (बड) को एक स्वस्थ मूलवृंत पर लगाया जाता है। इसके अलावा, कली के जल्दी बढ़ने और पौधे के जल्दी उगने के लिए कली को झुकाने की तकनीक का भी इस्तेमाल किया जाता है, जिससे नर्सरी में पौधों का उत्पादन जल्दी शुरू हो जाता है।

चित्र - 3: नींबू जाती के पौधो के प्रोपेगेशन के लिए टी-बडिंग विधि

टी-बडिंग एक व्यवसायिक तकनीक है, जिसमें सबसे पहले मूलवृंत के तने से सभी पत्तियां और कांटे हटा दिए जाते हैं। फिर रूटस्टॉक के तने पर टी-आकार का कट लगाया जाता है जो 15-20 सेमी जमीन से ऊपर पेंसिल मोटाई वाले रूटस्टॉक पर लगभग 1.5-2.0 सेमी लंबा हो और उसमें 2.5 से.मी. की ढाल के आकार की कली को डाला जाता है। कली को अच्छे से बडिंग टेप जैसे उपयुक्त रैपिंग सामग्री के साथ ऊपर और नीचे कसकर लपेट कर रखा जाता है, ताकि वह सही से जुड़ जाए। साथ ही यह कली को कोई नुकसान नहीं होना चाहिए। तीन हफ्ते बाद यदि कली हरी दिखाई देती है, तो यह सफल जोड़ को दर्शाता है, और कलियों को लगाने वाली टेप को हटाया जा सकता है (चित्र-3)।

बड फोर्स एक तरीका है इसमें कलम लगाए स्थान के ऊपर मूलवृंत के कुछ हिस्सों को रखते हैं ताकि प्रकाश संश्लेषण की क्रिया कलम लगाने के बाद भी चलती रहे इससे नई कलम लगाई कलिका को पोषक तत्व मिलते रहते हैं और उसकी बढ़त तेज हो। इस तरीके से नींबू के पौधे जल्दी और अच्छे से उगते हैं। इसके अलावा, बड फोर्स एक ऐसी विधि है जिससे पौधों की बढ़त को तेज किया जाता है। दो मुख्य तकनीकें हैं काटना और मोड़ना। काटने में कलियों के मिलन के ऊपर रूटस्टॉक शूट को काटने से कली की वृद्धि में मदद मिलती है, लेकिन यह तरीका पोषक तत्वों की आपूर्ति को सीमित कर सकता है। झुकाने की तकनीक में, रूटस्टॉक के पत्तों को नीचे की ओर झुका दिया जाता है, जिससे

पौधे के ऊपर का मुख्य हिस्सा कमजोर हो जाता है। इससे जड़ों और कलियों को लगातार पोषक तत्व मिलते रहते हैं, और पौधा अच्छे से बढ़ता है (चित्र-4)।

लोपिंग एक और तरीका है, जिसमें कलियों के जुड़ने के बाद रूटस्टॉक के कुछ हिस्सों को आंशिक रूप से काटकर मोड़ दिया जाता है। यह तरीका पौधों की वृद्धि को प्रभावित करता है और नर्सरी की कार्य क्षमता में मदद करता है। इन तकनीकों का सही समय पर और सही तरीके से उपयोग करने से पौधे जल्दी और अच्छे से बढ़ते हैं।

अच्छी देखभाल और सही तरीकों से आप गुणवत्तापूर्ण नींबू वर्गीय पौधे तैयार कर सकते हैं। इससे न सिर्फ अच्छी आमदनी होगी, बल्कि किसान भाइयों को भी अच्छे पौधे मिलेंगे।

क. ख. ग.

चित्र - 4: क. कटिंग, ख. लोपिंग और ग. बेंडिंग के माध्यम से बड फोर्सिंग तकनीक

ऑयल ब्लेंडिंग : भविष्य का पोषण और स्वाद

आनवी गोयल, प्राची त्यागी, बृजेश लेखक, अजीत सिंह, अरुणा त्यागी एवं चिराग माहेश्वरी

जैव रसायन विज्ञान संभाग, भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110 012

परिचय

तेल आहार, वसा और ऊर्जा का एक अच्छा स्रोत है। खाना पकाने का तेल, भारतीय जीवन का एक अनिवार्य घटक है। वनस्पति तेलों में आवश्यक वसा अम्ल होते हैं, जिन्हें स्वस्थ आहार के माध्यम से लिया जा सकता है। आवश्यक वसा अम्ल शरीर के समुचित कार्य के लिए महत्वपूर्ण हैं। शुरुआती दिनों से ही, वनस्पति तेलों की भारतीय घरों में एक विशाल विविधता रही है। भारतीय घरों में अनेक प्रकार के तेल इस्तेमाल किए जाते है जैसे सरसों का तेल, नारियल का तेल, मूंगफली का तेल, तिल का तेल आदि। खाना पकाने के प्रयोजनों के लिए उपयोग किए जाने वाले प्रत्येक प्रकार का तेल के पोषण संबंधी लाभों या किसी व्यक्ति की पसंद पर आधारित होता है। उदाहरण के लिए, खाना पकाने के दौरान गहरा तलने के लिए सरसों का तेल, सूरजमुखी तेल और चावल की भूसी का तेल का उपयोग किया जा सकता है। खाद्य तेलों के उपयोग के संबंध में हमारे पास पारंपरिक ज्ञान है और हम उसी का पालन करते हैं। हालांकि, हम नहीं जानते की कुछ विशिष्ट खाद्य तेलों के सेवन से हृदय रोग का खतरा कुछ व्यक्तियों में बढ़ सकता है। किए गए भौतिक रासायनिक अध्ययनों के अनुसार, शुद्ध रूप में उपलब्ध किसी भी वनस्पति तेल में आवश्यक मात्रा में वसा अम्ल, ऑक्सीकरण स्थिरता और एंटीऑक्सीडेंट गुण नहीं होते हैं। इस कारण से, एक ऐसे बहु-स्रोत तेल की आवश्यकता होती है जिसमें आवश्यक भौतिक रासायनिक गुण हो और जो शरीर के लिए स्वस्थ भी हो।

एकल-स्रोत तेल, एक ही प्रकार के बीज या पौधे की वसा से प्राप्त किया जाता है या एक पौधा, जो कमरे के तापमान पर तरल अवस्था में मौजूद होता है और मानव उपभोग के लिए स्वीकार्य है। जबकि, एक बहुस्रोतीय तेल किन्हीं दो या अधिक खाद्य तेलों के मिश्रण से तैयार किया जा सकता है। भारत में तेल सम्मिश्रण की अनुमति है। भारत सरकार अनुमति देती है कि किन्हीं दो खाद्य वनस्पति तेलों में से किसी एक खाद्य तेल की मात्रा बीस प्रतिशत (वजन के अनुसार) से कम नहीं होनी चाहिए। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार, आहार वसा में संतृप्त वसा अम्ल, एकल-असंतृप्त वसा अम्ल अवं बहुअसंतृप्त वसा अम्ल का आवश्यक अनुपात 1:1.5:1 होना चाहिए। इन दिनों, भारतीय

एकल स्रोत वाला तेल

बनाम

मिश्रित तेल

बाजार कुछ अलग-अलग खाद्य तेलों के मिश्रण पेश करता है। दो अलग वनस्पति तेलों के लाभकारी गुणों को एक साथ मिलाने से प्रत्येक तेल की विशिष्ट विशेषताओं का लाभ उठाना संभव हो जाता है। इससे तेल के भौतिक एवं रसायन गुणों में सुधार होता है। इसके अतिरिक्त ऑक्सीकरण स्थिरता, पोषण मूल्य, स्वास्थ्य लाभ और खाद्य उद्योगों में उपयोगिता बढ़ती है। बहु-स्रोत या मिश्रित तेल, एकल-स्रोत की तुलना में अधिक किफायती तेल माने जाते हैं। वनस्पति तेल आवश्यक तत्वों और गैर-आवश्यक वसा अम्ल से मिलकर बनता है। एक अच्छे खाद्य तेल में संतुप्त वसा अम्ल के अलावा असंतृप्त वसीय अम्लों में एकल असंतृप्त वसा अम्ल एवं बहुअसंतृप्त वसा अम्ल होते हैं। आवश्यक वसीय अम्लों में ओमेगा-लिनोलेनिक वसा अम्ल और लिनोलिक वसा अम्ल होते हैं। ओमेगा-लिनोलेनिक वसा अम्ल, ओमेगा-3 वसा अम्ल से समृद्ध है, जबकि लिनोलिक वसा अम्ल, ओमेगा-6 वसा अम्ल से समृद्ध है। एक स्वस्थ तेल में ओमेगा-6: ओमेगा-3 वसीय अम्लों का आवश्यक अनुपात 5-10:1 होना चाहिए। वनस्पति तेल भी एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर होना चाहिए।

भारत में तेल सम्मिश्रण के रुझान

भारत में, खाना पकाने की तकनीक और उसमें इस्तेमाल किए जाने वाले तेल की प्राथमिकताओं में भिन्नताएं हैं। जहां सरसों के तेल का उपयोग, भारत के उत्तर और पूर्व में किया जाता है, वहीं मूंगफली के तेल का उपयोग मुख्य रूप से देश के पश्चिमी क्षेत्रों में किया जाता है, जबकि नारियल के तेल का उपयोग आमतौर पर दक्षिण भारत में किया जाता है। लेकिन आहार और जीवन शैली के पैटर्न में बदलाव के कारण, विभिन्न व्यंजनों की खपत और स्वास्थ्य लाभों के परिणामस्वरूप, अब हम अपने घरों में खाना पकाने के तेलों की एक श्रृंखला का उपयोग करते हैं। भारतीय रसोई में गहरे और उथले ऐपेटाइज़र तलने के लिए तेलों का उपयोग बहुत प्रचलित है।

भारतीयों के लिए आहार संबंधी दिशा निर्देशों (राष्ट्रीय पोषण संस्थान द्वारा, 2020) के अनुसार, किसी व्यक्ति द्वारा वसा का सेवन प्रतिदिन कुल ऊर्जा का लगभग 25-30 प्रतिशत प्रदान करना चाहिए। हृदय रोगों के जोखिम को कम करने के लिए वसा के सेवन के स्रोत को नियमित रूप से बदलना चाहिए। संतृप्त एवं असंतृप्त वसा अम्लों का आवश्यक अनुपात 0.8:1 होना चाहिए। बहुअसंतृप्त वसा अम्ल में 5-10:1 के अनुपात में ओमेगा-6 और ओमेगा-3 वसा अम्ल होते हैं। भारतीय रसोई के लिए, ओमेगा-6 और ओमेगा-3 का आवश्यक अनुपात बहुत महत्वपूर्ण है।

फूड सेफ्टी एंड स्टैंडर्ड्स एसोसिएशन ऑफ इंडिया (एफएसएसएआई) का कहना है कि भारत के लोगों को मिश्रित तेल की खपत बढ़ानी चाहिए। तेलों का मिश्रण तेल की गुणवत्ता को बढ़ाता है, स्वास्थ्य के लिए फायदेमंद है और एक किफायती विकल्प भी है। भारत में मिश्रित तेलों को (एफएसएसएआई) द्वारा नियंत्रित किया जाता है और उनकी पहचान उनके व्यापारिक नामों से की जाती है। ये तेल एक विस्तृत श्रृंखला में आते हैं जिन्हें बाज़ार से खरीदा जा सकता है। भारतीय बाजार में मिश्रित तेलों के कुछ सामान्य ब्रांड नाम सनड्रॉप न्यूट्रीलाइट तेल, सफोला टोटल-प्रो हार्ट-कांशस खाद्य मिश्रित तेल, कार्डिया लाइफ मिश्रित तेल और कई अन्य हैं।

भारतीय बाज़ार में उपलब्ध मिश्रित तेल की संरचना

क्र.सं.	ब्रांड का सामान्य नाम	मिश्रण तेल (%)	मिश्रण तेल (%)
1.	सनड्रॉप न्यूट्रिलाइट तेल	सोयाबीन तेल (80%)	सूरजमुखी तेल (20%)
2.	सफोला कुल-समर्थक हृदय-चेतन तेल	चावल की भूसी का तेल (70%)	कुसुम बीज तेल (30%)
3.	कार्डिया लाइफ मिश्रित तेल	मक्के का तेल (75%)	जैतून का तेल (25%)
4.	ओलेव सक्रिय मिश्रित तेल	चावल की भूसी का तेल (70%)	जैतून पोमेस तेल (20%)
5.	फॉर्च्यून एक्सपर्ट कुल संतुलन तेल	सोयाबीन तेल (60%) चावल की भूसी का तेल (35%)	अलसी का तेल (5%)

तेल मिश्रणों के आंकलन के लिए भौतिक रासायनिक पर विचार

वसा अम्ल प्रोफाइल: तेल के वसा अम्ल अनुपात में किसी भी बदलाव के परिणामस्वरूप तेल के गुणों में बदलाव हो सकता है। तेल में उच्च संतृप्त वसा अम्ल ऑक्सीकरण और ट्रांस-वसा अम्ल में परिवर्तित हो जाते हैं। ट्रांस-वसा अम्ल का बनना मानव शरीर के लिए बहुत हानिकारक है। इसलिए तेल में संतृप्त वसा अम्लों की सांद्रता कम होनी चाहिए। यदि असंतृप्त वसीय अम्ल अधिक मात्रा में हैं, तो यह फिर से ऑक्सीकरण की ओर ले जाता है।

अम्ल मूल्य: यह एक ग्राम वसा के नमूने में मौजूद वसा अम्ल को बेअसर करने के लिए उपयोग किए जाने वाले पोटेशियम हाइड्रॉक्साइड की मात्रा को दर्शाता करता है। कम अम्ल वाला तेल, मानव सेवन के लिए बेहतर है।

पेरोक्साइड मूल्य: इसकी गणना पेरोक्साइड और हाइड्रो-पेरोक्साइड की मात्रा को मापकर की जा सकती है। लिपिड के ऑक्सीकरण के परिणामस्वरूप पेरोक्साइड बनते हैं। तेल और वसा की ऑक्सीडेटिव स्थिरता का निर्धारण एक महत्वपूर्ण मानदंड है। आयोडीन मूल्य: यह वसा और तेल में असंतृप्ति के प्रतिशत का विश्लेषण करने में मदद करता है। पेरोक्साइड और हाइड्रो-पेरोक्साइड के उत्पादन और भंडारण की स्थिति का आयोडीन मूल्य पर बड़ा प्रभाव पड़ता है।

पी-एनिसिडीन मूल्य: यह वसा के द्वितीयक ऑक्सीकरण की डिग्री को मापता है और एल्डिहाइड और कीटोन के स्तर से जुड़ा होता है, जो भोजन को एक बासी स्वाद और गंध देता है।

एंटी-ऑक्सीडेंट्स का अनुमान: तेल में एंटी-ऑक्सीडेंट्स की मौजूदगी ऑक्सीकरण प्रक्रिया को रोकने में मदद करती है। खाद्य तेलों में कई एंटीऑक्सीडेंट मौजूद होते हैं जैसे ओरिज़ानॉल, लिग्निन और टोकोफ़ेरॉल।

अचल जीवन: ऑक्सीकरण के कारण तेल के नमूने की भंडारण अवधि प्रभावित हो सकती है। इससे तेल के अम्ल मूल्य में वृद्धि हो सकती है, जिसका सेवन बहुत हानिकारक है।

टोकोफ़ेरॉल का अनुमान: टोकोफ़ेरॉल का प्राथमिक कार्य खोए हुए इलेक्ट्रॉनों या मुक्त कणों को हटाकर एंटीऑक्सिडेंट के रूप में काम करना है, जो ऐसे पदार्थ हैं जो कोशिकाओं को नुकसान पहुंचाने की क्षमता रखते हैं। मानव शरीर अल्फा-टोकोफ़ेरॉल का उपयोग करता है।

धुआं बिंदु: यह वह तापमान है जब तेल चमकना बंद कर देता है और खाना बनाते समय जलने लगता है, जिससे व्यंजन में जला हुआ स्वाद आ जाता है। गर्मी के संपर्क में आने से तेल के घटक विघटित हो जाते हैं।

महत्त्व

- मिश्रित तेल में संतृप्त और असंतृप्त वसा अम्ल अनुशंसित अनुपात होना लाभदायक है।
- इन तेलों की अचल जीवन अधिक होती है और इन्हें लंबे समय तक संग्रहीत किया जा सकता है।
- मिश्रित तेल एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर होते है। ये शरीर में रक्तवसा के स्तर को कम करने में मदद करते हैं।
- तेल मिश्रण शरीर में कम घनत्व वाले लिपोप्रोटीन को सीमित करने में मदद करता है जिससे हृदय रोगों के खतरे को कम करने में मदद मिलती है।
- मिश्रित तेल स्वस्थ आहार वसा से भरपूर होता है।
- मिश्रित तेल का धुआं बिंदु अन्य तेलों की तुलना में अधिक होता है।

खाना पकाने का तेल हर भारतीय घर में मुख्य खाद्य घटक चीज है। दो या दो से अधिक खाद्य वनस्पति तेलों का मिश्रण हमें पोषण संबंधी लाभ प्रदान करता है। एक मिश्रित तेल मानव शरीर के लिए अधिक फायदेमंद साबित होता है, जिसमें ओमेगा-6 और ओमेगा-3 जैसे आवश्यक स्वस्थ वसा अम्ल होते हैं साथ ही एंटीऑक्सीडेंट की प्रचुरता भी रहती है। एकल-स्रोत तेलों की तुलना में, मिश्रित तेल ऑक्सीडेटिव स्थिरता, विस्तारित कलश काल और उच्च धुआं बिंदु सहित बेहतर भौतिक रासायनिक गुणों का प्रदर्शन करते हैं। भारतीय बाजारों में आसानी से उपलब्ध, मिश्रित तेल जन्मजात हृदय रोगों के जोखिम को कम करने में योगदान देता है। भारत में उपलब्ध कोई भी एकल-स्रोत खाद्य तेल, शरीर के लिए आवश्यक वसा अम्ल का सर्वोत्तम अनुपात प्रदान नहीं करते है।

तैरती खेती (फ्लोटिंग एग्रीकल्चर) : जलवायु-स्मार्ट कृषि तकनीक

अंचल दास, रणबीर सिंह एवं शिवाधार मिश्रा

सस्यविज्ञान संभाग, भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली-110 012

बदलती वैश्विक जलवायु का प्रभाव हमारे जन-जीवन, पर्यावरण और कृषि व्यवसाय पर घातक प्राकृतिक आपदाओं (तूफान, भारी वर्षा व हिमपात, बाढ़, सूखा और हिमस्खलन आदि) की बढ़ती आवृत्ति एवं तीव्रता के रूप में स्पष्ट दिखाई दे रहा है। भारत एवं अन्य देश सर्दी, गर्मी, वर्षा के साथ ही बाढ़ की समस्या का सामना कर रहे हैं। अनेक निचले क्षेत्र लगभग 8 से 12 महीनों तक जलमग्न रहते हैं। ऐसे निचले क्षेत्रों में तैरती कृषि उपयोगी है। भारत में इस प्रकार की खेती कश्मीर की 'डल' झील और म्यांमार की 'इन्ले' झील में भी की जाती है। तैरती कृषि को वर्ष 2015 में खाद्य और कृषि संगठन द्वारा विश्व स्तरीय महत्वपूर्ण कृषि विरासत प्रणाली के रूप में मान्यता दी गई थी। जो वर्तमान जलवायु परिवर्तन स्थितियों में जलमग्न भूमि धारकों के लिए वरदान सिद्ध हो सकती है। यह तकनीक स्थानीय भूमिहीन समुदायों हेतु, गरीबी उन्मूलन और खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने में योगदान देती है तथा भविष्य में तैरती कृषि बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों में हमारी मुख्य कृषि पद्धति बन सकती है। यह विधि पारंपरिक कृषि की तुलना में लागत प्रभावी है जिसमें जुताई और बुआई की आवश्यकता नहीं होती है।

हाल ही में प्रकाशित एक अध्ययन में शोधकर्ता यह कहते हैं कि बांग्लादेश के तैरते बगीचों को स्थाई कृषि के रूप में अपनाया जा सकता हैं, क्योंकि जलवायु परिवर्तन से बाढ़ और सूखे की आशंका बनी रहती है। शोधकर्ताओं ने तैरते हुए बगीचों में खेती करने वाले परिवारों का साक्षात्कार लिया। जिससे इस बात के प्रमाण मिले कि ऐसे बाग स्थिरता प्रदान करते हैं, बदलती जलवायु के कारण पैदा हुई, अस्थिरता के कारण ग्रामीण जनसंख्या की खाद्य सुरक्षा के लिए भोजन उपलब्ध कराते हैं और इससे किसान परिवार को आय भी प्राप्त होती है। आम तौर पर, पूरा परिवार बगीचों में काम करता है, महिलाएं, बच्चे और बुजुर्ग रोपाई करते हैं और बगीचे बनाने के लिए जलीय पौधों को एकत्र किया जाता है। पुरुष बागानों की खेती करते हैं और उन्हें हमलावरों से बचाते हैं। कुछ परिवार अपने तैरते हुए बगीचों के आस-पास पानी में मछली भी रखते हैं।

जलवायु परिवर्तन से बाढ़ की आशंका को देखते हुए, तैरती कृषि को स्थाई कृषि के रूप में अपनाया जा सकता है, ये खाद्य सुरक्षा को बेहतर कर सकती है। दुनिया के सबसे बड़े नदी द्वीप 'माजुली' के निवासी बाढ़ और अनियमित वर्षा की समस्या से निपटने के लिए राफ्ट्स पर सब्जियां उगा रहे हैं। माजुली द्वीप के किसान बाढ़ और अनियमित वर्षा से निपटते हुए, इस विधि से सब्जियों और जड़ी-बूटियों की खेती कर रहे हैं। इसमें खाद, कोकोपीट, बायोचार, चूरा और जैविक कंपोस्ट भरा जाता है। प्लेटफॉर्म पर स्थापित एक सिंचाई प्रणाली के माध्यम से तालाब से ऊपर ही ग्रो बैग्स में पानी उपलब्ध करा दिया जाता है। ग्रो बैग्स नमी बनाए रखते हैं और पानी के नुकसान को कम करते हैं, जबकि बोरियों में छेद होने से अतिरिक्त पानी तालाब में बह जाता है।

पक्षियों से होने वाले नुकसान को रोकने के लिए पूरे ढांचे को जाल से ढक दिया जाता है। जल स्तर के साथ-साथ प्लेटफॉर्म्स भी ऊपर उठते रहते हैं जिससे बाढ़ की वजह से इन फसलों को नुकसान नहीं होता है। परंपरागत कृषि में फसलें बह जाती हैं या

बाढ़ के दौरान जलभराव से सड़ जाती हैं। भिंडी, बैंगन, ब्राह्मी (एक जड़ी बूटी), टमाटर, खीरा, पालक और मिर्च तैरते हुए बेड्स पर उगाई जा रही हैं। फ्लोटिंग बेड पर पौधों को अलग-अलग ग्रो बैग में उगाया जाता है। यह विधि पारंपरिक कृषि की तुलना में लागत प्रभावी है जिसमें जुताई और बुआई की आवश्यकता नहीं होती है। इसके अलावा, विलायक (खाद) का पुनः उपयोग के लिए भी पुनर्नवीनीकरण किया जा सकता है। फ्लोटिंग बेड्स में पारंपरिक कृषि की तुलना में कम श्रम की आवश्यकता होती है, क्योंकि पारंपरिक कृषि में खुदाई, रोपाई और सिंचाई की आवश्यकता होती है।

तैरती खेती: (पहले तो कभी-कभी बाढ़ जैसी स्थिति होती थी तब किसान इन तैरते खेतों पर खेती करते थे, लेकिन आज ज्यादा समय तक खेतों में पानी भरने के कारण इस तरह खेती करना किसानों की मजबूरी बनती जा रही है। तैरती कृषि जल संसाधनों का सही उपयोग करके पर्यावरण के अनुकूल खेती प्रणाली का एक प्राकृतिक तरीका है। यह खेती प्रणाली भारत में विभिन्न क्षेत्रों में प्रचलित है। तैरती कृषि में, पानी को खेतों में प्रवाहित किया जाता है और इससे खेतों की स्थिरता बनी रहती है। इस खेती प्रणाली से किसानों को उचित जल संचयन की अवस्था को खेतों में बनाए रखने में सहायता मिलती है यह तकनीक कुछ सीमा तक ''हाइड्रोपोनिक्स'' कृषि के समान ही है, जिसमें पानी के ऊपर तैरते पौधे पानी में घुले पोषक तत्वों को अवशोषित करते हैं। नहरों, नदियों, तालाब और नदी मुख में लहरों एवं ज्वार-भाटे से सुरक्षित पानी तैरती कृषि के लिए अनुकूल स्थान है। तैरती कृषि में शलजम, गोभी, फूलगोभी, टमाटर और लाल चैलाई आदि उगाने के लिए धान की पुआल, गेहूं के डंठल और रबड़ की ट्यूब का भी उपयोग कर रहे हैं। इस खेती में कीटनाशकों या रासायनिक उर्वरकों का उपयोग नहीं किया जाता है, इसलिए इससे प्राप्त जैविक उत्पाद सुरक्षित होते हैं, जिसके चलते उनकी मांग भी अधिक रहती है। तैरती खेती एक प्राकृतिक खेती प्रणाली है जिसमें पानी को खेतों में प्रवाहित करने के लिए अलग-अलग स्थलों पर छोटे-बड़े बांधों का निर्माण किया जाता है।

तैरती हुई सब्जियों की खेती: भारत में इस प्रकार की सब्जियों की खेती कश्मीर घाटी की डल झील में की जाती है। इस प्रकार की खेती के लिए सर्वप्रथम टाइफा घास का तैरने वाला आधार तैयार कर लिया जाता है। इसके बाद कंपोस्ट बिछाकर पौधें की रोपाई करते हैं। इसमें सब्जियां पानी में तैरती हुई दिखाई देती हैं, जैसे; कमल ककड़ी।

तैरती खेती के तंत्र

तैरती खेती के विभिन्न तंत्र होते हैं, जो पानी को खेत में पहुंचाने और उसके नियमित संचार की व्यवस्था करते हैं। ये तंत्र निम्नलिखित हैंः-

छोटे बांध: छोटे आकार के बांध किसानों के खेतों में बनाए जाते हैं तथा इनमें पानी जमा किया जाता है और इसके बाद यह पानी नियमित रूप से खेतों में सिंचाई में प्रयोग किया जाता है।

नहरें और खालें: इन्हें मुख्य नहरों या छोटी नालियों के रूप में जाना जाता है, जो जल को लगभग सभी खेतों तक पहुंचाती हैं।

बोरिंग: अनेक बार, जल संयंत्रों के माध्यम से पानी भी खेतों में पहुंचाया जा सकता है, जो खेतों में नियमित जल संचार को सुनिश्चित करता है।

तैरती खेती के लाभ

जल संसाधनों का सही उपयोग: तैरती खेती के माध्यम से पानी का सही उपयोग किया जाता है, जिससे जल संसाधनों की सटीक व्यवस्था होती है।

खेतों की स्थिरता: यह खेतों को स्थिर बनाए रखती है और उन्हें उचित नमी के साथ सही रूप से प्रबंधित करती है।

अधिक उत्पादन: तैरती खेती से अधिक उत्पादन हो सकता है, क्योंकि यह खेतों को उचित नमी और पोषक तत्वों के साथ सही तरीके से प्रबंधित करती है।

तैरती खेती की चुनौतियां

पानी की उपयुक्त व्यवस्था: तैरती खेती में पानी की सही व्यवस्था करना कठिन हो सकता है, जिससे खेतों में नमी का उचित स्तर बनाए रखना कठिन होता है।

तकनीकी संचालन: तैरती खेती में उपयोग की जाने वाली तकनीकियों को समझना और संचालन करना कठिन हो सकता है।

संरचना की सही निर्माण: तैरती खेती में सही संरचना की निर्माण और उनकी संचालन करना अति महत्वपूर्ण होता है।

तैरती खेती की विशेषताएं

जल संसाधनों का सही उपयोग: तैरती खेती में जल संसाधनों का सही उपयोग किया जाता है, जिससे खेतों में उचित नमी का स्तर बना रहता है।

खेतों की स्थिरता: इस प्रकार की खेती से खेतों की स्थिरता बनी रहती है और उनमें उचित जल संचार सुनिश्चित किया जाता है।

अधिक उत्पादन: तैरती खेती से अधिक उत्पादन हो सकता है, क्योंकि यह खेतों को उचित नमी और पोषक तत्वों के साथ सही रूप से प्रबंधित करती है।

संरचना की सही निर्माण: इस प्रकार की खेती में सही संरचना का निर्माण और उनकी उपेक्षा करना महत्वपूर्ण होता है।

सौर ऊर्जा का उपयोग: तैरती खेती में जल संसाधनों को बेहतर रूप से संचालित करने के लिए सौर ऊर्जा का उपयोग किया जा सकता है। यह संचारित पानी को खेतों में सही रूप से पहुंचाने में मदद करता है।

जल संचयन का उपयोग: तैरती खेती में जल संचयन के उपायों का उपयोग किया जा सकता है जैसे कि खेतों के आस-पास छोटे बांध या गड्ढ़े जिनमें वर्षा जल जमा किया जा सकता है।

लाभप्रद खेती: तैरती खेती परंपरागत खेती से लाभप्रद होती है क्योंकि इसमें जल के सही उपयोग से पौधों को सही रूप से प्रबंधित किया जा सकता है और अधिक आमदनी प्राप्त की जा सकती है।

विश्वभर में नए जलीय कृषि तकनीकी नवाचार

दुनिया के अधिकतर देश बंजर हो रही भूमि से परेशान हैं। अलग-अलग देशों में पानी की खेती अलग-अलग ढंग से की जा रही है। ओस, हवा और कोहरा नमी के लिए जाने जाते हैं। नमी को अलग-अलग तकनीक से एकत्रित करने की प्रक्रिया को 'पानी की खेती' कहा जाता है। रेगिस्तानी क्षेत्रों में बड़े विशेष किस्म के जाले से ओस और कोहरे को एकत्र किया जाता है। एकत्रित ओस और कोहरे की नमी को पाइप के द्वारा छोटे कुओं में पहुंचाया जाता है। इन कुओं में ओस और कोहरे की नमी को ठंडा किया जाता है। ठंड होते ही नमी पानी में बदल जाती है, जिन्हें छानकर अलग-अलग कार्यों के लिए उपयोग किया जाता है।

बांग्लादेश में तैरती खेती: संयुक्त राष्ट्र के खाद्य और कृषि संगठन ने बांग्लादेश के तैरते हुए बगीचों का नाम वैश्विक रूप से महत्वपूर्ण कृषि विरासत प्रणाली में शामिल किया है। समुद्र के नजदीक और नदियों की मौजूदगी के कारण बांग्लादेश में आए दिन बाढ़ जैसी संभावनाएं खड़ी हो जाती हैं। ये तटीय देश प्रकृति के काफी करीब है, लेकिन आज यहां के किसान अपनी आजीविका के लिए संघर्ष कर रहे हैं। यहां के ज्यादातर क्षेत्रों में खेती की जमीन पर पानी भर जाता है। इन परिस्थितियों में भी 200 साल पुरानी खेती की तकनीक किसानों के लिए वरदान सिद्ध होती है। पहले तो कभी-कभी बाढ़ जैसे हालात होते थे, तब ही किसान इन तैरते खेतों पर खेती करते थे, लेकिन आज ज्यादा समय तक खेतों में पानी भरने के कारण इस तरह खेती करना किसानों की मजबूरी बनती जा रही है। किसान या उनके परिवार पौधों को लगभग तीन फीट गहरे परतों में रखते हैं, जो कि नर्सरी की तरह बाग का एक संस्करण बनाते हैं। जो पानी में तैरते हैं। फिर वे उन राफ्ट के अंदर सब्जियां लगाते हैं। जैसे-जैसे ये पौधे सड़कर खत्म होते हैं, वे वहां पोषक तत्व छोड़ते हैं, जो वनस्पति पौधों को उगाने में मदद करते हैं। उन वनस्पति पौधों में आमतौर पर भिंडी, लौकी, पालक और बैंगन शामिल हैं। कभी-कभी, वे हल्दी और अदरक जैसे मसाले वाले पौधों को भी शामिल करते हैं।

द ओहियो स्टेट यूनिवर्सिटी में समाजशास्त्र के प्रोफेसर और सह-शोधकर्ता क्रेग जेनकिंस ने कहा कि हम बदलती जलवायु में उन लोगों के लिए काम कर रहे हैं, जो इसके शिकार हैं, लेकिन जिनका जलवायु परिवर्तन को बढ़ाने में कोई हाथ नहीं है। बांग्लादेश कार्बन उत्सर्जन की समस्या के लिए न के बराबर जिम्मेदार है और फिर भी यह पहले से ही जलवायु परिवर्तन के

प्रभावों का सामना कर रहा है। बांग्लादेश में तैरते खेती के बगीचे सैकड़ों वर्ष पहले शुरू हुए थे। बागानों को देशी पौधों से बनाया जाता है, जो परंपरागत रूप से नदियों में तैरते हैं। ये जल जलकुंभी और राफ्ट की तरह काम करते हैं, पानी के साथ बढ़ते और गिरते हैं। ऐतिहासिक रूप से, उनका उपयोग बरसात के मौसम में जब नदियों में पानी भर जाता था तब फसल उगाने के लिए किया जाता था।

तैरती खेती का बढ़ता क्षेत्र

बांग्लादेश: एक तटीय देश है, जिसकी ज्यादातर जमीन समुद्र किनारे ही है। यहां की बड़ी आबादी अपनी आजीविका के लिए खेती-किसानी और मछली पालन पर निर्भर करती है। पहले सिर्फ 5 महीने ही बाढ़ की समस्या रहती थी, लेकिन आज यहां के कई इलाके 8 महीनों तक जलमग्न रहते हैं। यही कारण है कि साधारण तरीकों से खेती करना तो जैसे कठिन हो जाता है।

मोरक्को: उत्तरी अफ्रीका के इस देश में रेगिस्तान की भूमि को कृषि योग्य बनाने के लिए हवा की नमी संरक्षित करने वाली तकनीक का उपयोग किया जाता है। इससे पीने के पानी और कृषि के लिए सिंचाई की सुविधा उपलब्ध हो जाती है।

पेरू: यहां की राजधानी लीमा में पीने के पानी की समस्या है। यहां ओस, कोहरे और हवा से नमी पकड़ने वाले विशेष किस्म के जाल का प्रयोग पानी की खेती के लिए किया जाता है। इस खेती से प्राप्त जल का उपयोग पीने के लिए और कृषि में होता है।

इजराइल: इजराइल में पानी को एकत्रित करने के लिए अनेकों तकनीक हैं। युवा किसानों का देश कहे जाने वाले इजराइल में प्लास्टिक ट्रे की तकनीक का उपयोग हवा से नमी को एकत्र करने के लिए खूब किया जाता है। प्लास्टिक ट्रे में यूवी फिल्टर और चूने का पत्थर लगाकर इसे पेड़ों के इर्द-गिर्द लगाया जाता है। रात में ये ट्रे वातावरण से ओस की बूंद को सोखता है और इसे जड़ों तक पहुंचाता है। इस विधि से पौधों की 50 प्रतिशत पानी की आवश्यकता पूरी हो जाती है।

तैरती खेती के उदाहरण

भारतीय तालाबों में सिंघाड़ा की खेती

सिंघाड़ा तालाबों में पैदा होने वाली एक नगदी फसल है। सिंघाड़े के कच्चे व ताजे फलों का ही उपयोग मुख्यतः किया

जाता है सिंघाड़े में मुख्य पोषक तत्व प्रोटीन 4.7 प्रतिशत एवं शर्करा 23.3 प्रतिशत होते हैं इसके अलावा इसमें कैल्शियम, फॉस्फोरस, लोहा, पोटेशियम, तांबा, मैगनीज, जिंक एवं विटामिन सी भी सूक्ष्म मात्रा में उपलब्ध होते हैं। सामान्यतः तालाबों में होने वाले सिंघाड़े की फसल की खेती उन्नत कृषि तकनीक अपनाकर निचले खेतों जिनमें पानी का भराव जुलाई से नवंबर-दिसंबर माह तक लगभग एक से दो फीट तक होता है आसानी से की जा सकती है।

भूमि एवं जलवायु: सिंघाड़े की खेती उष्ण कटिबंधीय जलवायु वाले क्षेत्रों में की जाती है। इसकी खेती के लिए खेत में एक से दो फीट पानी की आवश्यकता होती है। इसकी खेती स्थिर जल वाले खेतों में की जाती है साथ ही साथ खेतों में ह्यूमस की मात्रा अच्छी होनी चाहिए। सिंघाड़ा उत्पादन हेतु दोमट या बलुई दोमट

भूमि जिसका पी. एच. 6.0 से 7.5 तक होता है अधिक उपयुक्त होती है।

सिंघाड़ा की किस्में: सिंघाड़े में कोई उन्नत जाति विकसित नहीं की गई हैं परंतु जो किस्म प्रचलित है उनमें जल्द पकने वाली जातियां हरीरा गठुआ, लाल गठुआ, कटीला, लाल चिकनी गुलरी, किस्मों की पहली तुड़ाई रोपाई के 120-130 दिन में होती है। इसी प्रकार देर से पकने वाली किस्में, करिया हरीरा, गुलरा हरीरा, गपाचा में पहली तुड़ाई 150 से 160 दिनों में होती है।

नर्सरी एवं उर्वरक: सिंघाड़े की नर्सरी तैयार करने हेतु दूसरी तुड़ाई के स्वस्थ पके फलों का बीज हेतु चयन करके उन्हे जनवरी माह तक पानी में डुबाकर रखा जाता है। अंकुरण के पहले फरवरी के द्वितीय सप्ताह में इन फलों को सुरक्षित स्थान में गहरे पानी में तालाब या टांके में डाल दिए जाते हैं। मार्च माह में फलों से बेल निकलने लगती है व लगभग एक माह में 1.5 से 2 मीटर तक लंबी हो जाती है। इन बेलों से एक मीटर लंबी बेलों को तोड़कर अप्रैल से जून तक रोपणी का फैलाव खरपतवार रहित तालाब में किया जाता है। रोपणी लगाने हेतु प्रति हैक्टेयर 300 कि.ग्रा. सुपर फॉस्फेट, 60 कि.ग्रा. पोटाश व 20 कि.ग्रा. यूरिया तालाब में उपयोग की जाती है साथ ही साथ रोपणी को कीट एवं रोगों से सुरक्षित रखना अति आवश्यक है। कीट एवं रोगों की रोकथाम हेतु आवश्यकता पड़ने पर उचित कीटनाशी एवं कवकनाशी का उपयोग करें।

फलों की तुडाई: जल्द पकने वाली प्रजातियों की पहली तुड़ाई अक्टूबर के प्रथम सप्ताह में एवं अंतिम तुड़ाई 20 से 30 दिसंबर की जाती है। इसी प्रकार देर पकने वाली प्रजातियों की प्रथम तुड़ाई नवंबर के प्रथम सप्ताह में एवं अंतिम तुड़ाई जनवरी के अंतिम सप्ताह तक की जाती हैं। सिंघाड़ा फसल में कुल 4 तुड़ाई की जाती है। तुड़ाई पूर्ण रूप से विकसित पके फलों की ही करना चाहिए, कच्चे फलों की तुड़ाई करने पर गोटी छोटी बनती है एवं उपज भी कम प्राप्त है।

तालाब की तैयारी: जिस खेत में रोपाई करनी हो उसमें जुलाई के प्रथम सप्ताह में कीचड़ तैयार किया जाता है। रोपाई के पूर्व या एक सप्ताह के अंदर 300 कि.ग्राम.सुपर फॉस्फेट 60 कि.ग्रा. पोटाश व 20 कि.ग्रा. यूरिया प्रति हैक्टेयर मिलाएं साथ ही गोबर की सड़ी खाद का उपयोग अवश्य करें। इसके उपरांत रोपाई के पूर्व रोपणी को इमीडाक्लोप्रिड 17.8 प्रतिशत एस. एल. के घोल में 15 मिनट तक डुबोकर उपचारित किया जाता है।

रोपाई: उपचारित बेल एक मीटर लंबी 2-3 बेलों की गांठ लगाकर 131 मीटर के अंतराल पर अंगूठे की सहायता से कीचड़ में गड़ाकर किया जाता है। रोपाई का कार्य जुलाई के प्रथम सप्ताह से 15 अगस्त के पहले तक किया जा सकता है। खरपतवार नियंत्रण रोपाई पूर्व व मुख्य फसल में समय पर करते रहना चाहिए। कीट एवं रोगों पर सतत निगरानी रखें, प्रारंभिक अवस्था में प्रकोपित पत्तियों को तोड़कर नष्ट करें ताकि कीट एवं रोग नाशियों का उपयोग न करना पड़े। यदि आवश्यकता हो तो उचित दवा का उपयोग करें। सिंघाड़ा फल जो अच्छी तरह से सूखे हो उनको सरोते या सिंघाड़ा छिलाई मशीन द्वारा छिला जाता है। इसके उपरांत एक से दो दिनों तक सूर्य की रोशनी में सुखाकर मोटी पॉलीथिन बैग में रखकर पैक कर दिया जाता है।

उपजः हरे फल 80 से 100 क्विंटल/हैक्टेयर,
सूखी गांठ 17 से 20 क्विंटल/हैक्टेयर

फलों को सुखाना: पूर्ण रूप से पके फलों की गोटी बनाने हेतु सुखाया जाता है। फलों को पक्के खलिहान या पॉलीथिन में सुखाना चाहिए। फलों को लगभग 15 दिन सुखाया जाता है एवं 2 सें 4 दिन के अंतराल पर फलों की उलट पलट की जाती है ताकि फल पूर्ण रूप से सूख सकें। कांटे वाली सिंघाड़े की जगह बिना कांटे वाली किस्मों का चुनाव खेती के लिए करें, ये किस्में अधिक उत्पादन देती है साथ ही इनकी गोटियों का आकार भी बड़ा होता है। एवं खेतों में इसकी तुड़ाई आसानी से की जा सकती है।

सिंघाड़े के कीट: सिंघाड़े में मुख्यतः सिंघाड़ा भृंग एवं लाल खजूरा नामक कीट का प्रकोप होता है जिससे फसल में 25-40 प्रतिशत तक उत्पादन कम हो जाता है। इसके अलावा नीला भृंग, माहू एवं घुन कीट का प्रकोप भी पाया गया है।

सिंघाड़े के रोग: सिंघाड़ा फसल में मुख्यतः लोहिया व दहिया रोग का प्रकोप होता है। इन रोगों के कारण फसल कमजोर होती है साथ ही साथ फल छोटे व कम सख्या में आते हैं।

भारत में मखाने की खेती

भारत में मखाने की खेती मुख्य रूप से बिहार, पश्चिमी बंगाल, मणिपुर, त्रिपुरा, असम आदि प्रदेशों में जलमग्न रहने वाले

तालाब, गोखुर झील, कीचड़ एवं गड्ढ़े आदि में की जाती है। मखाना स्वादिष्ट, पौष्टिक एवं औषधीय गुणों से भरपूर एक जलीय पौधा है।

उन्नतशील किस्म: स्वर्ण वैदेही

मखाना उत्पादन की विधियां

तालाब पद्धति: यह पद्धति मखाना उगाने की पुरानी एवं पारंपरिक विधि है। इस विधि में 70 कि.ग्रा./है. की दर से सीधे जल निकायों में बीजों की बुआई की जाती है। पुराने तालाबों में बीज बोने की आवश्यकता नहीं होती है। क्योंकि पुरानी फसल के बचे हुए बीज अगली फसल के लिए रोपण सामग्री में उपयोग कर लिए जाते हैं।

खेत पद्धति: इस विधि में धान की तरह ही मखाने के पौधों की नर्सरी तैयार की जाती है। उसके बाद 1 फीट तक जलमग्न भूमि में तैयार पौध की रोपाई फरवरी से मार्च तक की जा सकती है।

मखाने के लिए भूमि एवं नर्सरी तैयारी

मखाने की खेती के लिए चिकनी एवं दोमट मिट्टी उपयुक्त होती है। खेत तैयारी के लिए पहले खेत को समतल करके चारों 2 फीट ऊंची मेड़ बनाकर 2 से 3 जुताई करके 100:60:40 कि.ग्रा/है. की दर से एन.पी.के मिट्टी में मिला देना चाहिए। इसके बाद दिसंबर माह में 20 कि.ग्रा. स्वस्थ बीजों की बुआई कर देनी चाहिए।

रोपाई: खेत में पौधे से पौधे की दूरी 1.25 मीटर तथा पंक्ति से पंक्ति की दूरी 1.25 मीटर रखनी चाहिए।

सिंचाई: मखाने की वृद्धि एवं विकास हेतु फसल में हमेशा 1 फीट से कम पानी कम नहीं होना चाहिए। वर्षा न होने की स्थिति में 4 से 5 सिंचाई की आवश्यकता होती है।

फसल सुरक्षा: फसल से अवांछनीय खरपतवारों को समयानुसार निकालते रहना चाहिए। एफिड की रोकथाम हेतु इमिडाक्लोरोपिड की 5 ग्राम मात्रा को एक लीटर पानी में घोलकर स्प्रे करें।

फलन एवं फसल कटाई: मखाने की फसल में फलन मई-अगस्त माह तक होती रहता है। पुष्पन के लगभग 35 से 40 दिन बाद फल परिपक्व होकर फटने लगते हैं, जिसमें पानी की ऊपरी सतह मखाने के बीज तैरने लगते हैं। 2 से 3 दिनों में बीज खेत की निचली सतह पर बैठ जाते हैं। जिसको बाद में एकत्र कर लिया जाता है।

सफाई: एकत्र किए हुए बीजों का अर्द्धचंद्राकार कंटेनर में डाला जाता है, तालाब में बांस के डंडे की सहायता से बांधकर पानी की सतह पर हिलाने-डुलाने की प्रक्रिया को बार-बार दोहराया जाता है। साफ बीजों को फिर से बेलनाकार कंटेनर में डालकर मिट्टी की सतह पर बीज के आवरण को रगड़ा जाता है। मखाना के नट से कीचड़ व अन्य व्यर्थ पदार्थ निकालने के लिए पैरो से रगड़कर अच्छी तरह धोया जाता है।

उपज: औसतन 1.5 से 2.0 टन/है. उपज प्राप्त होती है।

सारांश: तैरती खेती एक प्राकृतिक खेती प्रणाली है, जो पानी को खेतों में प्रवाहित करने के लिए अलग-अलग स्थलों पर छोटे-बड़े बांधों का निर्माण करती है। इस प्रकार की खेती से खेतों की स्थिरता और उचित जल संचयन प्रक्रिया होती है, जिससे खेतों की उपज को बढ़ावा मिलता है। तैरती खेती को उपयोग करने के लिए सही तकनीकियों का उपयोग करना महत्वपूर्ण है ताकि खेती को बढ़ावा मिल सके। तैरती खेती का उपयोग करके, किसान जल संसाधनों का सही उपयोग करते हैं और खेतों की स्थिरता बनाए रखते हैं। यह एक समृद्ध खेती प्रणाली है जो खेती के उत्पादकता को बढ़ावा देती है और किसानों को अधिक आमदनी प्राप्त कराती है।

बाजरा, रागी एवं कुटकी की जैव संवर्धित (बायोफोर्टीफाइड) किस्में

सुमेरपाल सिंह, तृप्ति सिंघल, निरुपमा सिंह एवं चन्दन कपूर

आनुवंशिकी संभाग, भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110 012

कदन्न (मिलेट्स) छोटे दाने वाली फसलों का एक समूह है। इन फसलों को सूखाग्रस्त क्षेत्रों में मुख्य रूप से उगाया जाता है। ये फसलें पोषण से भरपूर होने के कारण पोषण सुरक्षा प्रदान करने में बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। मिलेट्स के अंतर्गत मुख्यतः ज्वार, बाजरा, रागी, कांगनी, हरी कांगनी, कुटकी, कोदो, झंगोरा, सावां एवं चीना आदि फसलें आती हैं। ये फसलें भारतीय संस्कृति और कृषि का अभिन्न अंग हैं। कम वर्षा वाले क्षेत्रों में इनकी भूमिका अद्वितीय है। ये फसलें लोहा, जस्ता एवं कैल्शियम आदि का बहुत अच्छा स्रोत हैं। कम उपजाऊ मिट्टी में भी इनकी खेती सुगमता से की जा सकती है।

ये पोषक तत्वों का भंडार हैं इसीलिए इन्हें 'पोषक-अनाज' भी कहा गया है। ये ऊर्जा, प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा, खनिज, विटामिन, फाइटो-केमिकल्स और डाइटरी फाइबर के समृद्ध स्रोत हैं। मिलेट्स में विषम जलवायु को सहन करने की क्षमता अधिक होती है। ये ग्लूटन-मुक्त हैं इसीलिए सीलिएक रोग से पीड़ित लोगों के लिए भोजन के विकल्प के रूप में इस्तेमाल की जा सकती हैं। कदन्न उपभोक्ताओं, वातावरण और किसानों आदि सभी के लिए अत्यंत लाभदायक है। मिलेट्स हमारी राष्ट्रीय धरोहर है अतः इनको राष्ट्रीय एवं वैश्विक स्तर पर बढ़ावा देना हमारा परम कर्तव्य है इसीलिए वर्ष 2018 को 'राष्ट्रीय कदन्न वर्ष' के रूप में मनाया गया एवं वर्ष 2023 को अंतरराष्ट्रीय कदन्न वर्ष के रूप में मनाया गया।

विश्व की आबादी का बहुत बड़ा हिस्सा कुपोषण से ग्रसित है। महिलाओं एवं बच्चों में कुपोषण की समस्या अधिक है। विशेष रूप से महिलाओं एवं बच्चों में लोहे एवं जस्ते की कमी पाई गई है। पोषक तत्वों से भरपूर मिलेट्स को भोजन में शामिल कर, इस समस्या को काफी हद तक दूर किया जा सकता है। लोहे एवं जस्ते की कमी को दूर करने के लिए, प्राकृतिक आनुवंशिक भिन्नता का उपयोग करके पारंपरिक प्रजनन विधियों द्वारा विभिन्न जैवसंवर्धित किस्मों का विकास किया गया है। जैवसंवर्धन के अंतर्गत बाजरे एवं कुटकी की किस्मों में लोहे एवं जस्ते की मात्रा एवं रागी की किस्मों में लोहा, जस्ता एवं कैल्शियम की मात्रा को बढ़ाया गया है। इन किस्मों का विवरण इस प्रकार है

बाजरे की जैव संवर्धित किस्में

धनशक्ति- बाजरे की प्रथम जैव संवर्धित किस्म धनशक्ति है। इसे आईसीआरआईएसएटी (ICRISAT), हैदराबाद द्वारा विकसित किया गया है। धनशक्ति 2014 में महाराष्ट्र, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, राजस्थान, हरियाणा, मध्य प्रदेश, गुजरात, उत्तर प्रदेश और पंजाब आदि राज्यों की लिए जारी की गई। इसमें लोहा 76-91 पी.पी.एम. एवं जस्ता 39-48 पी.पी.एम. है। धनशक्ति की औसत उपज 24.3 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है यह किस्म लगभग 83 दिन में पक जाती है।

एच.एच.बी 299 (HHB 299)- यह किस्म सी.सी.एस. हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार एवं आई सी आर आई एस ए टी (ICRISAT), हैदराबाद द्वारा संयुक्त रूप से विकसित की गई। एच.एच.बी 299 को राजस्थान, हरियाणा, गुजरात, दिल्ली, पंजाब, महाराष्ट्र और तमिलनाडु आदि राज्यों की लिए 2017 में जारी किया गया। इसमें लोहा 73 पी.पी.एम. एवं जस्ता 41 पी.पी.एम. है। एच.एच.बी 299 की औसत उपज 32.7 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है यह किस्म लगभग 81 दिन में पक जाती है।

एच.एच.बी 311 (HHB 311)- यह किस्म सी.सी.एस. हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार एवं आईसीआरआईएसएटी (ICRISAT), हैदराबाद द्वारा संयुक्त रूप से विकसित की गई है। एच.एच.बी 311 को राजस्थान, हरियाणा, गुजरात, दिल्ली, पंजाब, महाराष्ट्र और तमिलनाडु आदि राज्यों की लिए 2020 में

जारी किया गया। इसमें लोहा 83 पी.पी.एम. है। एच.एच.बी 311 की औसत उपज 31.7 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है यह किस्म लगभग 81 दिन में पक जाती है।

एच.एच.बी 67 इम्प्रूव्ड 2 (HHB 67 Improved 2)- यह किस्म सी.सी.एस. हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार एवं आईसीआरआईएसएटी (ICRISAT), हैदराबाद द्वारा संयुक्त रूप से विकसित की गई है। एच.एच.बी 67 इम्प्रूव्ड 2 को राजस्थान, हरियाणा एवं गुजरात आदि राज्यों की लिए वर्ष 2021 में जारी किया गया। इसमें लोहा 54.8 पी.पी.एम. एवं जस्ता 39.6 पी.पी.एम. है। एच.एच.बी 67 इम्प्रूव्ड की औसत उपज 20.0 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है यह किस्म लगभग 76 दिन में पक जाती है।

आर.एच.बी 233 (RHB 233)- यह किस्म श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर द्वारा विकसित की गई है। आर.एच.बी 233 को राजस्थान, हरियाणा, गुजरात, मध्य प्रदेश, दिल्ली, महाराष्ट्र एवं तमिलनाडु आदि राज्यों की लिए 2019 में जारी किया गया । इसमें लोहा 83 एवं जस्ता 46 पी.पी.एम. है। आर.एच.बी 233 की औसत उपज 31.6 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है यह किस्म लगभग 80 दिन में पक जाती है।

आर.एच.बी 234 (RHB 234)- यह किस्म श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर द्वारा विकसित की गई है। आर.एच.बी 234 को राजस्थान, हरियाणा, गुजरात, मध्य प्रदेश, दिल्ली, महाराष्ट्र एवं तमिलनाडु आदि राज्यों की लिए 2019 में जारी किया गया। इसमें लोहा 84 एवं जस्ता 46 पी.पी.एम. है। आर.एच.बी 234 की औसत उपज 31.7 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है यह किस्म लगभग 81 दिन में पक जाती है।

ए.एच.बी 1200 एफ.इ. (AHB 1200 Fe)- यह किस्म वसंतराव नाइक मराठवाड़ा कृषि विद्यापीठ, परभणी एवं आई.सी.आर.आई.एस.ए.टी., हैदराबाद द्वारा संयुक्त रूप से विकसित की गई है। ए.एच.बी 1200 एफ.इ को राजस्थान, हरियाणा, गुजरात, पंजाब, दिल्ली, महाराष्ट्र एवं तमिलनाडु आदि राज्यों की लिए 2017 में जारी किया गया। इसमें लोहा 73 पी.पी.एम. एवं जस्ता 50 पी.पी.एम. है। ए.एच.बी 1200 एफ.इ की औसत उपज 32.0 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है यह किस्म लगभग 78 दिन में पक जाती है।

ए.एच.बी 1269 एफ.इ. (AHB 1269 Fe)- यह किस्म वसंतराव नाइक मराठवाड़ा कृषि विद्यापीठ, परभणी एवं आई.सी.आर.आई.एस.ए.टी., हैदराबाद द्वारा संयुक्त रूप से विकसित की गई है। ए.एच.बी 1269 एफ.इ को राजस्थान, हरियाणा, गुजरात, पंजाब, दिल्ली, महाराष्ट्र एवं तमिलनाडु आदि राज्यों की लिए 2018 में जारी किया गया। इसमें लोहा 91 एवं जस्ता 43 पी.पी.एम. है। ए.एच.बी 1269 एफ.इ की औसत उपज 31.7 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है यह किस्म लगभग 82 दिन में पक जाती है।

फुले महाशक्ति- यह किस्म महात्मा फुले कृषि विद्यापीठ, धुले द्वारा विकसित की गई है। फुले महाशक्ति को महाराष्ट्र राज्य के लिए 2018 में जारी किया गया। इसमें लोहा 87 पी.पी.एम. एवं जस्ता 71 पी.पी.एम. है। फुले महाशक्ति की औसत उपज 29.3 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है यह किस्म लगभग 88 दिन में पक जाती है।

ए.बी.वी.04 (ABV 04)- यह किस्म ए.आर.एस. आचार्य एन. जी. रंगा कृषि विश्वविद्यालय, अनंतपुरम द्वारा विकसित की गई है। ए.बी.वी.04 को आंध्र प्रदेश, तेलंगाना, महाराष्ट्र, कर्नाटक एवं तमिलनाडु आदि राज्यों की लिए 2018 में जारी किया गया। इसमें लोहा 70 पी.पी.एम. एवं जस्ता 63 पी.पी.एम. है। ए.बी.वी.04 की औसत उपज 28.6 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है यह किस्म लगभग 86 दिन में पक जाती है।

पूसा 1201- यह संकर किस्म भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा विकसित की गई है। इसे दिल्ली एवं आस-पास के क्षेत्रों के लिए 2018 में जारी किया गया। इसमें लोहा 55 पी.पी.एम. एवं जस्ता 48 पी.पी.एम. है। पूसा 1201 की औसत उपज 28.1 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है यह किस्म लगभग 78-80 दिन में पक जाती है।

मोती शक्ति (जी.एच.बी. 1225)- यह संकर किस्म बाजरा अनुसंधान केंद्र जूनागढ़ कृषि विश्वविद्यालय, जामनगर द्वारा विकसित की गई है। इसे गुजरात के लिए 2020 में जारी किया गया। इसमें लोहा 76 पी.पी.एम. एवं जस्ता 46 पी.पी.एम. है। मोती शक्ति की औसत उपज 30.23 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है यह किस्म लगभग 83 दिन में पक जाती है।

जाम शक्ति (जी.एच.बी. 1129)- यह संकर किस्म बाजरा अनुसंधान केंद्र जूनागढ़ कृषि विश्वविद्यालय जामनगर द्वारा विकसित की गई है। इसे गुजरात राज्य के लिए 2019 में जारी किया गया। इसमें लोहा 72 पी.पी.एम. एवं जस्ता 43 पी.पी.एम. है। जाम शक्ति की औसत उपज 29.57 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है यह किस्म लगभग 80 दिन में पक जाती है।

प्रोएग्रो 9450 (PA 9450)- यह संकर किस्म प्रोएग्रो (PA) बीज कंपनी द्वारा विकसित की गई है। इसे उत्तर प्रदेश राज्य के लिए 2019 में जारी किया गया। इसमें लोहा 71 पी.पी.एम. एवं जस्ता 58 पी.पी.एम. है। प्रोएग्रो 9450 की औसत उपज 3861 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है यह किस्म लगभग 83 दिन में पक जाती है।

एन.बी.एच. 4903 (NBH 4903) (एम.एच. 2035)- यह संकर किस्म नुजिवीडू सीड्स कंपनी द्वारा विकसित की गई है। इसे महाराष्ट्र, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, तेलंगाना एवं तमिल नाडु राज्यों के लिए 2018 में जारी किया गया। इसमें लोहा 70 पी.पी.एम. एवं जस्ता 63 पी.पी.एम. है। एन.बी.एच. 4903 की औसत उपज 4444 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है यह किस्म लगभग 88 दिन में पक जाती है।

महाबीज 1005 (एम.एच.1852)- यह संकर किस्म महाराष्ट्र स्टेट्स सीड्स कंपनी लिमिटेड द्वारा विकसित की गई है। इसे महाराष्ट्र राज्य के लिए 2017 में जारी किया गया। इसमें लोहा 62 पी.पी.एम. एवं जस्ता 37 पी.पी.एम. है। महाबीज 1005 की औसत उपज 2994 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है यह किस्म लगभग 80 दिन में पक जाती है।

रागी की जैव संवर्धित किस्में

वी.आर. 929 (VR 929) (वेगवती)- यह किस्म आचार्य एन. जी. रंगा कृषि विश्वविद्यालय गुंटूर की लघु कदन्न की भा.कृ. अनु.प.-अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना के अंतर्गत विकसित की गई। इसे देश के सभी भागों के लिए 2020 में जारी किया गया। इसमें लोहा 131.8 पी.पी.एम. है। वी.आर. 929 की औसत उपज 36.1 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है यह किस्म लगभग 118 दिन में पक जाती है।

सी.एफ.एम.वी. 1 (CFMV 1) (इंद्रावती)- यह किस्म ए.आर. एस. आचार्य एन. जी. रंगा कृषि विश्वविद्यालय विजयनगरम की लघु कदन्न की भा.कृ.अनु.प.-अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना के अंतर्गत विकसित की गई। इसे आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, कर्नाटक, पुडुचेरी और ओडिशा राज्यों के लिए 2020 में जारी किया गया। इसमें कैल्शियम (428 मिग्रा प्रति 100 ग्राम), लोहा 58 एवं जस्ता 44 पी.पी.एम. है। सी.एफ. एम.वी. 1 की औसत उपज 31.1 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है यह किस्म लगभग 113 दिन में पक जाती है।

सी.एफ.एम.वी. 2 (CFMV 2)- यह किस्म हिल मिलेट रिसर्च स्टेशन, नवसारी की लघु कदन्न की भा.कृ.अनु.प.-अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना के अंतर्गत विकसित की गई। इसे आंध्र प्रदेश, छत्तीसगढ़, गुजरात, महाराष्ट्र और ओडिशा राज्यों के लिए 2020 में जारी किया गया। इसमें कैल्शियम (454 मिग्रा प्रति 100 ग्राम), लोहा 39 एवं जस्ता 25 पी.पी.एम. है। सी.एफ.एम.वी. 2 की औसत उपज 29.5 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है यह किस्म लगभग 120 दिन में पक जाती है।

कुटकी की जैव संवर्धित किस्में

सी.एल.एम.वी.1- यह किस्म भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कदन्न अनुसंधान संस्थान, हैदराबाद द्वारा विकसित की गई। इसे महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, तेलंगाना, तमिलनाडु और पुडुचेरी राज्यों के लिए 2020 में जारी किया गया। इसमें लोहा 59 एवं जस्ता 35 पी.पी.एम. है। सी.एल.एम.वी. 1 की औसत उपज 15.8 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है यह किस्म लगभग 100 दिन में पक जाती है।

इन सभी जैव संवर्धित किस्मों का प्रचार एवं प्रसार करने की आवश्यकता है। ताकि सूक्ष्म तत्वों जैसे लोहा, जस्ता एवं कैल्शियम आदि की कमी की समस्या को काफी हद तक दूर किया जा सके एवं हमारा समाज स्वस्थ बन सके।

कृषि में भूगोल (जीआईएस) का अभिसरण

ज्योति शर्मा[1,2], शिखा त्रिपाठी[1,3], शिव शंकर शर्मा[1,3], रंजीत कुशवाहा[1], स्नेहा गुप्ता[4], पूजा गर्ग[5], अनामिका कश्यप[1], सुजाता कुमारी[1] एवं महेश राव[1]

[1]भा.कृ.अनु.प.- राष्ट्रीय पादप जैव प्रौद्योगिकी संस्थान, पूसा, नई दिल्ली-110 012
[2]डिपार्टमेंट ऑफ़ बायोटेक्नोलॉजी, स्कूल ऑफ़ केमिकल एंड लाइफ साइंस, जामिया हमदर्द, नई दिल्ली-110 062
[3]स्कूल ऑफ़ बायोटेक्नोलॉजी, काशी हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी, उत्तर प्रदेश-221 005
[4]सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि और प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ, उत्तर प्रदेश-250 110

परिचय

भारत में कृषि का एक लंबा इतिहास रहा है, जिसका उल्लेख ऋग्वेद जैसे वैदिक साहित्य में मिलता है। भारतीय कृषि का विकास विभिन्न कारकों से प्रभावित हुआ है, जिसमें 150 वर्षों तक भारत पर ब्रिटिश काल भी शामिल है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से, भारत ने अपने कृषि क्षेत्र को आधुनिक बनाने में महत्वपूर्ण प्रगति की है और अब कृषि उत्पादन में विश्व स्तर पर दूसरे स्थान पर है। जीआईएस "भौगोलिक सूचना प्रणाली" का संक्षिप्त रूप है। भौगोलिक सूचना प्रणाली (जीआईएस) एक कंप्यूटर प्रणाली है जो भौगोलिक रूप से संदर्भित जानकारी का विश्लेषण और प्रदर्शन करती है। यह एक विशिष्ट स्थान से जुड़े डेटा का उपयोग करता है। भौगोलिक सूचना प्रणाली (जीआईएस) का उपयोग फसल उत्पादन और खाद्य सुरक्षा में सुधार के लिए, विशेषकर जैव प्रौद्योगिकी में, तेजी से किया जा रहा है। जीआईएस प्रणाली भूगोल पर आधारित डेटा को इकट्ठा करने, प्रबंधित करने और उसका विश्लेषण करने के लिए कंप्यूटर और सॉफ़्टवेयर का उपयोग करती है और डेटा को मानचित्र पर विज़ुअलाइज़ करती है। जीआईएस को एकीकृत करके जैव प्रौद्योगिकी लक्ष्यों को अधिक आसानी से हासिल किया जा सकता है। प्रौद्योगिकी के एकीकरण से कृषि में क्रांति लाने की क्षमता रखता है। "कृषि में जीआईएस अनुप्रयोग" यह पता लगाता है कि यह तकनीक किसानों को पैदावार बढ़ाने, दक्षता में सुधार करने और फसल उत्पादन में लागत कम करने में कैसे मदद कर सकता है। जैसे-भारत भविष्य की ओर देख रहा है, फसल उत्पादकता और कृषि व्यवसाय प्रथाओं में प्रगति की ओर कदम बढ़ाने की बढ़ रही है। तकनीकी कौशल से लैस युवाओं की अगली पीढ़ी इस बदलाव को आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगी। भारत के लिए कृषि-परिस्थिति की प्रणालियों के संतुलन को संरक्षित करते हुए वैश्विक खाद्य सुरक्षा चुनौतियों का समाधान करने के लिए नवीन अनुसंधान उपकरणों को अपनाना महत्वपूर्ण है। जीआईएस एक आशाजनक समाधान प्रदान करता है, जो किसानों को कृषि पद्धतियों को अनुकूलित करने और सभी के लिए टिकाऊ खाद्य उत्पादन सुनिश्चित करने के लिए सुलभ लेकिन उन्नत तकनीक प्रदान करता है।

जीआईएस की अवधारणा को समझना

पिछले बीस वर्षों में भौगोलिक सूचना प्रौद्योगिकी में उल्लेखनीय प्रगति हुई है, जिसके 21वीं सदी में देशों के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने की उम्मीद बढ़ गई है। यह तकनीकी संग्रहित भौगोलिक सूचना प्रणाली (जीआईएस) है, जो विभिन्न प्रकार के भौगोलिक डेटा को पकड़ने, संग्रहीत करने, विश्लेषण करने, प्रबंधित करने और प्रस्तुत करने के लिए डिज़ाइन की गई एक व्यापक प्रणाली है। संक्षेप में, जीआईएस एक ऐसी प्रणाली के रूप में काम करती है जो विशिष्ट न्याय क्षेत्रों, उद्देश्यों या अनुप्रयोगों के लिए स्थानिक क्षेत्रों को डिजिटल रूप से बनाती है और उनमें बदलाव करती है। आमतौर पर, जीआईएस समाधान संगठनों की विशिष्ट आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए तैयार किए जाते हैं, जो विभिन्न संदर्भों में कुशल डेटा प्रबंधन और विश्लेषण को सक्षम बनाने में सहायता करते हैं। संक्षिप्त नाम जीआईएस का उपयोग कभी-कभी भौगोलिक सूचना विज्ञान या भू-स्थानिक सूचना अध्ययन को संदर्भित करने के लिए भी किया जाता है, जो भौगोलिक सूचना प्रणालियों के साथ काम करने से संबंधित शैक्षणिक क्षेत्र और पेशेवर कैरियर को कवर करता है। अनिवार्य रूप से, जीआईएस कार्टोग्राफी, सांख्यिकीय विश्लेषण और डेटाबेस प्रौद्योगिकी को जोड़ती है।

कृषि में जीआईएस का महत्व

स्वतंत्रता प्राप्त करने के बाद से पिछले 77 वर्षों में भारत ने कृषि क्षेत्र के आधुनिकीकरण में महत्वपूर्ण प्रगति की है, अब कृषि उत्पादन में विश्व स्तर पर दूसरे स्थान पर है। कृषि देश की अर्थव्यवस्था और खाद्य सुरक्षा के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है और

चित्र-1. जीआईएस का अनुप्रयोग

देश की 60% से अधिक आबादी जीवित रहने के लिए कृषि पर निर्भर है। सरकारी नीतियों, प्रौद्योगिकी और बुनियादी ढांचे की कमियों जैसी चुनौतियों के बावजूद, भौगोलिक सूचना प्रणाली (जीआईएस) और सूचना प्रौद्योगिकी (आईटी) आशाजनक समाधान प्रदान करते हैं। डेटा संग्रह और विश्लेषण के लिए जीआईएस तकनीक का उपयोग करके बेहतर नीति निर्माण, कृषि सेवाओं तक पहुंच और बुनियादी ढांचे की योजना बनाई जा सकती है। जीआईएस कृषि प्रौद्योगिकियों, पर्यावरण निगरानी और भूमि उपयोग प्रबंधन को बढ़ाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जैव प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में जीआईएस उत्पादन दक्षता बढ़ाने और भूमि प्रबंधन को अनुकूलित करने में मदद करता है। किसान अपने कृषि उद्देश्यों को प्रभावित करने वाले कारकों, जैसे कि फसल की पैदावार, मिट्टी की स्थिति और कीट प्रबंधन में अंतदृष्टि प्राप्त करने के लिए जीआईएस विश्लेषण का लाभ उठा सकते हैं।

कृषि में जीआईएस के सामने आने वाली चुनौतियां

खेती में जीआईएस का उपयोग करना कठिन है क्योंकि इसमें कई जटिल चरण शामिल हैं। उपयोग में लाए जाने वाला कंप्यूटर प्रोग्राम जटिल है और इसके ठीक से काम करने के लिए बहुत सारे संसाधनों की आवश्यकता होती है। मानचित्र पर विभिन्न क्षेत्रों को संयोजित करने और उनकी परस्पर क्रिया विश्लेषण करने में बहुत समय और बहुत प्रयास लगता है। इन चुनौतियों के बावजूद, जीआईएस किसानों को उनकी फसलों को बेहतर पैदावार और खाद्य सुरक्षा प्रदान करने में सहायक सिद्ध हो सकता है।

निष्कर्ष

भविष्य में, सटीक खेती से भारतीय किसानों को उन्नत तकनीक का उपयोग करके अधिक भोजन उगाने में मदद मिलने की उम्मीद है। लेख बताता है कि कैसे सही तकनीक का उपयोग करके खेती को अधिक कुशल और लाभदायक बनाया जा सकता है। जीआईएस तकनीक का उपयोग दक्षिण अफ्रीका जैसे अन्य देशों में भी किया जा रहा है ताकि यह अनुमान लगाया जा सके कि कितना फसल उत्पादन लिया जा सकता है। इससे सरकारों को यह सुनिश्चित करने में मदद मिलती है कि सभी के लिए पर्याप्त भोजन उपलब्ध हो सके। जीआईएस तकनीक परिदृश्यों का विश्लेषण करने और फसलों का अध्ययन करने के लिए उपग्रह छवियों का उपयोग करने जैसी चीजों में मदद करती है। हालांकि, जीआईएस तकनीक का उपयोग करना महंगा और समय लेने वाला हो सकता है क्योंकि इसके लिए बहुत सारे संसाधनों की आवश्यकता होती है। यह लेख इस बारे में जानकारी देता है कि कैसे भारत में किसान कुशलतापूर्वक फसल उगाने में मदद के लिए जीआईएस नामक नई तकनीक का उपयोग करना शुरू कर सकते हैं। यह नया दृष्टिकोण, जिसे सटीक खेती कहा जाता है, किसानों को पर्यावरण का ख्याल रखने के साथ-साथ अधिक भोजन पैदा करने में मदद करता है। यद्यपि परिशुद्ध खेती विकसित देशों में अधिक प्रचलित परत है, यह परंतु अब भारत में भी लोकप्रिय होने लगी है।

हरी सोयाबीन : खेती से उद्यमिता की ओर एक नई राह

मनीषा सैनी, अक्षय तालुकदार, मनु यादव, मेंनिअरी टाकू, अम्बिका राजेंद्रन, एस. के. लाल एवं ब.प. मल्लिकार्जुन

आनुवंशिकी संभाग, भा.कृ.अनु.प.– भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110 012

सोयाबीन, वानस्पतिक नाम ग्लाईसीन मैक्स, भारत की एक प्रमुख तिलहनी फसल है। सोयाबीन में 40-42 प्रतिशत प्रोटीन, 18-22 प्रतिशत तेल, 21 प्रतिशत कार्बोहाइडेंट, 12 प्रतिशत नमी तथा 5 प्रतिशत भस्म होती है। "सोया प्रोटीन" में मानव शरीर के लिए आवश्यक सभी प्रकार के अमीनो अम्ल पाए जाते हैं, और इसकी गुणवत्ता अंडे, दूध और मांस में पाए जाने वाले प्रोटीन से भी कहीं ज्यादा अधिक मानी गई है, इसलिए मनुष्यों के लिए सोयाबीन को "शाकाहारी मांस" भी कहा जाता है। सोयाबीन तेल पूरे विश्व में सबसे अधिक खाने योग्य तेल के रूप में उपयोग किया जाता है, और इसमें पाए जाने वाले लिनोलिक एवं लिनालेनिक अम्ल मानव शरीर के लिए आवश्यक वसा अम्ल हैं जो इसकी गुणवत्ता को और भी अधिक बढ़ावा देते हैं। इसलिए सोयाबीन अपनी गुणवत्ता और उपयोगिता के कारण पूरे विश्व में "सुन्हेरी फसल" के नाम से भी प्रसिद्ध है। इस के सुप्रचारित पौष्टिक-औषधीय लाभों के कारण, भविष्य में सोया खाद्य पदार्थों की मांग में वृद्धि जारी रहने की उम्मीद है।

विश्व के कुल सोयाबीन उत्पादन में भारत का पाचवां स्थान है। भारत में सोयाबीन की खेती मुख्य रूप से मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान, कर्नाटक, आंध्रप्रदेश के कृषकों द्वारा खरीफ की फसल के रुप में की जाती है, तथा मध्य प्रदेश एवं महाराष्ट्र की उपज में हिस्सेदारी क्रमशः 45 एवं 40 प्रतिशत है। उत्तर भारत के राज्य जैसे पश्चिमी उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, हिमाचल के क्षेत्र जहां सलाना 700 मि.मी. या अधिक बारिश होती है, इसकी खेती के लिए अनुकूल पाए गए है। वर्ष 2021-2022 में भारत में सोयाबीन 12.11 मिलियन हैक्टेयर क्षेत्र में उगाया गया था जिससे 11.12 मिलियन टन का उत्पादन हुआ था। वैश्विक संदर्भ में यह बहुत ही कम है, और इसे बढ़ाने कि आवश्यकता है।

कार्यात्मक खाद्य फसल के रूप में सोयाबीन

सोयाबीन विभिन्न पौष्टिक तत्वों से समृध है, और इसमें पाए जाने वाले कुछ अन्य स्वास्थवर्धक उपयोगी घटक जैसे कि *आइसोफ्लेवोन्स*, लेसिथिन, विशिष्ट *ओलिगोसेकेराइड्स* और फाइटोस्टेरॉल, जो मनुष्य के पोषण तथा शरीर की विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति करने के साथ-साथ शारीरिक और मानसिक स्थिति को भी बनाए रखने में भी मदद करते हैं। वैज्ञानिकों के शोधों में पाया गया है कि सोयाबीन प्रोटीन में *आइसोफ्लेवोन्स* रक्त सीरम कोलेस्ट्रॉल के स्तर को कम करने में सक्षम है, जिससे मनुष्यों में कोलेस्ट्रॉल के दुष्प्रभाव से रक्तधमनियों में उत्पन्न अवरोधों के कारण होने वाले हृदय रोग के जोखिम को कम किया जा सकता है। सोयाबीन *आइसोफ्लेवोन्स* हानिकारक कम घनत्व वाले लिपिड (एल.डी.एल.) कोलेस्ट्रॉल को कम करता है एवं गुणकारी उच्च घनत्व वाले लिपिड (एच.डी.एल.) कोलेस्ट्रॉल को बढ़ाने में मदद करता है। सोयाबीन *आइसोफ्लेवोन्स* कैंसर की रोकथाम, मधुमेंह प्रबंधन, हड्डियों के घनत्व में वृद्धि, और *ऑस्टियोपोरोसिस* को रोकने में भी मददगार साबित हुई हैं।

सोयाबीन के उपयोग करने के विभिन्न तरीके

दलहन की फसल माने जाने वाली सोयाबीन भारत में एक प्रमुख तिलहनी फसल के रूप से ही प्रसिद्ध है। सोयाबीन के बीज से प्राप्त तेल, दुनिया भर में एक लोकप्रिय खाना पकाने की सामग्री है और उपयोगिता के मामले में सोयाबीन का तेल देश में सर्वप्रथम है। परंतु तेल के अलावा सोयाबीन का सेवन अन्य कई प्रकार से भी किया जा सकता है, जैसे कि बीजों को अंकुरित करके "सोया स्प्राउट" और सलाद के रूप में खाया जा सकता है क्योंकि अंकुरित बीजों में अधिक मात्रा में मिनरल और प्रोटीन पाए जाते है। इसको सब्जी, कटलेट या फिर दूध में मिला के या परांठे के रूप में भी खाया जा सकता है। भीगे हुए

सोयाबीन के बीजों से दूध निकाल के 'सोया मिल्क' और उससे पनीर बना कर 'सोया पनीर और टोफू' के रूप में भी खा सकते है। सोयाबीन का आटा गेहूं के आटे के साथ 1:1 के अनुपात में मिला कर ''चपाती' तथा विभिन्न प्रकार के नाश्ता एवं हल्के भोजन तैयार कर सकते है। भारतीय शाकाहारी व्यंजनों में सोया-खली एक महत्त्वपूर्ण घटक है। भुने हुए सोयाबीन के बीजों को नमकीन के रूप में खाया जा सकता है। इसके अलावा ''हरी सोयाबीन'' जिसको आम तौर पर ''सब्जी सोयाबीन'' भी कहते है, एक बहुत ही महत्वपूर्ण और पौष्टिक सब्जी है, के रूप में खाने में प्रयोग कर सकते है। आज इस लेख के माध्यम से हम आपको इसकी विस्तृत जानकारी दे रहे हैं:

हरी सोयाबीन – एक स्वास्थ्यवर्धक एवं अर्थकारी फसल

हरी सोयाबीन, सब्जी सोयाबीन या *एडामेंम* साधारणत: तिलहनी सोयाबीन प्रजातियों जैसी ही होती है परंतु हरी सोयाबीन को फली के पूर्ण परिपक्वता तक पहुंचने से पहले ही तोड़कर खाने में इस्तेमाल किया जाता है। इसके हरे ताजे बीज आम तौर पर आकार में बड़े और स्वाद में मीठे होते हैं। हरी सोयाबीन में प्रोटीन, मोनो-असंतृप्त (अनसैचुरेटेड) वसा अम्ल, विटामिन-सी, फाइबर, लौह (आयरन), जस्ता (जिंक), कैल्शियम, फॉस्फोरस, फोलेट, मैग्नीशियम, पोटेशियम, टोकोफेरोल और कैंसर रोधी आइसोफ्लेवोन्स प्रचुर मात्रा में पाए जाते है। इन सभी पौष्टिक-औषधीय (*न्यूट्रास्युटिकल*) एवं स्वास्थ्यवर्धक गुणों के साथ-साथ इसका मनोरम स्वाद, नाजुक संरचना और इसको आसानी से पका कर भोजन तैयार की क्षमता इसे और अधिक उपयोगी बनाता है। हरी सोयाबीन की अपरिपक्व फलियों को हल्के नमकीन पानी में उबालकर, और निकाले गए बीजों को ताजी सब्जी के रूप में सेवन किया जा सकता है। इस प्रकार के भोजन में हरी मटर की अपेक्षा हरी सोयाबीन में 60% से अधिक कैल्शियम एवं दोगुना फॉस्फोरस और पोटेशियम का स्तर मौजूद होता है। हरी सोयाबीन प्रति इकाई क्षेत्र में सबसे अधिक फसल प्रोटीन का उत्पादन करता है। हरी सोयाबीन का विकास चक्र छोटा (कुल 65-75 दिन मात्र) होता है, जिससे इसकी विभिन्न फसल क्रमों में उगाए जाने की संभावनाएं बढ़ जाती है। भारत को हरी सोयाबीन की फसल को बड़े पैमाने पर अपनाने और खाने में इसके प्रचुर इस्तेमाल से प्रोटीन और लौह (आयरन) की कमी को दूर करने में मदद मिल सकती है। इस दिशा में किए गए प्रयासों के फलस्वरूप ही हरी सोयाबीन की उन्नत किस्मों का विकास एवं उत्पादन प्रारंभ हुआ है।

हरी सोयाबीन का आर्थिक महत्व

हरी सोयाबीन या *एडामेंम* का उपयोग पहली बार लगभग 200 ई.पू. के दौरान एक औषधीय फसल के रूप में दर्ज किया गया था। इसकी खेती पूरे पूर्वी एशिया में पीढ़ियों से की जाती रही है। जापान *एडामेंम* का सबसे बड़ा व्यावसायिक उत्पादक है। संयुक्त राज्य अमेरिका में भी हरी सोयाबीन लगातार लोकप्रियता प्राप्त कर रही है। पौष्टिक-औषधीय (*न्यूट्रास्युटिकल*) के रूप में सोयाबीन की बढ़ती लोकप्रियता के कारण वर्तमान में हरी सोयाबीन की मांग पुरजोर बढ़ रही है। एफ.डी.ए. द्वारा हाल ही में सोयाबीन प्रोटीन के अर्क को पोषण संबंधी पूरक के रूप में मंजूरी देने से सोया खाद्य पदार्थों की मांग और भी अधिक बढ़ गई है। अधिकांश एशियाई देशों में, विशेष रूप से जापान में, सोयाबीन की हरी फली और ताजे बीज से प्राप्त उत्पाद की उच्च मांग है। हालांकि, भारत में हरी सोयाबीन और अन्य खाद्य मानक (फ़ूड ग्रेड) सोयाबीन कि खेती न के बराबर है। परंतु भारत में विशेष रूप से चीन और जापान से विदेशी नागरिकों की बढ़ती उपस्थिति के साथ भारत में खाद्य मानक सोयाबीन की मांग बढ़ रही है, और इस मांग को पूरा करने के लिए भारत को सोया खाद्य पदार्थों का आयात करना पड़ रहा है। भारत ने फरवरी 2013 से अक्टूबर 2016 की अवधि के दौरान 372,812 अमेरिकी डॉलर मूल्य की हरी सोयाबीन का आयात किया और आयातित मात्रा 59,347 किलोग्राम थी। शीर्ष आपूर्तिकर्ता जापान ($ 274,850), चीन ($ 68,092) और थाईलैंड ($ 29,467) थे। अब ये आंकड़ा कई गुना बढ़ गया है और यह हमारे देश में सोयाबीन की खेती बढ़ाने के महत्व को उचित ठहराता है।

हरी सोयाबीन का पोषाहार संरचना

ताजी हरी सोयाबीन के बीजों में 35 से 38 प्रतिशत प्रोटीन (सूखे वजन के आधार पर) और 5 से 7% लिपिड होता है। ताजे हरे बीजों से प्राप्त लिपिड में मोनो-असंतृप्त (अनसैचुरेटेड) वसा अम्ल का उच्च अनुपात होता है, जो की हरी सोयाबीन को एक स्वास्थ्यवर्धक हल्का भोज्य पदार्थ बनाती हैं। सोयाबीन *आइसोफ्लेवोन्स* के कुछ प्राकृतिक स्रोतों में से एक है, जिसमें *आइसोफ्लेवोन* (78 से 220 मिलीग्राम/100 ग्राम सूखे बीज में) और *टोकोफेरोल* (विटामिन-ई) (आइसोफ्लेवोन प्रकार के आधार पर 84 से 128 मिलीग्राम/100 ग्राम सूखे बीज में) पाया जाता है।

हरी सोयाबीन और अन्य हरी फलियों वाली फसलों का सापेक्ष पोषण सामग्री नीचे दी हुई तालिका सं.-1 में सूचीबद्ध है।

हरी सोयाबीन का कृषि शास्त्रीय महत्त्व

हरी सोयाबीन एक कम लागत वाली एवं मृदा को समृद्ध करने वाली दलहनी फसल है। विशेष गुणों वाली हरी सोयाबीन संयुक्त राज्य अमेरिका में एक विशिष्ट बाजार वाली फसल है, जो दलहनी सोयाबीन के बाजार मूल्य से कहीं गुना अधिक मूल्य पर बिक्री होती है। भारत में भी गुणकारी हरी सोयाबीन के ग्राहकों की संख्या में दिनों-दिन बढ़ोतरी हो रही है। वर्तमान में प्रजनन के माध्यम से ताइवान स्थित विश्व सब्जी केंद्र एवं विकास केंद्र (वर्ल्ड वेजिटेबल सेंटर) तथा भारत के विभिन्न शोध संस्थानों द्वारा विकसित उच्च फली पैदावार और अधिक बायोमास वाली *एडामेम* किस्मों की खेती की जा रही है। ये खेती फली उत्पादक और हरी खाद फसल, दोनों के रूप में अपना योगदान प्रदान कर रही है। यह मिट्टी की संरचना और स्थिरता में सुधार करते हुए मिट्टी के पोषक तत्वों जैसे नाइट्रोजन और कार्बनिक पदार्थों की भी भरपाई करती है। *एडामेम* किस्में अपने छोटे जीवन काल के कारण मौजूदा फसल चक्र प्रणाली में अच्छी तरह से समायोजित की जा सकती हैं।

तालिका सं.-1: हरी सोयाबीन और अन्य बीन्स में उपलब्ध पोषक तत्वों की तुलना

फसल	शुष्क पदार्थ (ग्राम)	प्रोटीन (ग्राम)	तेल (ग्राम)	कैल्शियम (मिलीग्राम)	लौह (मिलीग्राम)	जस्ता (मिलीग्राम)	विटामिन-ए (एमसीजी-आर.ए.ई.)	विटामिन-सी (मिलीग्राम)	फोलेट (एमसीजी)
हरी सोयाबीन	33	40	13	606	11	3	28	89	508
अंकुरित मूंग	10	32	2	135	9	4	10	138	635
चना	88	22	7	119	7	4	3	5	630
लोबिया	89	27	2	96	11	7	2	2	718
मूंगफली	94	28	53	98	5	3	0	0	257
अरहर	34	21	5	123	5	3	9	114	557

मात्रा प्रति 100 ग्राम कच्चे उत्पाद (शुष्क वजन के आधार पर), स्रोत: यू.इस.डी.ऐ. (2010)

भारत में हरी सोयाबीन की खेती मुख्य रूप से झारखंड, बिहार, हैदराबाद और इनसे लगे सीमावर्ती राज्यों में की जाती है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली ने 2001 में पहली हरी सोयाबीन किस्म, 'हिम्सो 1563' जारी की जो 100-120 दिनों में पक कर तैयार हो जाती है और प्रति हैक्टेयर 5 टन उपज प्रदान करती है। इंदौर स्थित भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सोयाबीन अनुसंधान संस्थान द्वारा विकसित की गई हरी सोयाबीन का आनुवंशिक रूप, एन.आर.सी. 105 है, जिससे औसतन 3.9 टन/हैक्टेयर के उत्पादन लेने की क्षमता के साथ 60 दिनों में तोड़ने योग्य हरी फलियां प्राप्त की जा सकती है।

हरी सोयाबीन को पकाने की विधि

हरी सोयाबीन बनाने के लिए हरी सोयाबीन की फली को पूर्ण परिपक्वता तक पहुंचने से पहले ही तोड़ लिया जाता है। फलियों को बर्तन में चुटकी भर नमक के साथ या फिर बिना नमक के पानी में उबाला जाता है और 3 से 5 मिनट तक पकने के बाद बर्फ के ठंडे पानी में एक या दो मिनट रखने के उपरांत छान कर ठंडा किया जाता है। इसके अलावा सह-भोजन के रूप में भी, बीन्स को थोड़े जैतून के तेल और नमक के छिड़काव के साथ खाया जा सकता है। हरी सोयाबीन को सलाद या मिश्रित सब्जियों के रूप

में भी उपयोग किया जा सकता है। सर्दियों में इससे घर का बना सूप, ताजे हरे बीजों से सोया दूध या इसके आगे की प्रक्रिया से आइसक्रीम, टोफू, आदि भी बनाया जा सकता है।

भविष्य की अपार संभावनाएं

भारत में हरी सोयाबीन की खेती झारखंड, बिहार, हैदराबाद और इसके सीमावर्ती राज्यों में की जाती है। परंतु, जापान और चीन से बढ़ती संख्या में नागरिकों की उपस्थिति हरी सोयाबीन और सोया खाद्य की मांग को लगातार बढ़ा रही है और इस मांग को पूरा करने के लिए भारत को हरी सोयाबीन के आयात करने के लिए मजबूर होना पड़ा है। दिल्ली-भा.कृ.अनु.प. में आला बाजार के लिए देश में बड़ी मात्रा में एडामैम का आयात किया जा रहा है। इसलिए, यह आयत कम करना और जरूरतों को पूरा करने के लिए हरी सोयाबीन कि उपयुक्त किस्मों का विकास करना और इसकी खेती को बढ़ावा देना अत्यंत आवश्यक है।

दूसरा सोयाबीन की खेत को गैर-पारंपरिक स्थानों जैसे उत्तर-पूर्वी भारत में बढ़ावा दिया जाना चाहिए ताकि उत्पादन में सुधार हो और इसे दाल-प्रोटीन विकल्प के रूप में लोकप्रिय बनाया जा सके। इसके अलावा, इसका फसल उत्पादन भारत के उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र के चावल उगाने वाले क्षेत्रों में भी लोकप्रिय बनाने हेतु प्रयास करना आवश्यक है। साथ-साथ हरी फली तोड़ने के उपरांत दुधारु जानवरों के चारे के रूप में फसल अवशेष को प्रयोग करने की संभावनाए भी तलाशी जा सकती हैं। इसकी फसल अवधि कम करने पर भी विचार कर शोध किए जाने चाहिए ताकि इसे देश के विभिन्न क्षेत्रों में उपयोग किए जाने वाले विभिन्न फसल अनुक्रमों के अनुकूल बनाया जा सके।

हरी सोयबान को और अधिक जनप्रिय बनाने के लिए भारतवासियों के खानपान एवं स्वाद का विशेष ध्यान रखते हुए उन्नतशील गुणवत्ता वाली किस्मों के विकास कार्यक्रमों पर गौर करने की आवशयकता है। इस क्रम में नई दिल्ली स्थित भारतीय कृषि अनुसंधासन संस्थान में विभिन्न रोग प्रतिरोधी क्षमता वाली उच्च गुणवत्तायुक्त, अप्रिय स्वाद रहित, बासमती चावल जैसी सुगंधित हरी सोयाबीन एवं परिवर्तित वायुमंडलीय परिस्थिति को सहन करने वाली किस्मों के विकास पर भी तेजी से काम हो रहा है तथा साथ-साथ ऐसी उम्मीद की जा सकती है कि निकट भविष्य में हरी सोयाबीन हर भारतीय के भोजन में शामिल होगी और देश के नागरिकों को अच्छा स्वास्थ के साथ-साथ किसानों की आय में बढ़ोतरी प्रदान करेगी।

चित्र-1. बिक्री के लिए पैकेट में रखी हरी सोयाबीन की फलीयां

धान की सीधी बुआई

राज कुमार गौरव, रणबीर सिंह एवं बिल्लू सिंह

सस्य विज्ञान संभाग, भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली- 110 012

भारत में धान खरीफ की प्रमुख फसल है। चीन के बाद भारत का धान उत्पादन में दूसरा स्थान है, लेकिन प्रति हैक्टेयर उत्पादकता चीन से पीछे है। उत्पादकता की दृष्टि से विश्व में मिश्र, अमेरिका व चीन आदि देश शिखर पर हैं। जिनकी धान की औसत पैदावार 63.3 से 88.8 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है, जबकि भारत में धान की औसत उपज 30 क्विंटल प्रति हैक्टेयर पर लगभग स्थिर है। धान से अच्छी फसल उत्पादन के लिए, उन्नत किस्में, बीज दर, बीजोपचार, बुआई विधि व समय, रोपाई, नर्सरी प्रबंधन, फसल सुरक्षा इत्यादि सस्य प्रक्रियाओं की भूमिका है। उक्त विधियों से ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में कमी, समय, धन, जल एवं श्रम की बचत होती है। भारत में अधिकांश किसान धान को रोपाई विधि से उगाते है, जिसमें काफी मात्रा में जल व श्रम की आवश्यकता होती है तथा नर्सरी उगाने, जल भराव या पड़लिंग करने एवं रोपाई करने में काफी खर्च करना पड़ता है। धान की सीधी बुआई (डीएसआर) करते हैं, तो नर्सरी तैयारी करने की आवश्यकता नहीं होती है। इसमें कम जल व श्रम की आवश्यकता होती है। इसके अतिरिक्त प्रति इकाई क्षेत्र से उत्पादन एवं आय में भी वृद्धि होती है। यह तकनीक संसाधन की उत्तम विधि है, जिसमें 20 प्रतिशत जल एवं श्रम की बचत होती है। इस विधि में जीरो टिल ड्रिल एवं हैप्पी सीडर से सीधे खेत में बुआई की जाती है। ये मशीनें 45 से 60 अश्व-शक्ति के ट्रैक्टर से चलती है। इस मशीन में बुआई हेतु 9 या 11 कूडकारी 22 सें.मी. की दूरी पर लगे होते हैं।

धान की सीधी बुआई हेतु उन्नत सस्य क्रियाएं

- **भूमि की तैयारी एवं समतलीकरण**: धान की सीधी बुआई के लिए मई-जून माह में खेत में एक से दो अच्छी गहरी जुताई करें, जिससे खरपतवारों में कमी के साथ-साथ हानिकारक मृदा जीवाणुओं की संख्या में कमी आती है। धान की सीधी बुआई के लिए सर्वप्रथम खेत को एक समान करने के लिए लेंजर लैंड लेवलर द्वारा समतलीकरण करना भी अति आवश्यक है। ऐसा करने से बीज का अंकुरण, विकास, जल का एक समान वितरण तथा फसल की परिपक्वता समय से होती है, जिससे फसलोत्पादन वृद्धि प्राप्त होती है।

- **धान की सीधी बुआई हेतु मशीन की तैयारी**: धान की सीधी बुआई से पहले अच्छी तरह से जांच एवं सफाई कर लें ताकि उर्वरक एवं बीज सुगमता से खेत में गिर सके। बुआई मशीन को ट्रैक्टर से जोड़ने से पहलें मशीन का निरीक्षण कर लें, यदि नट एवं बोल्ट ढीलें हों तो उन्हें कस देना चाहिए तथा चैन व गरारीयों को तेल एवं ग्रीस लगा देना चाहिए।
- **उन्नत किस्मों का चयन**: धान की सीधी बुआई हेतु उन्हीं किस्मों का चयन करना चाहिए जिनकी प्रारंभिक बढ़वार

तीव्र गति से हो, गहरी जड़ें हो तथा जिनको जल की कम आवश्यकता हो, जैसे;

क) 120 से 125 दिनों में तैयार होने वाली कम अवधि की बासमती धान की किस्में: पूसा बासमती 1509, पूसा बासमती 1692 और पूसा बासमती 1847

ख) 140 दिनों में तैयार होने वाली बासमती धान की किस्में: पूसा बासमती 1121, पूसा बासमती 1718 और पूसा बासमती 1885

ग) 155 से 160 दिनों में तैयार होने वाली बासमती धान की किस्में: पूसा बासमती 1401, पूसा बासमती 1728 और पूसा बासमती 1886

अन्य किस्में: राजेन्द्र कस्तूरी, सुगंधा, नरेन्द्र धान 359, पी.आर. 113 व 118, हजारी धान, सहभागी धान, अंजली, सीआर धान-40, शुष्क सम्राट, एमटीयू 1010 व 7029, वंदना एवं राजश्री इत्यादि है।

- **पंक्ति से पंक्ति की दूरी:** धान की सीधी बुआई हेतु पंक्ति से पंक्ति की दूरी 20 से 22 सें.मी. उपयुक्त रहती है। बीज को सही गहराई पर बोने से फसल का अंकुरण अच्छा होता है। अतः बीज को 2 से 3 सें.मी. गहराई पर ही बोना चाहिए। बुआई से पूर्व बीजों को जल में 8 से 10 घंटे (सीड प्राइमिंग) भिगोकर छायादार स्थान पर सुखा लेते हैं।

- **बीज की मात्रा:** धान की सीधी बुआई में सीड ड्रिल या प्लान्टर से मोटे व मध्यम आकार के बीजों के लिए बीज दर 15-20 व 25 से 30 कि.ग्रा./हैक्टेयर तथा छोटे महीन बीज हेतु 20 से 25 कि.ग्रा. मात्रा पर्याप्त होती है।
- **बीज उपचार:** बुआई के लिए बीज तैयार करने के लिए 1 कि.ग्रा. नमक 10 लीटर जल में घोल लीजिए और इसमें 8 कि.ग्रा. बीज डाल करके थोड़ी देर एक डंडे से हिलाते जाईए। हल्के बीज ऊपर तैरने लग जाएंगे। हल्के बीजों को निकाल कर बाहर फेंक दीजिए। डूबे हुए बीजों को निकालकर स्वच्छ जल से तीन बार अच्छी तरह से धो लीजिए ताकि नमक का प्रभाव समाप्त हो जाए। इसके बाद बीजोपचार हेतु स्ट्रेप्टोसाइक्लिन की 2 ग्राम मात्रा और बाविस्टीन की 20 ग्राम मात्रा 10 लीटर जल में घोल करके 8 कि.ग्रा. चयनित बीज को इस घोल में डुबोकर 24 घंटे के बाद बीज को बाहर निकाल लीजिए और उसको छाया में अच्छी तरह से सुखा लीजिए। अब यह बीज बुआई के लिए तैयार है।
- **बुआई का समय:** मानसून आने के लगभग 10 से 12 दिनों पूर्व धान की सीधी बुआई अच्छी मानी जाती है। मैदानी क्षेत्रों में सिंचित पारिस्थितियों में 10 से 15 जून तक सीधी बुआई कर सकते हैं। वर्षा आधारित ऊपरी भूमियों में, जहां जलभराव नही होता हो और अगेती किस्में लगानी हो, वहां सीधी बुआई 15 जुलाई तक कर सकते हैं।
- **सीधी बुआई एवं खरपतवानाशी का प्रयोग:** जहां खेत में नमी नहीं है या कम है, वहां पहलें खरपतवारनाशी छिड़काव कर एक सप्ताह बाद हल्का पानी देकर उचित नमी आने पर मशीन से बुआई करनी चाहिए। जहां वर्षा जल से या पहलें से खेत में नमी पर्याप्त है, वहां खरपतवारनाशी का छिड़काव करके 2 से 3 दिनों के बाद मशीन से बुआई कर देनी चाहिए। बुआई करने के बाद हल्का पाटा चलाना चाहिए। इस विधि

के अंदर 7 से 8 दिनों में अंकुरण हो जाता है। सीधी बुआई वालें धान में खरपतवार पर नियंत्रण एक जटिल एवं गंभीर समस्या है। सीधी बुआई में बुआई के बाद एवं अंकुरण से पूर्व खरपतवारनाशी दवा पेंडीमिथालिन का प्रयोग करें। धान फस्ल में खरपतवारनाशी रसायनों का उल्लेख सारणी-1. में किया गया है।

सारणी 1. रसायनों द्वारा रोपाई किए गए धान तथा सीधी बुआई धान में खरपतवार नियंत्रण

क्र. सं.	शाकनाशी	सक्रीय मात्रा प्रति हैक्टेयर	प्रयोग करने का समय एवं विधि	खरपतवार
1.	ब्युटाक्लाोर 50 ई.सी.(मचैटी, डेलक्लोर)	1 से 1.5 लीटर	रोपाई के 2 से 3 दिन बाद तक 400 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति है. स्प्रे करें	सावाघास, मोथा, फिंगरूस
2.	पेंडीमेथालिन 30 ई.सी. (स्टाम्प)	1 लीटर	उपरोक्त	जंगली धान, सांवक, मोथा, नागरमोथा
3.	ऑक्सीडायरजिल 80 डब्ल्यूपी (टॉफस्टार)	100 ग्राम	उपरोक्त	जंगली धान, सांवक, मोथा, नागरमोथा
4.	प्रेटिलाक्लोर 50 ई.सी. (रिफिट, इरेज)	750 मि.ली.	उपरोक्त	जंगली धान, सांवक, मोथा, नागरमोथा
5.	बिसपाइरीबैक सोडियम 10 प्रतिशत एसपी (नोमिनी गोल्ड, अडोरा)	20 से 25 ग्रा.	रोपाई के 20 से 25 दिन के बाद 400 से 450 ली. पानी में मिलाकर प्रति हैक्टेयर स्प्रे करें	जंगली धान, छोटा सांवक, बीज वाला मोथा, वॉटर फलॉवर
6.	हेलोसल्फयूरॉन 75 डब्ल्यू जी (परमिट)	70 ग्रा.	बुआई के 1 से 15 दिन बाद 400 ली. पानी में मिलाकर प्रति हैक्टेयर स्प्रे करें	इंडियन गूजघास, मोथा, वॉटर फलॉवर
7.	2, 4-डी ईस्टर 38 ई.सर	500 ग्रा.	रोपाई के 20 से 25 दिन के बाद 400 से 450 ली. पानी में मिलाकर प्रति हैक्टेयर स्प्रे करें	फॉल्स डेजी भंगरा, पटसाग, धन पापड़
8.	2, 4-डी सोडियम सॉल्ट 80 प्रतिशत	500 ग्रा.	रोपाई के 20 से 25 दिन के बाद 400 से 450 ली. पानी में मिलाकर प्रति हैक्टेयर स्प्रे करें	फॉल्स डेजी भंगरा, पटसाग, धन पापड़

- **उर्वरक का प्रयोगः** धान की सीधी बुआई में प्रति हैक्टेयर 100 से 120 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस और 60 कि.ग्रा. पोटाश की आवश्यकता होती है। नाइट्रोजन की एक तिहाई और फॉस्फोरस तथा पोटाश की पूरी मात्रा बुआई के समय प्रयोग करनी चाहिए। पोटाश उर्वरक मशीन के पाईप में चिपकता है। अतः प्रति हैक्टेयर 100 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश खेत में बुआई से पहलें छिड़क दें। धान की सीधी बुआई वाले खेतों में मुख्यतया हल्की मृदाओं में लोहा की कमी पाई जाती है जिससे आयरन क्लोरोसिस धान के पौधों में हो जाती है। इसके निदान हेतु आयरन सल्फेट का 0.5 प्रतिशत घोल बनाकर 10 से 15 दिन के अंतराल पर छिड़काव करना चाहिए।
- **जल प्रबंधनः** धान की सीधी बुआई में लगभग 30-40 प्रतिशत जल की बचत होती है। बुआई के समय खेत में उचित नमी का होना आवश्यक है। यदि बुआई सूखे खेत में की जाती है, तो बुआई के 12 घंटे के अंदर हल्की सिंचाई करनी चाहिए। बीजों के अंकुरण से 20 से 25 दिनों तक खेत में नमी बनाए रखनी चाहिए। फूल आने के पहले से फूल आने की अवस्था तक खेत में पर्याप्त नमी बनाएं रखें। दाना बनने की अवस्था में पानी की कमी खेत में नहीं होनी चाहिए। कटाई से 15 से 20 दिनों पहलें सिंचाई बंद कर देनी चाहिए।

फसल सुरक्षा हेतु जैविक एवं रासायनिक नियंत्रण के उपाय

प्रमुख कीट

- **टिड्ढ़े:** इस कीट के व्यस्क व शिशु पौधों के नर्म भागों से व दूधिया दानों से रस चूसते हैं। दानों में काले या भूरे धब्बे इस कीट का मुख्य लक्षण हैं। इसकी रोकथाम हेतु नाइट्रोजन की संतुलित मात्रा का प्रयोग करें तथा खेत में इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एसएल की 0.50 मि.ली. या क्लोरोपाइरिफोस 20 ई.सी. की 2.5 मि.ली. मात्रा को प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर स्प्रे करना चाहिए।

रोकथाम

1. खेतों के आस-पास झाड़ियां व खरपतवार न आने दें।
2. इकोनीम (0.05 प्रतिशत) का प्रयोग करें।
3. अधिक संख्या होने पर नीम (1.5 ली. प्रति एकड़) का छिड़काव करें। आवश्यकतानुसार 7-10 दिन बाद पुनः छिड़काव करें।

काला भुंगः इस कीट का प्रकोप रोपाई के तुरंत बाद पौधों के दबे भाग में होता है, जिससे पौधे मर जाते हैं। इसकी रोकथाम हेतु क्लोरोपाइरिफोस 20 ई.सी. की 2.5 मि.ली. या इन्डोक्साकार्ब 14.5 एससी की 0.50 मि.ली. मात्रा को प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर स्प्रे करना चाहिए।

रोकथाम

1. खेतों के आस-पास झाड़ियां व खरपतवार न आने दें।
2. इकोनीम (0.05 प्रतिशत) का प्रयोग करें।
3. अधिक संख्या होने पर नीम (1.5 ली. प्रति एकड़) का छिड़काव करें। आवश्यकतानुसार 7-10 दिन बाद पुनः छिड़काव करें।
4. 1.5 ली. नीम तेल को 25 कि.ग्रा. रेत में मिलाकर प्रति एकड़ खेतों में खड़े पानी में छिड़काव करें।

धान का हिस्पाः शिशु व प्रौढ़ दोनों ही पौधों को क्षति पहुंचाते हैं। शिशु पत्तों के अंदर जाकर सफेद धारियां बनाते हैं। अधिक संख्या होने पर पौधे सूख जाते हैं। इसकी रोकथाम के लिए क्लोरोपाइरीफोस 20 ई.सी. की 2.5 मि.ली. मात्रा को प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर स्प्रे करें या नीमजाल की 0.03 प्रतिशत या ईकोनीम की 0.05 प्रतिशत का उपयोग भी किया जा सकता है।

रोकथाम

1. खेतों के आसपास खरपतवार न उगने दें।
2. नीमाजल (0.03 प्रतिशत) या ईको नीम (0.05 प्रतिशत) का छिड़काव 10-15 दिनों के अंतराल पर करें।

तना छेदकः इस कीट के शिशु तनों के अंदर जाकर क्षति पहुंचाते हैं। रोपाई के 50-60 दिन बाद इस कीट से मादा व्यस्क (मौथ) पत्तों के किनारों पर पौधों में अंडे देती हैं व जुलाई से अक्टूबर तक क्षति पहुंचाते हैं। ग्रसित पौधे सफेद बालियों में बदल जाते हैं व सूख जाते हैं। मैलाथियान की 50 ई.सी. की 1.0 मिली. या क्युनालफोस की 0.50 मि.ली.या क्लोरोपाइरिफोस 20 ई.सी. की 2.5 मि.ली. मात्रा प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर स्प्रे करना चाहिए।

रोकथाम

1. नीम का प्रयोग व्यस्कों को भगाने के लिए 15 दिन के अंतराल पर करें।
2. प्रकाश प्रपंच (लाईट ट्रैप) का प्रयोग व्यस्कों को इकट्ठा करने के लिए करें।
3. 1.5 ली. नीम तेल को 25 कि.ग्रा. रेत में अच्छी तरह मिलाकर 1 एकड़ खेत में खड़े पानी में छिड़काव करें। जिससे लार्वा एक पौधे से दूसरे पौधों तक न जा सके। आवश्यकतानुसार पुनः प्रयोग करें।

धान का पत्ती लपेटक कीटः इस कीट की सुंडी पौधों के हरे पदार्थ को खा जाती है तथा पत्तियां सिकुड़कर भूरे रंग की होकर मुड़ जाती है। क्लोरोपाइरिफोस 20 ई.सी. की 2.5 मि.ली. मात्रा को प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर स्प्रे करना चाहिए या एसीफेट की 2 ग्राम मात्रा प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

रोकथाम

1. ग्रसित पत्तों को निकालकर नष्ट कर दें।
2. खरपतवारों व घास को खेत के पास न उगने दें।
3. हरी मिर्च व लहसुन के अर्क या नीमाजल/इकोनीम का छिड़काव करें।

भूरा फुदकाः इस कीट का प्रकोप अगस्त-सितंबर मास में होता है। शिशु व प्रौढ़ पौधों का रस चूसकर क्षति पहुंचाते हैं।

रोकथाम

1. नीम तेल (1.5 ली.) को रेत (25 कि.ग्रा.) में मिलाकर एक एकड़ खेत में पानी में छिड़काव करें। आवश्यकतानुसार 7 दिन बाद पुनः छिड़काव करें।

गंधी कीट : यह कीट दानों की दूधिया अवस्था में तथा पत्तियों से रस चूसकर फसल को नुकसान पहुंचाता है एवं यह खेत में दुर्गंध फैलाता है। इसके प्रकोप से फसल को बचाने के लिए रोगोर या मैलाथियोन 1.50 मि.ली. या एसीफेट की 2 ग्राम मात्रा प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

धान की बीमारियां एवं उनका एकीकृत प्रबंधन

- **तना गलनः** इसकी रोकथाम के लिए रोगरोधी किस्मों का प्रकोप करना चाहिए, नाइट्रोजन की संतुलित मात्रा में प्रयोग करना चाहिए तथा खेत में जल निकास की उचित व्यवस्था होनी चाहिए तथा कार्बेन्डाजिम 50 डब्ल्यू पी की एक ग्राम मात्रा को प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर स्प्रे करें।
- **पत्ती झुलसा रोगः** फसल काल के दौरान जब रात्रि का तापमान 20 से 22 सेल्सियस व आर्द्रता 95 प्रतिशत से अधिक होती है, इस रोग का तीव्र प्रकोप होने की संभावना होती है। प्रारंभिक अवस्था में निचली पत्तियों पर हल्के बैंगनी रंग के छोटे-छोटे धब्बे बनते हैं जो धीरे-धीरे बढ़कर आंख के समान बीच में चैड़े व किनारे पर संकरे हो जाते है। इन धब्बों के बीच एक रंग हल्के भूरे रंग का होता है। बीमारी के नियंत्रण हेतु कार्बेन्डाजिम 0.1 ग्रा./1ली. या ट्राईसाइक्लाजोल 75 डब्ल्यू पी की 2 ग्राम/ली./1 ली. पानी में घोल बनाकर स्प्रे करें।
- **बैक्टीरियल लीफ ब्लाइटः** इसकी रोकथाम के लिए स्ट्रेप्टोसाइक्लीन 250 मि./ग्राम प्रति लीटर पानी में मिला कर स्प्रे करें।
- **खैरा रोगः** यह रोग जस्ते की कमी के कारण होता है। इसमें पत्तियों पर हल्के रंग के धब्बे बनते हैं जो बाद में कत्थई रंग के हो जाते हैं। प्रभावित पौधों की जड़े भी कत्थई रंग की हो जाती हैं। इसकी रोकथाम के लिए फसल पर 5 कि.ग्रा जिंक सल्फेट 2.5 कि.ग्रा. बुझे चूने के साथ 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति हैक्टेयर स्प्रे करें।
- **कटाई एवं मड़ाईः** धान की बालियां जब 85 से 90 प्रतिशत तक पक जाएं तथा दानों में 18 से 20 प्रतिशत तक नमी रहे एवं बालियों का रंग पीला पड़ जाए तो फसल की कटाई कर लेंनी चाहिए। फसल के अधिक पकने पर दानों के झड़ने का भय रहता है। कटाई के बाद फसल को अच्छी प्रकार सुखाकर दाने को अलग कर लेना चाहिए।

पोर्टेबल खेती

सुक्रमपाल सिंह[1], सौरभ[2] एवं रणबीर सिंह[3]

[1]क्षेत्रीय मृदा परीक्षण प्रयोगशाला, श्री नगर, पौड़ीगढ़वाल,
[2]पृथ्वी सिंह विकसित महाविद्यालय, धनौरी, जिला हरिद्वार एवं
[3]सस्यविज्ञान संभाग, भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली-110 012

वर्तमान समय में खाद्य एवं पोषण सुरक्षा की आवश्यकता अत्यंत महत्वपूर्ण है। क्योंकि तीव्र जनसंख्या वृद्धि, खेती योग्य भूमि की कमी और जलवायु परिवर्तन, कृषि को उन्नत तकनीक में कमी और प्राकृतिक संसाधनों का दोहन हो रहा है। इस संदर्भ में, पोर्टेबल खेती एक उत्कृष्ट विकल्प हो सकता है, जो कृषकों को अनुकूलता, प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग, और अधिक उत्पादक खेती की संभावनाएं प्रदान कर सकता है। आज के इस युग में विकास के साथ-साथ खाद्य सुरक्षा की चुनौतियों का सामना कर रहा है। बढ़ती जनसंख्या, शहरीकरण और कृषि योग्य भूमि की कमी के कारण कृषि सेक्टर में नई और समृद्ध तकनीकों की आवश्यकता है। इसका समाधान पोर्टेबल खेती द्वारा आंशिक रूप से किया जा सकता है। पोर्टेबल खेती न केवल खाद्य सुरक्षा को बढ़ावा देती है, बल्कि कृषि को नई दिशा देती है जिससे किसानों को अधिक उत्पादक और समृद्ध बनाने में मदद मिल सकती है।

पोर्टेबल टैरेस खेती प्रणाली

आधुनिक युग में, कृषि सेक्टर में नई तकनीकों की आवश्यकता है जो खेती को सुगम और अधिक उत्पादक बनाए। इसके साथ ही, शहरीकरण और भूमि की कमी के कारण कृषि को नई दिशा मिलने की आवश्यकता है। इस संदर्भ में, पोर्टेबल टैरेस खेती प्रणाली एक अद्वितीय और प्रभावी विकल्प हो सकती है।

पोर्टेबल खेती के प्रकार

1. **ऊर्जा संरक्षित खेती:** ऊर्जा संरक्षित खेती प्रणालियों में सोलर पैनल और उच्च गुणवत्ता वाली बैटरी का प्रयोग किया जाता है, जो खेती को अनावश्यक ऊर्जा की खपत को कम करते हैं। इस प्रकार की खेती में सोलर पम्प, सोलर उपकरण और सोलर पैनलों का प्रयोग किया जा सकता है, जो ऊर्जा बचाव में मदद करता है।

2. **हाइड्रोपोनिक्स:** हाइड्रोपोनिक्स खेती तकनीक में पानी के मृदा रहित खेती की जाती है, जो भूमि की आवश्यकता को कम करता है। इस प्रकार की खेती में पानी और पोषक तत्वों को एक रसायन के रूप में प्रदान किया जाता है, जिससे पौधों की उत्पत्ति होती है। यह तकनीक अधिक उच्च मूल्यवान उत्पादक फसलों की खेती करने में मदद करती है।
3. **एरोपोनिक्स:** एरोपोनिक्स खेती में पौधों को हवा और पोषक युक्त घोल के माध्यम से पोषित किया जाता है, जो जमीन की आवश्यकता को पूरी तरह से समाप्त करता है। इस प्रकार की खेती में पानी को सीधे पौधों की जड़ों तक पहुंचाया जाता है, जिससे पौधों की उत्पत्ति होती है।
4. **एक्वापोनिक्स:** एक्वापोनिक्स खेती में, मछली पानी को उत्पादक पानी के रूप में उपयोग किया जाता है जो पौधों को पोषित करता है। इस प्रकार की खेती में, मछलियों द्वारा उत्पन्न किया गया अमोनिया पानी में नाइट्रिफिकेशन प्रक्रिया के माध्यम से नाइट्रेट्स में परिवर्तित होता है और पौधों के लिए पोषक तत्व प्रदान करता है।
5. **जैविक खेती:** आर्गेनिक खेती में, जैविक खाद्य सामग्री और जैव उर्वरकों का प्रयोग किया जाता है, जो पौधों को पोषित करता है और प्राकृतिक तरीके से उत्पादन को बढ़ावा देता है।
6. **आवासीय खेती:** इस तकनीकी खेती को घर के अंदर, छत पर या छोटे स्थानों पर करते हैं। इसमें उच्च बागवानी, घर के प्रयोजनों के लिए बाग या सजावटी पौधे शामिल हो सकते हैं।
7. **प्रौद्योगिकी-संचालित खेती:** प्रौद्योगिकी-संचालित खेती में, संयंत्रों, सेंसरों और आधुनिक कृषि उपकरणों का उपयोग करते हैं।

पोर्टेबल खेती का महत्व

1. **अधिकतम उत्पादकता:** पोर्टेबल खेती के लिए उपयुक्त साधनों का प्रयोग करके, किसान अपने उत्पादन को बढ़ा सकते हैं। इसका उदाहरण, स्वचालित हाइड्रोपोनिक सिस्टम जैसे प्रौद्योगिकी है, जो पानी के उपयोग को कम करता है और उत्पादन को बढ़ावा देता है।
2. **स्थान की अनुकूलता:** बढ़ती जनसंख्या और शहरीकरण के कारण, खेतों का सीमांत उपयोग हो रहा है। पोर्टेबल खेती के सिस्टम को छोटे और अनियमित क्षेत्रों में लगाया जा सकता है, जिससे उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है।
3. **प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग:** पोर्टेबल खेती के लिए साधनों का उपयोग कम होता है, जिससे प्राकृतिक संसाधनों का अधिक उपयोग किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, धरती के प्रदूषण के बिना उत्पादन करने के लिए सोलर ऊर्जा का उपयोग किया जा सकता है।
4. **जल संरक्षण:** पोर्टेबल खेती में समुचित नियंत्रण और प्रबंधन के अंतर्गत, पानी का उपयोग अधिक यथार्थ होता है, जिससे पानी की बर्बादी कम होती है।
5. **समान उत्पादन:** पोर्टेबल खेती के सिस्टम में, जल, बिजली और ऊर्जा की उपयोग समान रूप से होता है, जो एक संतुलित और स्थाई उत्पादन प्रदान करता है।
6. **उत्पादकता का वृद्धि:** पोर्टेबल खेती के उपयोग से किसान अपने उत्पादन को बढ़ा सकते हैं। यह सिस्टम अधिक उत्पादकता और गुणवत्ता वाले फसलों की खेती करने की संभावना प्रदान करता है।
7. **संसाधनों का उपयोग:** पोर्टेबल खेती में साधनों का उपयोग सावधानीपूर्वक किया जाता है, जिससे प्राकृतिक संसाधनों की क्षति कम होती है। इसके साथ ही, समुदाय के साथ संयुक्त कृषि के लाभ भी होते हैं।
8. **अनुकूलता:** पोर्टेबल खेती सिस्टम छोटे और अनियमित क्षेत्रों में भी लागू किया जा सकता है, जहां बड़े खेतों की रखरखाव करना कठिन होता है।
9. **पर्यावरण संरक्षण:** पोर्टेबल खेती सिस्टम में जल, ऊर्जा और अन्य संसाधनों का उपयोग सावधानी से किया जाता है, जिससे पर्यावरण को हानि पहुंचाने वाली किसी भी गतिविधि को कम किया जा सकता है।
10. **संवेदनशीलता:** पोर्टेबल खेती सिस्टम में गुणवत्ता की निगरानी और प्रावधान के लिए उन्नत संगठन होता है, जिससे खेती में सुधार होता है और उत्पादन बढ़ाता है।

पोर्टेबल खेती हेतु उपकरण एवं तकनीक

पोर्टेबल खेती का भविष्य एक स्थाई और विकसित तकनीक है, जो कृषि के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण क्रांति ला सकती है। यह तकनीक खेती को संवेदनशीलता और पारंपरिक में परिभाषित सीमाओं से मुक्त कर सकती है। इसके कुछ उदाहरण हैं:-

1. **मोबाइल ग्रीनहाउस:** मोबाइल ग्रीनहाउस को खेत में आसानी से स्थापित और बदला जा सकता है। इसमें ऊर्जा

संचयन, स्वच्छता और स्थान का संरचन होता है, जो परम्परागत ग्रीनहाउस के तुलना में काफी बेहतर है।

2. **पोर्टेबल हाइड्रोपोनिक्स इकाई:** हाइड्रोपोनिक्स पोर्टेबल इकाई खेतों में आसानी से उपयोग किए जा सकते हैं, जिससे किसानों को बड़ी प्रमाण में उत्पादन करने में मदद मिल सकती है।
3. **सहयोगी कैबिनेट खेती:** इस तकनीक में, विभिन्न प्रकार के सहयोगी कैबिनेट प्रयोग किए जा सकते हैं, जो खेत के अलग-अलग हिस्सों के लिए उपयुक्त होते हैं। इससे खेती की प्रक्रिया को स्वच्छ, सुगम और पोर्टेबल बनाया जा सकता है।
4. **मोबाइल खेती उपकरण:** यह तकनीक खेतों में उपयोग किए जाने वाले उपकरणों को पोर्टेबल और सहज बनाती है, जिससे किसानों को अपने खेतों में उनकी आवश्यकतानुसार संशोधन करने में मदद मिलती है।
5. **पोर्टेबल जल संरक्षण और सिंचाई तकनीक:** इसमें पोर्टेबल सिंचाई तकनीक का उपयोग किया जाता है, जो जल संरक्षण को बढ़ावा देता है और किसानों को जल संचयन की अधिक सुगमता प्रदान करता है।

बढ़ती जनसंख्या और लगातार घटती जोतों का आकार चिंता का विषय है। इन चुनौतियों का सामना करते हुए पोर्टेबल खेती को अपनाना अति आवश्यक है। इस पद्धति में जल, कृषि जैसी आधुनिक प्रणालियों को अपनाया जाता है। इसमें फल, सब्जियों व खाद्य मशरूम जैसी फसलों का निरंतर उत्पादन किया जाता है। इस पद्धति से खेती करने से शहरी एवं अर्द्धशहरी विस्तारों में भौतिक एवं आर्थिक आवश्यकताओं को पूरा किया जा सकता है।

स्ट्रॉबेरी उत्पादन : एक अच्छा कृषि आय स्त्रोत

जितेन्द्र कुमार, के.के. प्रमाणिक, संतोष वाटपड़े, धर्मपाल एवं दीपक नेगी

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र, शिमला, हि.प्र.-171 004

स्ट्रॉबेरी का उत्पादन विश्व में रोमन काल से प्रारंभ हुआ। इसकी खेती शीतोष्ण, सम-शीतोष्ण, उष्णकटिबंधीय, उपोष्णकटिबंधीय और विभिन्न जलवायु परिस्थितियों से लेकर इजराइल की रेतीली भूमि के लिए भी अनुकूलित है। भारत में स्ट्रॉबेरी की खेती हिमाचल प्रदेश और उत्तराखंड के पहाड़ी इलाकों में 1960-70 के दशक में शुरु हुई थी, परंतु प्रति हैक्टेयर कम उत्पादकता, कम आमदनी, फलों का जल्दी खराब होना, अनुपयुक्त किस्मों का चयन, ज्यादा श्रम व मेहनत और उत्पादन तकनीक की जानकारी का आभाव आदि कारणों से यह ज्यादा प्रचलित नहीं हुई। विश्व में स्ट्रॉबेरी की लगभग 600 किस्मों को उगाया जाता है, जो स्वाद और रंग में एक दूसरे से बिल्कुल अलग होती है। किंतु भारत में स्ट्रॉबेरी की कुछ ही किस्मों को उगाया जाता है, जो अलग-अलग जलवायु और भूमि के हिसाब से अधिक पैदावार देती हैं। भारत के उतरी-पूर्वी राज्यों के साथ महाराष्ट्र, पंजाब, हरियाणा, उतर-प्रदेश और दिल्ली के आसपास के क्षेत्रों में किसान स्ट्रॉबेरी उत्पादन से अच्छी कमाई कर रहे हैं, परंतु स्ट्रॉबेरी की नई पौध के लिए ये गर्म इलाके के किसान पहाड़ी क्षेत्रों पर निर्भर रहते हैं। स्ट्रॉबेरी उत्पादन को अधिक मुनाफे वाली खेती के रूप में जाना जाता है। भारत में स्ट्रॉबेरी की खेती को पॉलीहॉउस, हाइड्रोपॉनिक्स और सामान्य तरह से कई तरह की भूमि और जलवायु में भी किया जा रहा है। यूरोप और उतरी अमेरिका से अधिक उत्पादकता वाली किस्मों के आयात के कारण स्ट्रॉबेरी उत्पादन और भी प्रचलित हो रहा है।

स्ट्रॉबेरी फलों में पोषक तत्व और उपयोग

स्ट्रॉबेरी एक स्वादिष्ट हल्का खट्टा मीठा फल है। यह एक मात्र ऐसा फल है, जिसके बीज फल के ऊपरी/बाह्य हिस्से पर लगे होते है। (चित्र-1.) स्ट्रॉबेरी में विटामिन सी, ए और के, एंटीऑक्सिडेंट एवं खनिज पदार्थों की अच्छी मात्रा पाई जाती है। फलों के ताजे उपयोग के अलावा स्ट्रॉबेरी के फलों से तमाम प्रसंस्कृत उत्पाद (जैम, चटकी, आइसक्रीम, केक, टाफी, शीतल पेय आदि।) बनाए जाते हैं।

चित्र-1. स्ट्रॉबेरी का फलयुक्त पौधा

मृदा एवं जलवायु

स्ट्रॉबेरी के पौधे सर्दियों की जमावदार ठंड और वसंत ऋतु की ठंड से ज्यादा प्रभावित होते हैं। लंबी फूलन अवधि के कारण वसंत ऋतु की ठंड से स्ट्रॉबेरी के पौधों को ज्यादा नुकसान होता है। इसलिए ज्यादा ठंड वाली जगह का चयन नहीं करना चाहिए। स्ट्रॉबेरी की खेती किसी भी उपजाऊ मिट्टी में की जा सकती है। किंतु बलुई दोमट मिट्टी में स्ट्रॉबेरी का उत्पादन अधिक मात्रा में

होता है। इसकी खेती में भूमि का पी.एच. मान 5.5 से 6.5 के मध्य होना चाहिए। स्ट्रॉबेरी का पौधा ठंडी जलवायु में होता है। किंतु मैदानी क्षेत्रों में भी इसकी फसल आसानी से तैयार की जा सकती है। इसके पौधों के अच्छे विकास के लिए 20 से 30 डिग्री तापमान की आवश्यकता होती है, तथा अधिक तापमान होने पर पौधों का विकास है। गमले में भी स्ट्रॉबेरी उगाने से अच्छे फल लगते हैं।

स्ट्रॉबेरी की कुछ उन्नत किस्में

किसान बागवान स्ट्रॉबेरी की खेती किस्मानुसार कर अधिक लाभ कमाते हैं। भारत में स्ट्रॉबेरी की कुछ ही उन्नत किस्मों को उगाया जा रहा है, जिन्हे अलग-अलग क्षेत्रों के हिसाब से अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए तैयार किया गया है। कुछ उन्नत किस्में जैसे विंटर स्टार, कैपरी, नाबिला, विंटर डाउन, ब्लैक मोर, सिसकेफ़, फेयर फाक्स, ओफ्रा, केमारोसा, एलिस्ता, स्वीट चार्ली, चांडलर आदि बहुत प्रचलित हैं। भारत में सबसे पहले आयातित किस्मों में से प्रमुख टीओगा, टोर्रे, शास्ता, रेड कोट, और एन.आर. राउंड हेड आदि थी। बाद में और भी बड़े फलों वाली किस्मों जैसे डगलस, कॉनफिटुरा, गोरेला, पजारो, फ़र्न, ऐेदी, सेल्वा, ब्रिग्टन, बेलरुबी, दाना और एटना आदि प्रजातियों को आयातित किया गया। इन किस्मों के फल का औसतन वजन 7 से 35 ग्राम तक था। भारतीयों के लिए कम मीठी होने के कारण ये प्रजातियां ज्यादा प्रचलित नहीं हुई।

पौध रोपण

स्ट्रॉबेरी के पौधों की रोपाई पौधे से पौधे की 15-30 सेमी. और लाइनों में 30-45 सेमी. की दूरी पर की जाती है। इसके लिए खेत में जमीन से उठी 3-6 इंच की क्यारियां तैयार की जाती है। पहाड़ी ढ़लानों में स्ट्रॉबेरी के 10 पौधों को 150x 60 सेमी. के क्षेत्र में लगाया जाता है। गोबर की खाद 5 किलोग्राम प्रति क्यारी (20 टन/हे०) और एन. पी. के. की 2:2:1 की मात्रा को अनुमोदित किया गया है। इसके पश्चात् टपक सिंचाई की पाइपलाइन को बिछा दिया जाता है। पौध रोपाई के लिए 10 सितंबर से 15 अक्टूबर के मध्य तक का समय अच्छा होता है। तथा तापमान अधिक होने पर पौधों को अक्टूबर के अंत तक भी लगाया जा सकता है।

स्ट्रॉबेरी के पौधों की सिंचाई

स्ट्रॉबेरी के पौधों की सिंचाई टपक या फव्वारा विधि द्वारा की जाती है, इससे पौधों को पर्याप्त मात्रा में पानी प्राप्त हो जाता है। स्ट्रॉबेरी के खेत में नमी बनाए रखने के लिए जरूरत के अनुसार सिंचाई करते रहना चाहिए। इसका फलों के आकार व स्वाद पर भी फर्क पड़ता है। पौधों को घास-पात या काली पॉलिथीन शीट से ढ़कने पर मिट्टी में नमी बनी रहती है और खरपतवार भी नियंत्रित रहते हैं।

उपज एवं फल तोड़ाई

स्ट्रॉबेरी की अलग-अलग किस्मों से भिन्न-भिन्न पैदावार प्राप्त होती है। सामान्य तौर पर इसके एक पौधे से 200 से 900 ग्राम तक फल प्राप्त हो जाते हैं, जिससे किसानों को एक एकड़ के खेत से 80 से 100 क्विंटल का उत्पादन प्राप्त हो जाता है। स्ट्रॉबेरी का बाज़ारी भाव 300 से 600 रूपए प्रति किलो तक होता है। पौध रोपण के दूसरे व तीसरे साल में सबसे ज्यादा पैदावार होती है और उसके बाद फल के आकार और पैदावार में गिरावट आ जाती है। इसलिए तीन साल के बाद पौध रोपण दोबारा कर लेना चाहिए। फलों को सड़ने व फफूंद से बचाने के लिए क्यारियों में घास या पॉलिथीन शीट बिछा देनी चाहिए। स्ट्रॉबेरी के पौधों पर

लगे फल का रंग जब 70 लाल दिखाई देने लगें, उस दौरान फलों की तुड़ाई कर ली जाती है। इसके फलों की तुड़ाई अलग-अलग दिनों और छोटी-छोटी टोकरियों में की जाती है, ताकि फल खराब न हो। फलों की तुड़ाई के समय उन्हें कुछ दूरी पर डंडी के साथ तोड़ना होता है ताकि फलों में हाथ न लगे। इसके बाद फलों की पैकिंग हवादार गतों व प्लास्टिक के पुनेट में किया जाता है।

रोग व कीट प्रबंधन

स्ट्रॉबेरी के पौधों पर भी कई तरह के रोग व कीट देखने को मिल जाते हैं। यदि इन रोगो की रोकथाम समय पर नहीं की जाती है, तो पैदावार पर में प्रतिकूल प्रभाव देखने को मिलता है। पौधों पर लगने वाले कीटों में विविल्स, झरबेरी, रस भृग, मक्खियां चेफर, पतंगे, सूत्रकृमी आदि प्रमुख हैं। सूत्रकृमी की समस्या के समाधान के लिए फसल चक्र प्रणाली को अपनाना चाहिए। तीन वर्ष बाद स्ट्रॉबेरी के खेतों में एक साल के लिए सरसों, मक्की, राई व ओट आदि फसलों को उगाना चाहिए। संक्रमित स्ट्रॉबेरी के पौधों को नष्ट कर देना चाहिए। ग्रे मोल्ड, वेर्टिसिलियम विल्ट और रेडकोर आदि स्ट्रॉबेरी की प्रमुख बीमारियां हैं। कॉपर ओक्स्सीक्लोराइड की स्प्रे ग्रे मोल्ड की रोकथाम के लिए सहायक है और 1% बोर्डो मिक्सचर में पौधे लगाने से पहले डुबोना मिट्टी जनित रोगों के रोकथाम में सहायक होता है। इन रोगो से पौधों को बचाने के लिए अनेक प्रकार के उपचार किए जाते है, इसमें जड़ रोग के लिए नीम की खली को पौधों की जड़ो में डाला जाता है। पत्ती रोग में पत्ती ब्लाइट, पत्ता स्पॉट और खस्ता फफूंदी आदि का प्रकोप देखने को मिलता है। किसान भाई रोग की पहचान कर अनुमोदित फफूंदनाशक व कीटनाशक दवाइयों का छिड़काव पौधों पर अवश्य करें।

कृत्रिम बीज (आर्टिफिशियल सीड) उत्पादन तकनीक

चन्दू सिंह[1] एवं रणबीर सिंह[2]

[1]बीज उत्पादन इकाई एवं [2]सस्यविज्ञान संभाग,
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली-110 012

ऐसा बीज जो कृत्रिम रूप से संपुटित दैहिक भ्रूण (आमतौर पर) या अन्य वानस्पतिक भाग जैसे; प्ररोह कलिकाएं, कोशिका समुच्चय, सहायक कलियां या कोई अन्य सूक्ष्म प्रवर्धन होते हैं, जिन्हें बीज के रूप में बोया जा सकता है और इन्हें इनविट्रो स्थितियों में पौधे में परिवर्तित किया जा सकता है। एक उन्नत कृत्रिम बीज उत्पादन तकनीक को कई व्यावसायिक रूप से महत्वपूर्ण फसलों में प्रसार की एक मूल्यवान वैकल्पिक तकनीक और विशिष्ट पौधों के जीनोटाइप के बड़े पैमाने पर प्रसार के लिए एक महत्वपूर्ण विधि माना जाता है। ऊतक संवर्धन द्वारा उत्पन्न किए गए और कृत्रिम बीजों के रूप में वितरित पौधों के क्लोन का उत्पादन विभिन्न पौधों की फसलों के लिए महंगे थे। F_1 संकरों का एक उपयोगी विकल्प हो सकता है। कृत्रिम बीजों की डिलीवरी इनविट्रो मीडिया को बढ़ाने और पूर्व इनविट्रो स्थितियों के अनुकूलन के लिए कई तरीकों को अपनाने जैसे तथ्यों को भी सुविधाजनक बनाती है। कृत्रिम बीज तकनीक का विकास पेड़ों और फसलों जैसी विभिन्न पौधों की प्रजातियों के सुधार के लिए एक उत्तम तकनीक भी प्रदान करता है।

मानव जीवन में आधुनिकता की प्रेरणा से उत्पन्न होने वाली नई और संशोधित तकनीक उपयोग के लिए एक उत्कृष्ट रूप से सुरक्षित और सही रास्ता है-वह है, "कृत्रिम बीज" या "आर्टिफिशियल सीड" का आविष्कार। यह आाधुनिक युग की नई शुरुआत को दर्शाता है, जो मानव समाज को तीव्र वर्धन, सुरक्षा और समृद्धि की ऊँचाइयों तक पहुंचाने का संकेत करता है।

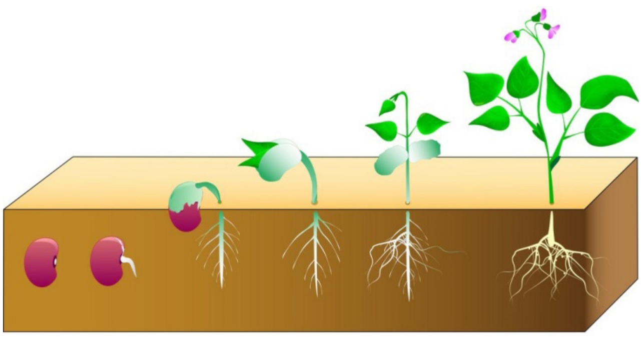

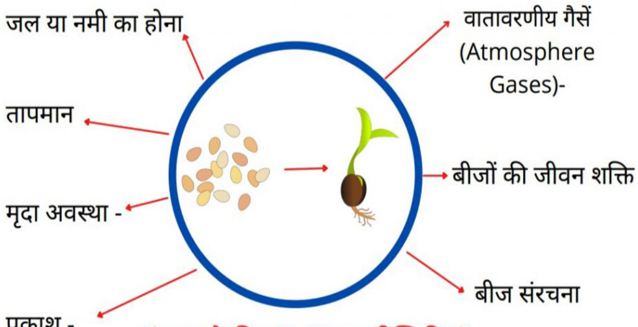

अंकुरण के लिए आवश्यक परिस्थितियां

''कृत्रिम बीज'' का आविष्कार विभिन्न क्षेत्रों में लाभप्रद हो सकता है, जैसे कि कृषि, उद्योग और विज्ञान। इससे नए प्रकार के पौधों और पौध पोषण की विकसित संभावनाएं खुल जाती हैं, जिससे खाद्य सुरक्षा में सुधार हो सकता है। इस तकनीक का उपयोग करके हम विभिन्न भौगोलिक प्रदेशों में उच्च गुणवत्ता वाले फसलों को उत्पन्न कर सकते हैं, जो सुनिश्चित करेगा कि भविष्य में होने वाली जनसंख्या वृद्धि का सामना किया जा सके।

कृत्रिम बीज का अन्वेषण उद्योगों में भी एक महत्वपूर्ण बदलाव ला सकता है। इसके माध्यम से नए और अच्छे उत्पादों का निर्माण किया जा सकता है, जो बेहतर परिणाम और कम सावधानी वाले प्रक्रियाओं के साथ संभावनाओं का दरवाजा खोल सकता है। इससे उद्योगों को उच्च गुणवत्ता और उत्पादकता की दिशा में एक नया मानक स्थापित करने का संभावना है। इस नई तकनीक का सबसे महत्वपूर्ण उपयोग विज्ञान में हो सकता है। कृत्रिम बीज के माध्यम से नए और उन्नत साधनों की खोज की जा सकती है, जो चिकित्सा, ऊर्जा और जल संबंधित क्षेत्रों में महत्वपूर्ण योगदान कर सकते हैं। इससे साधन बनाने की क्षमता भी बढ़ सकती है, जिससे मानवता की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए समृद्ध बनाए रखा जा सकता है।

कृत्रिम बीज का इतिहास

1. कृत्रिम बीज पहली बार 1970 के दशक में पौधों के बीजों के

एक नए एनालॉग के रूप में पेश किए गए थे।

2. खेती के लिए सिथेंटिक किस्मों के उपयोग का सुझाव सबसे पहले मक्का में दिया गया था।
3. किट्टो और जेनिक 1982 द्वारा उत्पादित गाजर के पहले सिंथेटिक बीज में कई दैहिक भ्रूण शामिल थे।
4. 1984 में रेडेनबॉघ एवं अन्य अल्फाल्फा के एकल हाइड्रेटेड एसई के एनकैप्सुलेशन के लिए एक तकनीक विकसित की।

कृत्रिम बीज अर्थ

कृत्रिम बीजों में जीवित बीज जैसी संरचना होती है, जो प्रायोगिक रूप से एक ऐसी तकनीक द्वारा बनाई जाती है, जहां पौधे ऊतक संवर्धन से प्राप्त दैहिक भ्रूण हाइड्रोजेल द्वारा संपुटित किया जाता हैं और ऐसे संपुटित भ्रूण मृदा में उगाए जाने पर असली बीज की तरह व्यवहार करते हैं और उनका प्राकृतिक बीजों के विकल्प के रूप में उपयोग किया जा सकता हैं।

कृत्रिम बीज की अवधारणा

कृत्रिम बीजों की परिभाषा दैहिक भ्रूण और युग्मनज भ्रूण के शरीर विज्ञान, आकृति विज्ञान और जैव रसायन में समानता पर निर्भर करती है। कुछ पौधों की प्रजातियों में दैहिक भ्रूणजनन के प्रति आदर्श को ध्यान में रखते हुए, कृत्रिम बीजों की अवधारणा को बाद में इनविट्रो-व्युत्पन्न प्रवर्धन की एक श्रृंखला के एनकैप्सुलेशन के रूप में विस्तारित किया गया था। कृत्रिम बीजों की परिभाषा को तब कृत्रिम रूप से लेपित दैहिक भ्रूण (आमतौर पर) या अन्य वानस्पतिक भागों जैसे; शूट बड्स, सेल एग्रीगेट्स, सहायक बड्स या किसी अन्य सूक्ष्मप्रवर्धन तक विस्तारित किया गया था, बशर्ते कि उनमें बीज के रूप में बोए जाने की क्षमता हो और इनविट्रो या एक्स विट्रो परिस्थितियों में एक पौधे में परिवर्तित हो जाता है। उन्हें इस क्षमता को विस्तारित अवधि (भंडारण क्षमता), तक बनाए रखने में भी सक्षम होना चाहिए। इसलिए, कृत्रिम बीज सूक्ष्मप्रवर्धन में आवश्यक अनुकूलन चरणों को समाप्त कर सकते हैं और प्रजनकों को अधिक सुविधा दे सकते हैं। तब से कृत्रिम बीज उत्पादन के लिए विभिन्न पौधों की सामग्रियों का उपयोग किया गया है जिनमें दैहिक भ्रूण शूट टिप, सहायक कलियां, नोडल सेगमेंट, प्रोटोकॉर्म-जैसे निकाय (पीएलबी), माइक्रोशूट और भ्रूणजन्य कॉलस शामिल हैं। कई अध्ययनों ने सब्जियों, फलों, चिकित्सा पौधों, सजावटी पौधों, वन वृक्षों, ऑर्किड और अनाज सहित विभिन्न पौधों की प्रजातियों के साथ काम करते हुए कृत्रिम बीजों के उत्पादन की जांच की है।

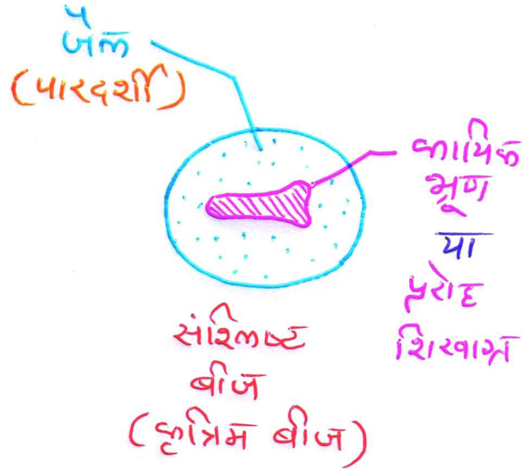

चित्र: कृत्रिम बीज उत्पादन विधि

कृत्रिम बीज संकल्पना

कृत्रिम बीज की संरचना पारंपरिक बीज की प्रतिरूप होती है। इसमें एक्सप्लांट सामग्री दोनों शामिल हैं, जो पारंपरिक बीज में जाइगोटिक भ्रूण की नकल करती है और कैप्सूल (जेल एजेंट और अतिरिक्त सामग्री जैसेः पोषक तत्व, विकास नियामक, एंटी-पैथोजेन, जैव-नियंत्रक और जैव उर्वरक), जो अनुकरण करती है।

कृत्रिम बीज प्रौद्योगिकी

यह तकनीक पादप ऊतक संवर्धन का एक महत्वपूर्ण अनुप्रयोग है। वैज्ञानिक अनुसंधान में कई विकासों ने सिद्ध हुआ है कि अब हम विभिन्न पौधों की सामग्रियों का उपयोग करके कृत्रिम बीज विकसित कर सकते हैं। ज्यादातर मामलों में, ये बीज काम करते हैं और असली बीजों की तरह दिखते भी हैं। विभिन्न पादप ऊतक संवर्धन विधियों में, दैहिक भ्रूणजनन एक लोकप्रिय विधि है जहां आप पौधे की किसी भी दैहिक कोशिका से भ्रूण बना सकते हैं। इससे कृत्रिम बीजों की माँग में वृद्धि हुई और कृत्रिम बीज प्रौद्योगिकी विकसित की गई।

कृत्रिम बीज की आवश्यकता

आनुवंशिक एकरूपता और फसलों की किस्मों को बनाए रखने के लिए सिंथेटिक बीजों का उपयोग किया जा सकता है। सिंथेटिक बीज प्रौद्योगिकी का उपयोग उन्नत खाद्य फसल किस्मों का उत्पादन करने और पर्यावरण के अनुकूल वृक्षारोपण करने के लिए किया जा सकता है।

एक्सप्लांट का चयन

↓

एक्सप्लांट तैयार करना और उपयुक्त माध्यम में उनका संवर्धन करना

↓

कैलस इंजैक्शन एवं गुणन

↓

कैलश परिपक्वता और दैहिक भ्रूणजनन

↓

दैहिक भ्रूण

↓

दैहिक भ्रूण पर कैल्सियम/सोडियम आक्जीनेट का लेपन

↓

कृत्रिम बीज

↓

कृत्रिम बीज का भंडारण/सीधे खेत में बुआई

चित्र: कृत्रिम बीज उत्पादन तकनीक का आरेख

कृत्रिम बीज उत्पादन की विधि

शुष्क कृत्रिम बीज (डेसीकेटेड विधि)

किटो और जैनिक (1982) ने पहली बार कृत्रिम बीजों के उत्पादन में गाजर के दैहिक भ्रूणों का उपयोग किया था, जिसके बाद उनको निर्जलीकृत किया। इस विधि में दैहिक भ्रूणों को पहले जलशुष्कन का सामने करने के लिए कठोर किया जाता है और फिर कृत्रिम बीज उपयुक्त लेप सामग्री में जलशुष्कन से बचाने के लिए इनकैप्सूलेट किया जाता है। निर्जलीकृत कृत्रिम बीज दैहिक भ्रूण से या तो नग्न या पॉली ऑक्सीएथिलीन ग्लाइकॉल में इनकैसुलेट कर उसके बाद निर्जलीकृत करके उत्पादित किया जाता है। कृत्रिम बीजों को बिना सील किए पेट्री डिश में रात भर सूखने के लिए छोड़ दिया जाता है, जिससे धीरे-धीरे सापेक्ष आर्द्रता को कम करने की अधिक नियंत्रित अवधि में उपयोग किया जा सके। इस प्रकार के कृत्रिम बीज केवल उन्हीं पौधों में बनाए जा सकते हैं, जिनके दैहिक भ्रूण शुष्कन-सहिष्णु होते हैं। परिपक्वता माध्यम की उच्च आस्माटिक क्षमता का उपयोग करके दैहिक भ्रूण की शुष्कन सहनशीलता को प्रेरित किया जा सकता है। उच्च जेल शक्तित का उपयोग करके या मैनिटोल, सुक्रोज इत्यादि जैसे पारगम्य विसरण पदार्थों को जोड़कर क्षमता को बढ़ाया जा सकता है। पोषक तत्वों की कमी या कम तापमान जैसे उप-घातक तनावों को प्रयोग करके भी शुष्कता को प्रेरित किया जा सकता है, क्योंकि इन उपचारों का शुष्कन सहनशीलता पर समान प्रभाव होने की सूचना मिली है।

जलयोजित कृत्रिम बीज

रेडेनबर्च एवं सहकर्मियों (1984) ने अल्फाल्फा के अलग-अलग दैहिक भ्रूणों को हाइड्रोजेल इनकैप्युलेशन के लिए एक तकनीक विकसित की। तब से हाइड्रोजेल में इनकैप्सुलेशन कृत्रिम बीज उत्पादन का सबसे अधिक प्रयोग किया जाने वाला तरीका है। हाइड्रोजेल कैप्सूल में दैहिक भ्रूणों को समाहित करके हाइड्रेटेड कृत्रिम बीज का उत्पादन किया जा सकता है। यह विधि उन पौधों की प्रजातियों में किया जाता है, जिनके दैहिक भ्रूण जलशुष्कन के जो प्रति संवेदनशील होते हैं। कैल्शियम एल्गिनेट सबसे उपयुक्त हाइड्रोजेल है।

कृत्रिम बीज बनाने की विधि: कृत्रिम बीज बनाने के चरण

- ➢ कैलस कल्चर की स्थापना
- ➢ कैलस कल्चर में दैहिक भ्रूण जनन का संकेत
- ➢ दैहिक भ्रूण की परिपक्वता
- ➢ दैहिक भ्रूणों का एनकैप्सुलेशन

इन्कैप्सुलेशन के बाद, कृत्रिम बीजों का परीक्षण दो चरणों द्वारा किया जाता है

(1) भ्रूण के पौधे के रूपांतरण के लिए परीक्षण

(2) ग्रीन-हाउस और रोपण।

सारणीः कृत्रिम बीजों के लिए उपयुक्त प्रजनक

क्र. सं.	प्रजनक	फसल
1.	शूट टिप्स/प्ररोह शिरा	खजूर, केला, इलाइची, सेब
2.	दैहिक भ्रूण	अल्फान्फा, गाजर, आम, खजूर, ब्रैसिका, सलाद, पपीता
3.	सहायक एवं एडवेनटीसीयस कलिया	नींबू वर्ग, अनन्नास, अंगूर

कृत्रिम बीजों का महत्व

कृत्रिम बीजों का संभावित महत्व कम या ज्यादा दैहिक भ्रूण जनन के समान है, फिर भी इसके कुछ व्यावहारिक अनुप्रयोग हैं:-

1. जटिल यौन प्रजनन की प्रक्रिया द्वारा प्रजनन चरण के अंत में पौधे में सच्चे बीजों का उत्पादन किया जाता है। प्रजनन चरण को प्राप्त करने में एक पौधे को लंबा या कम समय लग सकता है। इसलिए हमें बीज प्राप्त करने के लिए एक पौधे के प्रजनन चरण के अंत तक प्रतिरक्षा करनी होगी। लेकिन कृत्रिम बीज कम से कम एक महीने के भीतर उपलब्ध होते हैं। किसी को भी लम्बे समय तक प्रतिक्षा नहीं करनी पड़ती है।
2. पौधे फूल धारण करते हैं और एक वर्ष के विशेष मौसम में बीज उत्पन्न करते हैं। लेकिन कृत्रिम बीज का उत्पादन समय या मौसम पर निर्भर नहीं है। किसी भी समय या मौसम में, किसी को पौधे के कृत्रिम बीज मिल सकते हैं।
3. कभी-कभी, कुछ पौधों पर उनके बीजों की लंबी अवधि की उपस्थिति के कारण काम में देरी होती है। कृत्रिम बीजों को उगाने से यह अवधि कम हो सकती है। कृत्रिम बीजों के प्रयोग से पौधे के जीवन चक्र को छोटा किया जा सकता है।
4. दैहिक भ्रूण जनन को आज तक बहुत सी प्रजातियों में देखा गया है, जो यह दर्शाता है कि लगभग किसी भी वांछित फसल में कृत्रिम बीजों का उत्पादन संभव है। कुछ फसलों में सफल परिणाम पहले ही प्राप्त हो चुके हैं जैसे कि एपियम ग्रेवोलेंस डूसस कैरोटा, मक्का, लैक्टुका सैटक्सवा, मेडिकैगो सैटिवा, सरसों वंश. अमेरिकन कपास आदि।
5. कृत्रिम बीज बड़े पैमाने पर मोनोकल्चर के साथ-साथ मिश्रित-जीनोटाइप वृक्षारोपण के लिए प्रयोग होंगे।
6. कृत्रिम बीज में पौधों के पोषक तत्वों और विकास नियंत्रण एजेंटों और सटीक प्लेसमेंट के लिए कीटनाशकों को बढ़ावा देने की क्षमता है।
7. कृत्रिम बीज एंडोस्पर्म और सीड कोट बनाने की भूमिका का अध्ययन करने में मदद करते हैं।

कृत्रिम बीजों के उपयोग

1. कृत्रिम बीजों का उत्पादन पूरे वर्ष किया जा सकता है।
2. विषाणु और रोग मुक्त पौधों का उत्पादन करना।
3. आनुवंशिक रूप से प्रयोगशाला में उत्पादित पौधों का प्रवर्धन करना जो प्राकृतिक रूप प्रजनन के दौरान बांस और अस्थिर हो जाते हैं।
4. गुणन में उच्च दक्षता रखना।
5. आनुवंशिक एकरूपता के साथ वाछंनीय प्रजाति का प्रवर्धन करना।
6. प्रवर्धन के लिए खाद्य बीज की आवश्यकता का निवारण करना।
7. ऊतक सवंर्धित पौधों को सीधे खेत में पहुंचाना।
8. जननद्रव्य का संरक्षण और आदान-प्रदान में सुविधा प्रदान करना।
9. कृत्रिम बीजों से लुप्त होते पौधों की प्रजातियों की सुरक्षा की जा सकती है।

सिंथेटिक बीजों के उत्पादन में चुनौतियां

1. अधिकांश पौधों की प्रजातियों में दैहिक भ्रूणों की जीवित रहने की दर कम होती है, जो सिंथेटिक बीजों के मूल्य को भी सीमित करती है।
2. पादप ऊतक संवर्धन विधियों का उपयोग करके विभिन्न पादप भागों से प्रोपेग्यूल्स का उत्पादन करने के लिए अधिक प्रोटोकॉल उपलब्ध नहीं हैं। इसलिए कृत्रिम बीज उत्पादन के लिए कम उपयोगी सामग्री उपलब्ध है।
3. कुछ मामलों में, दैहिक भ्रूणों की अकुशल परिपक्वता के कारण अंकुरण खराब होता है और इसलिए वृद्धि और विकास खराब होता है।
4. वैज्ञानिकों के अनुसार, कुछ पौधों की प्रजातियों के दैहिक भ्रूण कैप्सूल या कोटिंग से बाहर निकलने में सक्षम नहीं होते हैं। अतः ये तेजी से सामान्य पौधे नहीं बना पाते।

5. सिंथेटिक बीजों के उत्पादन के लिए कोटिंग सामग्री की सांद्रता भी एक सीमित कारक है। इसमें अंकुरण और वृद्धि को सुविधाजनक बनाने के लिए पोषक तत्व पूरक सामग्री होनी चाहिए।
6. जब सिंथेटिक बीजों का आकार कृषि मशीनरी से मेल नहीं खाता है, तो उन्हें रोपाई के लिए उपयोग करना कठिन होता है। इसलिए, बीज प्रत्यारोपण योग्य होना चाहिए।
7. इन बीजों की एक बड़ी समस्या कैप्सूल का जल्दी सूखना है। आपको उन्हें आर्द्र वातावरण में संग्रहित करना होगा और सूखने से बचाने के लिए उन पर हाइड्रोफोबिक सामग्री का लेप लगाना होगा।

कृत्रिम बीजों का अनुप्रयोग आशाजनक है। ऐसे बीजों के उत्पादन के लिए, विशेषकर महत्वपूर्ण फसलों के लिए, दुनिया भर में गहन अनुसंधान और विकास चल रहा है। इन्हें बिना किसी संगरोध दायित्व के एक देश से दूसरे देश में आसानी से ले जाया जा सकता है। इसलिए, ये बीज निश्चित रूप से आने वाले वर्षों में वैश्विक खाद्य उत्पादन को बढ़ाने का एक अभिनव तरीका हो सकता है।

विविधा...

मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विज्ञान संभाग : परिचय एवं उपलब्धियां

इन्दु चोपड़ा, विनोद कुमार शर्मा एवं देबाशीष मंडल

मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विज्ञान संभाग
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110 012

फिप्स प्रयोगशाला : मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विज्ञान संभाग

परिचय

मृदा विज्ञान और कृषि रसायन विज्ञान संभाग का इतिहास भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के दिल्ली में स्थापना जितना ही पुराना है। इस संभाग का अस्तित्व इंपीरियल एग्रीकल्चरल केमिस्ट की अध्यक्षता वाले रासायनिक अनुभाग से जुड़ा हुआ है जो वर्ष 1905 में पूसा बिहार की फिप्स प्रयोगशाला में स्थित इंपीरियल एग्रीकल्चरल रिसर्च इंस्टीट्यूट की स्थापना के साथ ही आया था जिसका नाम अमेरिकी समाजसेवी श्री हेनरी फिप्स के नाम पर रखा गया था। वर्ष 1934 में बिहार में भीषण भूकंप के कारण इंपीरियल इंस्टीट्यूट को नई दिल्ली में स्थानांतरित कर दिया गया था जहां रासायनिक संभाग की इमारत बनाई गई जिसे फ़िप्स प्रयोगशाला का नाम दिया गया। साथ ही यह जानकारी भी अत्यंत रोचक है कि स्वाधीनता से पहले रासायनिक संभाग के रसायनज्ञ ही संस्थान के निदेशक नियुक्त होते थे। सन् 1947 में देश की स्वाधीनता के साथ रासायनिक संभाग का नाम बदलकर मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विज्ञान संभाग कर दिया गया। डॉ. जे.डब्ल्यू. लेदर को पहले इंपीरियल कृषि रसायनज्ञ (अब मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विज्ञान संभाग, अध्यक्ष) के रूप में नामित किया गया था। इसके बाद कृषि विज्ञान के इस विशेष क्षेत्र को उच्च वैज्ञानिक उपलब्धियों वाली कई प्रसिद्ध हस्तियों ने संभागाध्यक्ष का कार्यभार संभालते हुए इसे निरंतर ऊंचाइयों पर पहुंचाया और यह संभाग आज भी इस क्रम को लगातार बनाए रखने हेतु कार्यरत है।

मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विज्ञान संभाग के अधिदेश

मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विज्ञान संभाग का मुख्य उद्देश्य पर्यावरण-अनुकूलतानुसार मृदा का सतत उपयोग करते हुए कृषि उत्पादन बढ़ाना है। इस दिशा में कार्यरत संभाग के निम्नलिखित अधिदेश हैं:

(1) मौलिक और व्यावहारिक पहलुओं पर अनुसंधान

❖ मृदा में भौतिक, रसायनिक और जैविक गुण।

- ❖ उर्वरक व खाद तथा मृदा व पौधे के साथ उनकी परस्पर क्रिया।
- ❖ निरंतर अधिकतम कृषि उत्पादन के लिए मृदा का रख-रखाव और मृदा उर्वरता में सुधार।
- ❖ ईंधन के रूप में बायो गैस का उत्पादन तथा खाद के रूप में कार्बनिक अवशेषों (अपशिष्ट) का उपयोग।
- ❖ मृदा परीक्षण फसल प्रतिक्रिया सहसंबंध अध्ययन।

(2) स्नातक एवं स्नातकोत्तर शिक्षण व अन्य मानव संसाधन विकास संबंधी गतिविधियां

- ❖ संभागीय संकाय स्नातक एवं स्नातकोत्तर शिक्षण के क्षेत्र में निरंतर कार्यरत है जिसके अंतर्गत थ्योरी कक्षाओं के साथ ही प्रयोगशाला में प्रैक्टिकल भी करवाया जाता है जिससे छात्रों में कौशल विकसित किया जा सके। इसके अलावा संभाग में समय-समय पर मानव संसाधन विकास हेतु ट्रेनिंग भी कराई जाती हैं जिससे रोज़गार सृजन के अवसर पैदा हो सकें।

(3) मृदा परीक्षण के आधार पर किसानों को उर्वरक प्रयोग की सलाह

- ❖ मृदा परीक्षण के उपरांत किसानों एवं उद्यमियों को फसल एवं क्षेत्रों के अनुसार मृदा सुधारकों के साथ सही उर्वरक मात्रा के उपयोग की सलाह दी जाती है जिससे वे उच्च गुणवत्ता वाले उत्पाद के साथ अधिक उत्पादन प्राप्त कर सकें। इसके साथ ही किसानों को समस्याग्रस्त मृदाओं का सुधार करने के लिए उपयुक्त सिफारिशें भी दी जाती हैं।

अनुसंधान गतिविधियां

संभाग द्वारा मौलिक और समसामयिक विषयों पर अनुसंधान निरंतर जारी है। वर्तमान समय में चल रहे कार्यों का संक्षिप्त विवरण निम्नवत है:

उपलब्धियां

इस संभाग ने मृदा विज्ञान और कृषि रसायन विज्ञान के विभिन्न पहलुओं से संबंधित क्षेत्रों में सैद्धांतिक और व्यावहारिक कार्यों में उत्कृष्ट योगदान दिया है।

संभाग द्वारा दिए गए ऐतिहासिक योगदान/अवधारणाएं निम्नवत हैं:

- ➢ मिट्टी में उपलब्ध फॉस्फोरस के निष्कर्षक के रूप में पोटेशियम कार्बोनेट

- ➢ भारत का पहला मृदा मानचित्र
- ➢ पहला गोबर गैस प्लांट
- ➢ मृदा उपलब्ध नाइट्रोजन की क्षारीय परमैंगनेट विधि
- ➢ भारत का पहला मृदा उर्वरता (एन, पी और के) मानचित्र
- ➢ देश की पहली मृदा परीक्षण प्रयोगशाला
- ➢ पादप पोषण अध्ययन में रेडियो ट्रेसर के उपयोग पर देश की पहली प्रयोगशाला।
- ➢ संतुलित फॉस्फेट क्षमता और पोटेशियम सोखने का अनुपात।
- ➢ उर्वरक अनुशंसा की लक्षित उपज अवधारणा
- ➢ पौधों के पोषण में गैर-विनिमय योग्य पोटेशियम का योगदान
- ➢ फसल प्रणालियों में उर्वरक फॉस्फोरस का चरणबद्ध उपयोग
- ➢ नाइट्रीकरण अवरोधक के रूप में लेपित कैल्शियम कार्बाइड
- ➢ महत्वपूर्ण सीमाओं के लिए गैर-रेखीय प्रतिगमन तकनीक
- ➢ चावल-गेहूं फसल प्रणाली में वीएएम की स्थापना।
- ➢ कोलोरिमेट्री के साथ उपयुक्त प्रथम मृदा बोरॉन अंशीकरण योजना
- ➢ पूसा सॉयल टेस्ट फर्टिलाइजर रिकमेंडेशन(एसटीएफआर) मीटर

वर्तमान उपलब्धियां

अनुसंधान क्षेत्र

- ➢ संस्थान द्वारा विकसित किए गए पूसा मृदा परीक्षण एवं उर्वरक अनुशंसा (पूसा एसटीएफआर) मीटर ने मृदा परीक्षण को किसानों के दरवाजे तक पहुंचा दिया है। वर्ष 2023-24 में तीन कंपनियों को मिलाकर अब तक 17 फर्में इसका लाइसेंस ले चुकी हैं जिस से 1 करोड़ रुपए से ज्यादा का कुल राजस्व प्राप्त हुआ। पूसा एसटीएफआर मीटर के महत्व

को स्वीकार करते हुए शिक्षा मंत्रालय और कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार के संयुक्त प्रयास से 2024 में केंद्रीय विद्यालयों तथा नवोदय विद्यालयों में शिक्षकों तथा 12वीं कक्षा के विद्यार्थियों के प्रशिक्षण के साथ 1000 पूसा एसटीएफआर मीटर उपलब्ध कराए गए। इसके अलावा वर्तमान में पूसा एसटीएफआर मीटर की करीब 500 इकाइयां देश भर के उर्वरक उद्योगों और गैर सरकारी संगठनों में उपयोग में हैं।

- हाल ही में संभाग ने उपलब्ध पोटेशियम निर्धारण के लिए एक नया मृदा-नमी-असंवेदनशील निष्कर्षक विकसित किया है
- संभाग ने वर्ष 2023-24 में मिट्टी और जल परीक्षण सेवाएं प्रदान करके 1.33 करोड़ रुपए की राशि अर्जित की है।
- इसके साथ ही संभाग द्वारा संरक्षित खेती में एनपीके प्रबंधन के लिए प्रोटोकॉल, पोटेशियम के लिए जैव-खनिज उर्वरक फॉर्मूलेशन और मिट्टी के मापदंडों को जांचने के लिए आर-सॉफ्टवेयर पैकेज विकसित किए गए

शिक्षण क्षेत्र

- बीएसएमए के दिशानिर्देशों के अनुसार शुरू किया गया शिक्षण सहायता कार्यक्रम प्रभावी रूप से चलाया जा रहा है
- संभाग में "मृदा परीक्षण और पोषक तत्व प्रबंधन" विषय पर संस्थान का पहला स्नातकोत्तर डिप्लोमा पाठ्यक्रम शुरू किया गया
- एएनएएसटीयू-आईएआरआई के संयुक्त डिग्री कार्यक्रम के तहत मृदा विज्ञान और जल प्रौद्योगिकी केंद्र ने मिलकर मृदा विज्ञान और जल प्रौद्योगिकी में एम.एससी. (कृषि) की शुरुआत की
- वर्ष 2023-24 के दौरान वैज्ञानिकों और छात्रों ने 6 से अधिक एनएएएस रेटिंग वाले जर्नल में 66 शोध पत्र प्रकाशित किए वहीं 10 से अधिक एनएएएस रेटिंग वाले जर्नल में 23 शोध पत्र प्रकाशित किए

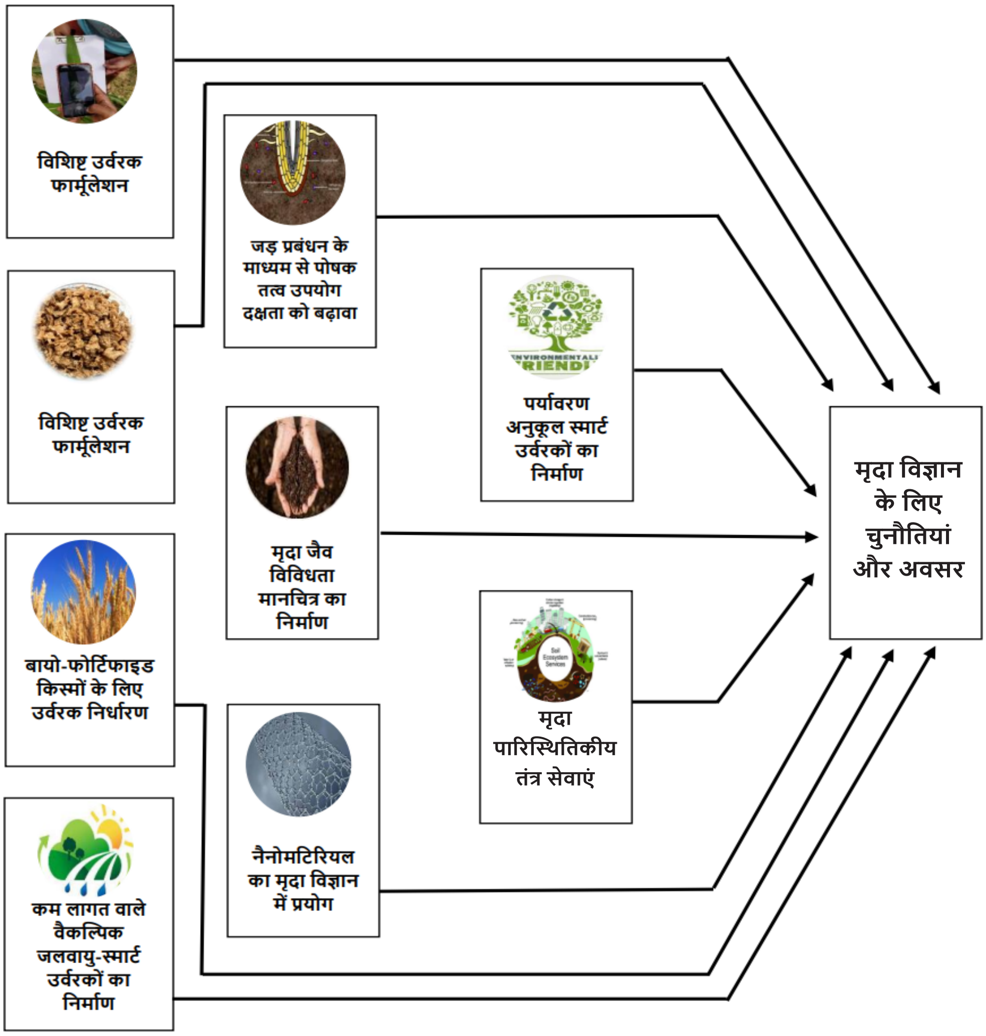

बाह्य वित्त पोषित प्रोजेक्ट

- अस्सेसिंग द रोल ऑफ़ क्वालिटी एंड स्टेबिलिटी ऑफ़ सॉयलआर्गेनिक कार्बन (SOC) इन मेनटेनिंग सॉयल हेल्थ एंड क्रॉप प्रोडक्टिविटीअंडर डिफरेंट एग्रो-इकोलोजिकल रीजन्स ऑफ़ इंडिया
- केमिकल एंड बायोलॉजिकल इंटरवेंशन्स फॉर इम्प्रूविंग फॉस्फोरस एंड पोटेशियम सप्लायिंग कैपेसिटीऑफ़ मेजर सॉयलज़ ऑफ़ इंडिया एंड रिडयुसिन्ग फ़र्टिलाइज़र रेकवाय्रमेंट्स

अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजनाएं

- अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना-माइक्रो एंड सेकंड्री न्युट्रीयेंट्स एंड पोल्यूटेंट एलिमेंट्स इन सॉयलज़ एंड प्लांट्स (AICRP MSPE), दिल्ली केंद्र
- अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना-सॉयल टेस्ट क्रॉप रेस्पोंस (STCR), दिल्ली केंद्र
- अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना–लॉन्ग टर्म फ़र्टिलाइज़र एक्सपेरिमेंट (LTFE), दिल्ली केंद्र

चुनौतियां और अवसर

जलवायु परिवर्तन एवं मृदा उर्वरता स्तर में कमी आने के कारण उच्च कृषि उत्पादन एवं गुणवत्तायुक्त उत्पाद बनाए रखना, जो मानव जाति के स्वास्थ्य एवं आर्थिक विकास को प्रभावित करता है, वर्तमान की मुख्य चुनौतियों में से एक है। इन चुनौतियों के समाधान के लिए संभाग ने संभावित पोषक तत्व उपयोग दक्षता में सुधार के लिए राष्ट्रीय पोषक तत्व रोड फ्लोचार्ट बनाया है जो निम्नवत है:

आभार

मृदा विज्ञान और कृषि रसायन विज्ञान संभाग अपने सभी वैज्ञानिकों तथा अन्य सहयोगियों (भूतकाल एवं वर्तमानकाल) को हार्दिक आभार प्रकट करता है जिन्होंने संभाग को विभिन्न उपलब्धियां प्राप्त करने तथा इसे राष्ट्रीय पटल पर अंकित करने में सहायता और सहयोग दिया है।

नवीकरणीय ऊर्जा : संभावनाएं, चुनौतियां और लाभ

नरेन्द्र मोहन सिंह, रंजिनी वी.आर, उत्कर्ष तिवारी, एम.बालासुब्रमनियन, सूर्य प्रताप सिंह नगदली एवं अलका सिंह

कृषि अर्थशास्त्र संभाग, भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110 012

नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत से तात्पर्य ऐसे स्रोतों से है जो उपयोग के साथ समाप्त नहीं होते हैं, ये प्राकृतिक स्रोतों से प्राप्त होते हैं और जिनकी खपत की तुलना में पुनःभरण प्राप्ति की दर अधिक होती है। सीमित जीवाश्म-ईंधन आधारित ऊर्जा स्रोत हमारी भविष्य की इस मांग को पूरा करने में सक्षम नहीं हैं वहां नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत पूरी तरह सक्षम हैं। आम नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों में सौर, पवन, भूतापीय, पनबिजली, महासागर और जैव ऊर्जा शामिल हैं।

राष्ट्रीय सौर मिशन (NSM) के अंतर्गत विकेंद्रीय नवीकरणीय ऊर्जा, पवन ऊर्जा और सौर ऊर्जा संयंत्र

हम जानते हैं कि समाज की बुनियादी ज़रूरतों और आर्थिक विकास को बढ़ावा देने में ऊर्जा एक ईंधन का कार्य करती है। जनसंख्या बढ़ने के साथ-साथ ऊर्जा की मांग भी बढ़ती जा रही है। एक अनुमान के अनुसार, वर्ष 2040 तक देश में बिजली की खपत 1280 टेरावाट प्रति घंटा हो जाएगी। ऐसे में विश्व की बढ़ती ज़रूरतों की पूर्ति हेतु ऊर्जा के नवीकरणीय संसाधनों पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

नवीकरणीय ऊर्जा की आवश्यकता क्यों?

पिछले 150 वर्षों से जीवाश्म ईंधन संपूर्ण विश्व की अर्थव्यवस्थाओं को शक्ति प्रदान कर रहे हैं और यह वर्तमान में विश्व की लगभग 80 प्रतिशत ऊर्जा की आपूर्ति का प्रमुख स्रोत भी है। इसका जिस दर से उपभोग किया जा रहा है उससे स्पष्ट है कि निकट भविष्य में वे अवश्य ही समाप्त हो जाएंगे और यह भी सच है कि इन्हें अल्पकाल में पुनः प्राप्त करना संभव नहीं है। जीवाश्म ईंधन से ग्रीनहाउस गैस, जैसे- मिथेन और कॉर्बन डाइऑक्साइड आदि का उत्सर्जन होता है, जो पर्यावरण के साथ-साथ जलवायु परिवर्तन व मानव जीवन के लिए भी हानिकारक है। दुनिया में लगभग 60 प्रतिशत से अधिक लोग जिस हवा में सांस लेते हैं,

वह वायु गुणवत्ता मानकों पर खरी नहीं उतरती है तथा विश्व में प्रतिवर्ष काफी अधिक मौतें वायु प्रदूषण के कारण होती हैं। आंकड़ों के अनुसार, विश्व की लगभग 80 प्रतिशत आबादी उन देशों में है जो जीवाश्म ईंधन के शुद्ध आयातक हैं। इसकी वजह से वे भू-राजनीतिक जोखिमों का सामना करते हैं। वर्तमान में जीवाश्म ईंधन का निष्कर्षण व परिवहन अत्यंत जोखिमपूर्ण हो गया है, जिससे तेल रिसाव, श्रमिकों के जीवन तथा तेल की कीमतों पर इसका नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। गौरतलब है कि भारत विश्व का सबसे अधिक आबादी वाला देश है तथा भारत स्वयं के इस्तेमाल किए जाने वाले कच्चे तेल का 85 प्रतिशत और अपनी प्राकृतिक गैस की आवश्यकता का 54 प्रतिशत आयात करता है। जीवाश्म ईंधन के अत्यधिक प्रयोग ने न केवल भारत को बल्कि विश्व के कई देशों को कुछ विशेष देशों पर निर्भर भी बना दिया है। इसने विश्व में जलवायु परिवर्तन संबंधी समस्याओं को भी बढ़ाया है जिससे एक ही समय में देश के कुछ क्षेत्रों में भीषण बाढ़ तो कुछ इलाकों में अत्यधिक गर्मी की स्थिति देखी जाती है। इस प्रकार भारत सहित विश्व भर में ऊर्जा संकट गहरा रहा है साथ ही जीवाश्म ईंधन से पर्यावरण भी प्रदूषित हो रहा है। पारंपरिक संसाधनों से प्राप्त होने वाली बिजली की कीमतें लगातार बढ़ने और विश्व भर में पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरूकता पैदा होने के परिणामस्वरूप अब नवीकरणीय ऊर्जा (रिन्यूएबल एनर्जी) की मांग बढ़ती जा रही है।

नवीकरणीय ऊर्जा : संभावनाएं

भारत अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण नवीकरणीय ऊर्जा का उचित लाभ उठाने में सक्षम है। अगर देखा जाए तो भारत की जलवायु उष्णकटिबंधीय है तथा इसके पास विशाल समुद्र तट भी है, जिसके चलते भारत में सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा और ज्वारीय ऊर्जा जैसे नवीकरणीय ऊर्जा के विविध स्वरूपों के विकास की अपार संभावनाएं हैं।

सौर ऊर्जा- भारत सौर ऊर्जा उत्पादन में विश्व में तीसरे स्थान पर है। नवीन और नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय (MNRE) के अनुसार, भारत के भूमि क्षेत्र में प्रतिवर्ष 5000 ट्रिलियन-घंटे ऊर्जा प्राप्त होती है और अधिकांश भाग प्रतिदिन 4-7 किलोवाट-घंटे प्रति वर्ग मीटर ऊर्जा प्राप्त करते हैं। इसे फोटोवोल्टिक सेल के माध्यम से विद्युत ऊर्जा में परिवर्तित किया जाता है। पूरे देश की बिजली की आवश्यकता की पूर्ति के लिए कुल प्राप्त सौर ऊर्जा का एक छोटा सा हिस्सा ही पर्याप्त है। राष्ट्रीय सौर ऊर्जा संस्थान के अनुमान के अनुसार, 3 प्रतिशत बंजर भूमि क्षेत्र को सौर फोटोवोल्टिक मॉड्यूल से कवर किए जाने से लगभग 748 गीगावाट बिजली उत्पन्न हो सकती है। जो भारत सरकार द्वारा लक्षित से कहीं अधिक है।

"सौर ऊर्जा न केवल वर्तमान में बल्कि 21वीं सदी में ऊर्जा ज़रूरतों का एक प्रमुख स्रोत बनने जा रही है क्योंकि सौर ऊर्जा निश्चित, शुद्ध और सुरक्षित है।" – **प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी**

पवन ऊर्जा- सात राज्यों- गुजरात, महाराष्ट्र, राजस्थान, तमिलनाडु, मध्य प्रदेश, कर्नाटक और आंध्र प्रदेश में पवन से बिजली उत्पादन की महत्त्वपूर्ण क्षमता है। (राष्ट्रीय पवन ऊर्जा संस्थान (NIWE) द्वारा किए गए अध्ययन द्वारा), भूमि सतह से 100 मीटर ऊपर (AGL) इन सात राज्यों की पवन ऊर्जा क्षमता 293 गीगावाट है और 120 मीटर AGL पर क्षमता 652 गीगावाट है। जो भारत सरकार द्वारा लक्षित 60 गीगावाट से कहीं अधिक है। ऐसे में सरकार त्वरित मूल्यह्रास लाभ के माध्यम से निवेश को प्रोत्साहित करके पवन ऊर्जा परियोजनाओं को बढ़ावा दे रही है। अगर देखा जाए तो 7500 किमी. लंबी तटरेखा का प्राकृतिक लाभ होने के कारण भारत में अपतटीय पवन ऊर्जा की अपार क्षमता है। इस संभावना का लाभ उठाने हेतु भारत सरकार ने वर्ष 2015 में राष्ट्रीय अपतटीय पवन ऊर्जा नीति अधिसूचित किया, जिसका उद्देश्य देश के विशेष आर्थिक क्षेत्र (SEZ) में अपतटीय पवन ऊर्जा अवसंरचना में निवेश को प्रोत्साहित करना है।

पनबिजली- भारत में करीब 1.48 गीगावाट की आर्थिक रूप से दोहन योग्य पनबिजली क्षमता है। केंद्रीय विद्युत प्राधिकरण (CEA) द्वारा किए गए आंकलन के अनुसार यदि 94 गीगावाट के पंप स्टोरेज की संभावित क्षमता में छोटी, लघु और सूक्ष्म जल विद्युत परियोजनाओं से लगभग 6.7 गीगावाट की संभावित क्षमता को शामिल किया जाए तो भारत की जलविद्युत क्षमता लगभग 250 गीगावाट होगी। तो लंबे समय तक टिके रहने, कम लागत और उच्च दक्षता के साथ-साथ कई अन्य लाभों के बावजूद वर्तमान में इसके 30 प्रतिशत से भी कम का दोहन किया गया है। ऐसे में इसका समुचित दोहन कर 5 गीगावाट से कहीं अधिक नवीकरणीय ऊर्जा प्राप्त की जा सकती है।

जैव ईंधन- भारत सरकार जैव-ईंधन पर राष्ट्रीय नीति-2018 के माध्यम से सकारात्मक प्रयास भी कर रही है, जिसका उद्देश्य

वर्ष 2030 तक पेट्रोल में 20 प्रतिशत और डीज़ल में 5 प्रतिशत मिश्रण के लक्ष्य के साथ जैव ईंधन के प्रसार में गति लाना है। वर्तमान समय में इथेनॉल और बायोडीज़ल उपयोग में आने वाले सबसे प्रमुख जैव ईंधन में से हैं। जैव-ईंधन तेल आयात पर निर्भरता और पर्यावरण प्रदूषण को कम करने के साथ ही किसानों को अतिरिक्त आय प्रदान करने तथा ग्रामीण क्षेत्रों में स्थानीय स्तर पर रोज़गार के अवसर उपलब्ध कराने में सहायक हो सकता है।

हरित हाइड्रोजन- इस दिशा में ऊर्जा की अपार संभावनाओं को देखते हुए वर्तमान प्रधानमंत्री द्वारा वर्ष 2021 में भारत के 75वें स्वतंत्रता दिवस पर राष्ट्रीय हाइड्रोजन मिशन का शुभारंभ किया गया। इसका उद्देश्य भारत को एक 'हरित हाइड्रोजन हब' बनाना है जो वर्ष 2030 तक 5 मिलियन टन हरित हाइड्रोजन के उत्पादन और संबंधित नवीकरणीय ऊर्जा क्षमता के विकास के लक्ष्य को पूरा करने में मदद करेगा। यह एक स्वच्छ ऊर्जा स्रोत है जो पवन, सौर और जलविद्युत जैसे नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों का उपयोग करके जल के विद्युत-अपघटन (इलेक्ट्रोलिसिस) के माध्यम से उत्पादित किया जाता है।

महासागर और भूतापीय ऊर्जा- भारतीय भू-वैज्ञानिक सर्वेक्षण (GSI) ने अनुमान लगाया है कि भू-तापीय ऊर्जा से संभावित 10 गीगावाट बिजली क्षमता का दोहन किया जा सकता है। जैसा कि हम सब जानते हैं कि महासागर धरातल का 70 प्रतिशत भाग घेरे हुए हैं और ज्वार ऊर्जा, तरंग ऊर्जा, थर्मल ऊर्जा आदि रूप ऊर्जा की एक विशाल राशि का प्रतिनिधित्व करते हैं। हमारे समुद्र और महासागरों की ऊर्जा क्षमता हमारी वर्तमान ऊर्जा आवश्यकताओं से कहीं अधिक है। आंकड़ों के अनुसार, ज्वारीय और तरंग ऊर्जा के लिए अनुमानित ऊर्जा क्षमता क्रमशः 12.5 गीगावाट और 41 गीगावाट है। ऐसे में इन ऊर्जा स्रोतों के इष्टतम दोहन हेतु विभिन्न तकनीकों का विकास किया जा रहा है। जबकि भूतापीय ऊर्जा पृथ्वी के भू-पृष्ठ में संग्रहित ऊष्मा के स्रोत के रूप में होती है, जो सतह पर गर्म स्रोतों के रूप में निकलती है।

नवीकरणीय ऊर्जा : चुनौतियां

- भारत, नवीकरणीय ऊर्जा के उपकरण अनिवार्य रूप से चीन, जर्मनी आदि देशों से आयात करता है। ऐसे में "प्रणाली लागत" में वृद्धि की समस्या इस दिशा में एक गंभीर चुनौती है।
- नवीकरणीय ऊर्जा के क्षेत्र में भारत में अभी भी नए अनुसंधान, आधुनिक विकास सुविधाओं तथा बुनियादी ढाँचे की कमी है।
- शुरुआत में नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों की स्थापना हेतु निवेश की आवश्यकता होती है। ऐसे में अत्यधिक निवेश की आवश्यकता संस्थाओं तथा आम जनमानस दोनों को हतोत्साहित करती है।
- हमारे देश में अधिकांशतः अच्छी योजनाएं राजनीतिक व प्रशासनिक इच्छाशक्ति के अभाव में दम तोड़ देती हैं। इस दिशा में भी भूमि अधिग्रहण की समस्या, सरकारी अनुमोदन मिलने में देरी, सामग्री आपूर्ति सीमा आदि की भी प्रमुख चुनौतियां हैं।
- नवीकरणीय ऊर्जा हेतु आज भी हमारे देश के बैंकों में सुविधाजनक ऋण सुविधा का अभाव है, जिसके कारण इसका लाभ आम जनमानस आसानी से नहीं प्राप्त कर पा रहा है।
- इस संदर्भ में आज भी आम जनमानस के बीच जागरूकता की कमी है, जिसके कारण नवीकरणीय ऊर्जा (अक्षय ऊर्जा) को अपनाने की गति धीमी है।

जलवायु परिवर्तन के दुष्परिणामों को कम करने और नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों को अपनाने हेतु लोगों, परिवारों, समुदायों, संगठनों, सरकार और अन्य हितधारकों को प्रासंगिक स्तरों पर शामिल किया जाना चाहिए ताकि इस दिशा में व्यापक परिवर्तन लाया जा सके। दुनिया की लगातार बढ़ती ऊर्जा जरूरतों को पूरा करने के लिए नवीकरणीय ऊर्जा संसाधनों का उपयोग समय की मांग है और यह अनिवार्य भी है कि अधिकांश नई ऊर्जा की मांग को नवीकरणीय स्रोतों से पूरा किया जाए।

नवीकरणीय ऊर्जा : लाभ

नवीकरणीय ऊर्जा पर्यावरण के अनुकूल होती है तथा इसमें न्यूनतम या लगभग शून्य कार्बन व ग्रीनहाउस उत्सर्जन होता है। जबकि इसके विपरीत जीवाश्म ईंधन ग्रीनहाउस गैस और कार्बन डाइऑक्साइड का काफी अधिक उत्सर्जन करते हैं।

- नवीकरणीय संसाधनों से प्राप्त होने वाली ऊर्जा असीमित होती है। इसलिए इसे ऊर्जा का स्थाई स्रोत भी माना जाता है, जबकि जीवाश्म स्रोतों से प्राप्त होने वाली ऊर्जा के स्रोत सीमित मात्रा में उपलब्ध हैं।

- नवीकरणीय ऊर्जा रोज़गार सृजन में भी सहायक है। काउंसिल ऑन एनर्जी, एन्वायरनमेंट एंड वॉटर (CEEW) की एक रिपोर्ट के अनुसार, भारत के 100 गीगावाट सौर ऊर्जा और 60 गीगावाट पवन ऊर्जा क्षमता विकसित करने के लक्ष्य से लगभग 13 लाख (1.3 मिलियन) प्रत्यक्ष रोज़गार सृजित होंगे।
- नवीकरणीय ऊर्जा का उपयोग ऊर्जा के स्रोत के रूप में जीवाश्म ईंधन पर निर्भरता को भी कम करेगा। इससे वैश्विक स्तर पर ऊर्जा की कीमतों में काफी स्थिरता भी आएगी।
- विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) की एक रिपोर्ट के अनुसार, भारत में खाना पकाने में जीवाश्म ईंधन के इस्तेमाल की वजह से हर साल 5 लाख मौतें हो रही हैं। ऐसे में नवीकरणीय ऊर्जा के प्रयोग को बढ़ावा देकर मानव स्वास्थ्य को बेहतर बनाया जा सकता है।
- विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) की रिपोर्ट के अनुसार नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों को बढ़ावा देने से महिला सशक्तीकरण व लैंगिक समानता (SDG-5) में भी वृद्धि देखने को मिली है।
- नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत ही भविष्य के ऊर्जा संसाधन हैं जो किसी भी राष्ट्र के धारणीय विकास (SDG-7- स्वच्छ एवं वहनीय ऊर्जा) को सुनिश्चित करेंगे। ऐसे में नवीकरणीय ऊर्जा के क्षेत्र में भारत की उपलब्धियां निरंतर बढ़ती जा रही हैं। अगर देखा जाए तो भारत पवन ऊर्जा क्षमता व सौर ऊर्जा क्षमता में चौथे स्थान पर है। देश में नवंबर, 2022 तक गैर-जीवाश्म ईंधन स्रोतों से कुल 42 प्रतिशत ऊर्जा उत्पादन की क्षमता हासिल की जा चुकी है और इस दिशा में सरकार निरंतर आवश्यक कदम भी उठा रही है।

भारत सरकार द्वारा किए जा रहे प्रयास

भारत सरकार ने बजट वर्ष 2022-23 में भी वित्त मंत्री श्रीमती निर्मला सीतारमण ने ऊर्जा दक्षता, विद्युत गतिशीलता, भवन निर्माण दक्षता, ग्रिड से जुड़े ऊर्जा भंडारण और हरित बॉण्ड के लिए कई घोषणाए की जो नवीकरणीय ऊर्जा को प्रोत्साहन देने में अहम भूमिका निभाएंगी। भारत सरकार ने वर्ष 2070 तक नेट-ज़ीरो कार्बन उत्सर्जन तथा वर्ष 2030 तक भारत की नवीकरणीय ऊर्जा स्थापित क्षमता 500 गीगावाट तक विस्तारित करने का लक्ष्य रखा है। जिसे प्राप्त करने तथा नवीकरणीय ऊर्जा को बढ़ावा देने हेतु सरकार द्वारा कई प्रयास किए जा रहे हैं, जैसे- राष्ट्रीय बायोगैस और खाद्य प्रबंधन कार्यक्रम, सूर्यमित्र कार्यक्रम, सौर ऋण कार्यक्रम, पीएम-कुसुम योजना, उत्पादन से जुड़ी प्रोत्साहन योजना, सौर पार्क योजना, केंद्रीय सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम (CPSU) योजना, हाइड्रोजन मिशन, अंतरराष्ट्रीय सौर गठबंधन तथा ऐसे में नवीकरणीय ऊर्जा में आत्मनिर्भरता भारत की आर्थिक और राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए भी अहम है। आज आवश्यकता है कि भारत दूसरे देशों के लिए नवीकरणीय ऊर्जा उपकरणों की आपूर्ति का एक स्रोत बने। उपर्युक्त विवरणों के आधार पर हम यह कह सकते है कि यह क्षमता भारत में सुनिश्चित की जा सकती है और इसका व्यापक लाभ हम कई आयामों के माध्यम से प्राप्त कर सकते हैं।

असम राज्य में पशुपालन की चुनौतियां और भविष्य के अवसर

मनीष पाण्डे, अलगुराजा एम, दा उ रुही पदे, एम.बी.चौधरी, बर्नाली हैंडिक, अरुणज्योति बरुआ, दीपज्योति बरुआ एवं अमजद के. बालंगे

पशु विज्ञान, मुर्गीपालन और मत्स्य पालन प्रभाग
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, गोगामुख, असम-787 035

उत्तर-पूर्व क्षेत्र असम में पशुपालन का मुख्य केंद्र है क्योंकि यहां इस क्षेत्र का तीन-चौथाई पशुधन पाया जाता है। असम में किसान मुख्य रूप से मवेशी, बकरी और सूअर पालते हैं। साथ ही कुछ स्थानों पर भैंस और भेड़ भी पाले जाते हैं। असम में पशुधन का स्वामित्व बड़े पैमाने पर छोटे और सीमांत किसानों के साथ-साथ भूमिहीन मजदूरों के पास भी है। राज्य में उत्पादन क्षमता की दृष्टि से आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण पशुधन नस्लों का अभाव है। पशु आनुवंशिक संसाधनों के राष्ट्रीय ब्यूरो की नवीनतम सूची के अनुसार असम में देशी पशुधन नस्लों में लखीमी (मवेशी), लुइट (दलदल भैंस), असम हिल (बकरी) और डूम (सुअर) शामिल हैं। भेड़ और घोड़े के लिए कोई पंजीकृत नस्लें नहीं हैं। देशी लखीमी गायें कम दूध देने वाली होती हैं, साथ ही उनकी प्रजनन क्षमता भी कम है। भैंसों की आबादी, जिसमें मुख्य रूप से दलदली भैंसें शामिल हैं, में दूध का उत्पादन भी कम होता है और आमतौर पर इसका उपयोग धान की खेती, गाड़ी खींचने और लकड़ी परिवहन जैसे कार्यों के लिए किया जाता है। बकरियां अपनी अनुकूलन क्षमता, उच्च प्रजनन क्षमता, मध्यम दूध उपज और उत्कृष्ट मांस गुणवत्ता के कारण लोकप्रिय हैं। असम में सुअर पालन का प्रचलन इसकी सांस्कृतिक विरासत में गहराई से समाया हुआ है। खासकर जनजातियों के बीच जिनके लिए सुअर पालन एक पारंपरिक प्रथा है, उनमें देशी सुअर की नस्लें कम उत्पादक और प्रजनन विशेषताओं वाली हैं। असम में लोग आमतौर पर स्थानीय पोल्ट्री जैसे चिकन और बत्तख को अंडों और मांस के लिए पालते हैं। इन पक्षियों को फ्री रेंज प्रणाली में पाला जाता है।

असम में पशुपालन की सामान्य प्रणाली

ग्रामीण असम में मवेशी, भैंस, भेड़ और बकरियों को आम तौर पर पारंपरिक व्यापक प्रणालियों के तहत पाला जाता है। किसान अपने पशुओं को चरागाह क्षेत्रों में स्वतंत्र रूप से घूमने भेजते हैं जहां वे प्राकृतिक वनस्पति खाते हैं। जुताई के लिए बैलों का उपयोग किया जाता है जो खेती में पशु शक्ति के स्थाई उपयोग को प्रदर्शित करता है। इस क्षेत्र में प्रचुर मात्रा में पाए जाने वाले बांस का उपयोग पशुओं के लिए सरल लेकिन प्रभावी आश्रयों के निर्माण के लिए किया जाता है जो उन्हें प्रतिकूल मौसम की स्थिति से बचाता है। स्वदेशी पौधे और वनस्पति पशुधन के लिए प्राथमिक पोषण स्रोत के रूप में काम करते हैं। सूअरों को अन्य चीजों के अलावा घास के अंकुर, जड़ें, केंचुए, कीड़े, केले के तने और अरबी के पत्ते पकाने के बाद दिए जाते हैं। बंधी हुई विधि में सूअरों को सुपारी के पेड़ या बांस की चौकी से रस्सी से बांध दिया जाता है और आमतौर पर पका हुआ भोजन खिलाया जाता है। असम में लोग आमतौर पर पोल्ट्री को व्यापक प्रबंधन प्रणाली में रखते हैं। इसके अंतर्गत दिन के समय मुर्गियों को खुले में चरने के लिए छोड़ा जाता है और रात में उन्हें आश्रय स्थल पर रखा जाता है। ये आश्रय स्थल आमतौर पर बांस की लकड़ी या चादरों से बनाए जाते हैं। इस प्रकार की व्यवस्था से मुर्गियों को प्राकृतिक वातावरण में चरने और भोजन ढूंढने का मौका मिलता है जिससे उनकी सेहत बेहतर रहती है और उत्पादन लागत कम होती है। रात के समय सुरक्षित आश्रय स्थल पर रखने से उन्हें शिकारियों और खराब मौसम से बचाया जा सकता है।

असम राज्य में प्रमुख पशुधन उत्पादों के रुझान

हाल ही में जारी बेसिक एनिमल हसबैंडरी स्टैटिस्टिक्स रिपोर्ट वर्ष 2023 के अनुसार राष्ट्रीय स्तर पर कुल दूध उत्पादन 230.58 मिलियन टन तक पहुंच गया है जिससे प्रति व्यक्ति दूध की उपलब्धता 459 ग्राम प्रति दिन हो गई है। देश में मांस उत्पादन 9.77 मिलियन टन है, जिससे प्रति-व्यक्ति मांस की वार्षिक

उपलब्धता 6.82 किलोग्राम हो गई है। अंडा उत्पादन 138.38 बिलियन अंडे तक पहुंच गया है और प्रति-व्यक्ति अंडों की वार्षिक उपलब्धता 101 अंडे हो गई है। आई.सी.एम.आर की सिफ़ारिश के अनुसार एक व्यक्ति के लिए दूध की आवश्यक मात्रा 280 ग्राम/दिन, मांस 11 किलोग्राम/वर्ष और अंडे 180 प्रति वर्ष होनी चाहिए। असम राज्य में दूध उत्पादन 982 हज़ार टन है जिससे प्रति-व्यक्ति दूध की उपलब्धता 77 ग्राम/दिन है जोकि 203 ग्राम/दिन दूध की कमी को दर्शाती है। मांस उत्पादन 56.1 हज़ार टन है जिससे प्रति व्यक्ति मांस की उपलब्धता 1.6 किलोग्राम/वर्ष है, जोकि 9.4 किलोग्राम/वर्ष कम है। अंडा उत्पादन 5421.7 लाख है, जिससे प्रति व्यक्ति अंडों की उपलब्धता 15 प्रति वर्ष होती है तथा यह 165 अंडों की कमी को दिखाता है। आई.सी.एम.आर की सिफ़ारिश के मुकाबले असम में दूध, मांस और अंडे की उपलब्धता काफी कम है, जिससे स्पष्ट होता है कि असम में आधुनिक पशुपालन तकनीकों और जानकारी की कमी है।

असम में पशुपालन क्षेत्र की चुनौतियां

असम में पारंपरिक पशुपालन ज्ञान को आधुनिक पशुपालन प्रथाओं के साथ एकीकृत करने की आवश्यकता है। पशुपालन में कई चुनौतियां हैं जिसमें पशुधन की उच्च उत्पादक नस्लों का अभाव, लखीमी गायों और दलदली भैंसों जैसी देशी नस्लों में कम दूध उत्पादन और सीमित प्रजनन क्षमता प्रमुख हैं। पशुपालन में ये चुनौतियां सांद्र चारे की कम उपलब्धता, अपर्याप्त चारा और चारे, दवाओं और टीकों तक सीमित पहुंच, इनपुट आपूर्ति चुनौतियां, आर्थिक बाधा, परिवहन कठिनाइयों, प्रतिबंधित बाजार पहुंच, सहकारी समितियों, सहायता समूहों की अनुपस्थिति जैसे मुद्दों से उत्पन्न होती हैं। इसलिए पशुपालन उत्पादों में वृद्धि के लिए इन चुनौतियां से निपटना बहुत आवश्यक है।

असम में पशु पालन क्षेत्र के विकास के संभावित अवसर

रणनीतिक हस्तक्षेपों के साथ पशुपालन क्षेत्र की चुनौतियों का समाधान संभव हो सकता है। लखीमी गायों जैसी स्थानीय मवेशियों की नस्लों के लिए चयनात्मक प्रजनन कार्यक्रम, उच्च उत्पादन देने वाली स्वदेशी नस्लों के साथ क्रॉसब्रीडिंग और व्यापक आनुवंशिक सुधार कार्यक्रम जैसी पहल दूध उत्पादन और नस्ल लचीलापन बढ़ाने के लिए मार्ग प्रशस्त कर सकती है। समर्पित अनुसंधान केंद्रों, किसान प्रशिक्षण कार्यक्रमों और प्रदर्शन फार्मों के माध्यम से चारे खेती को बढ़ावा देने से चारे की कमी को कम किया जा सकता है और पशुधन के लिए पोषण सेवन में सुधार किया जा सकता है जिससे उत्पादकता में वृद्धि होगी। बायो-गैस उत्पादन, वर्मी कंपोस्टिंग और गोबर आधारित उत्पादों के उपयोग के माध्यम से पशुधन अपशिष्ट का प्रभावी प्रबंधन किया जा सकता है। बकरी पालन के समर्थन ने अफ्रीकी स्वाइन बुखार जैसी हालिया चुनौतियों का सामना करने में मदद की है जिससे मांस उद्योग में विविधता आई है और किसानों के लिए आर्थिक रिटर्न बढ़ गया। पशुपालन में समग्र विकास और टिकाऊ प्रथाओं को सुनिश्चित करने के लिए इन रणनीतियों को प्रभावी ढंग से लागू करने के लिए सरकारी एजेंसियों, अनुसंधान संस्थानों और स्थानीय समुदायों से जुड़े सहयोगात्मक प्रयास आवश्यक हैं। पोल्ट्री उत्पादन को बढ़ावा देने के लिए उन्नत किस्म की पोल्ट्री पक्षियों का उपयोग बहुत फायदेमंद साबित हो सकता है। असम में वानराजा और उपकारी जैसी नस्लों को प्रोत्साहित किया जा सकता है। ये नस्लें न केवल अंडों और मांस के उत्पादन में बेहतर प्रदर्शन करती हैं, बल्कि रोग प्रतिरोधक क्षमता भी अधिक होती है जिससे पोल्ट्री फार्मिंग अधिक लाभदायक हो जाती है।

निष्कर्ष

पशुपालन असम में लोगों के लिए पोषण सुरक्षा और जीविका का महत्वपूर्ण स्रोत है। अतः यह आवश्यक है कि पारंपरिक ज्ञान प्रणालियों के साथ वैज्ञानिक तकनीकों को एकीकृत कर पारिस्थितिकी संतुलन और सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित करते हुए पशुधन उत्पादन करें। चारे की खेती, प्रजनन प्रौद्योगिकियों और अपशिष्ट प्रबंधन में अनुसंधान और विकास को प्राथमिकता देकर असम अपने पशुधन क्षेत्र की पूरी क्षमता को अनलॉक कर सकता है, जिससे क्षेत्र में आर्थिक विकास, खाद्य सुरक्षा और पर्यावरणीय स्थिरता में योगदान मिल सकता है।

सामुदायिक भूमि पर चरती स्थानीय गायें

सूअरों को बांस की चौकी से बांधकर पलाना

मुक्त चराई में पाले गई मुर्गियां

मुर्गीपालन के लिए बांस की संरचना

असम पहाड़ी बकरी सड़क के निकट ब्राउजिंग करती हुई

सूअरों के लिए केले के तने और अरबी के पत्ते को पकाना

असम राज्य में पशुपालन की पारंपरिक प्रथाएं

सूत्रकृमि विज्ञान : आजीविका के अवसर

राशिद परवेज़, पंकज, चंद्रमानी बाघमारे एवं विकास वामेंल

सूत्रकृमि विज्ञान संभाग, भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110 012

भारत की लगभग आधे से अधिक आबादी को कृषि क्षेत्र रोज़गार का अवसर प्रदान करती है तथा देश के सकल घरेलू उत्पाद में 17% का योगदान करती है। यह भारत की लगभग 58% आबादी के लिए आजीविका का प्राथमिक स्रोत है। भारत के सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का वर्तमान योगदान लगभग 18-19% है। वर्ष 2022-23 के नवीनतम अनुमानों से पता चलता है कि कुल भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि और संबद्ध क्षेत्रों के सकल मूल्य वर्धित का हिस्सा 18.3% है। भारत में कृषि की जीडीपी कम होने के कई कारण है जिसमें ग्रामीण अर्थव्यवस्था में विविधीकरण का अभाव, कृषि वस्तुओं की कीमतों में धीमी वृद्धि, कृषि क्षेत्र में रोज़गार के अवसरों की संतृप्ति, कृषि की बहुत धीमी विकास दर और अन्य क्षेत्रों की तेज़ विकास दर प्रमुख हैं। अत: यह समय की मांग है कि कृषि का व्यावसायीकरण किया जाये और ऐसी नीतियां बनाई जाए जो भारत में कृषि के व्यावसायीकरण को प्रेरित करें। इससे उत्पादन और किसानों की आय में वृद्धि होगी। किसान एवं युवा कृषि क्षेत्र विशेषकर सूत्रकृमि विज्ञान में अपना रोज़गार का अवसर बना सकते हैं।

सूत्रकृमि क्या है?

सूत्रकृमि बहुत ही सूक्ष्म आकार, बेलनाकार, रंगहीन तथा धागेनुमा होते है। प्रायः इन्हें नग्न आंखों से नहीं देखा जा सकता है। इन्हें देखने के लिए विशेष प्रकार के सूक्ष्मदर्शी की आवश्यकता होती है। यह मुख्यतः मिट्टी में 5-35 से.मी. तक पाए जाते हैं। यह पौधों की जडों को बाहर तथा अंदर दोनों प्रकार से हानि पहुंचाते हैं। एक निश्चित संख्या से अधिक होने पर ये पौधों को पानी तथा अन्य पोषक तत्वों को प्राप्त करने में बाधा उत्पन्न करते है। सूत्रकृमि अक्सर जड़ ऊत्तकों के कार्यो में बाधा पहुंचाते हैं। उनके द्वारा संक्रमित पौधो की जड़े मिट्टी से उचित पोषण एवं पानी नहीं ले पाती हैं। जिसके कारण पौधे के उपरी भागों में लक्षण उत्पन्न होते हैं जैस, पोषण की कमी, शुष्कता, लवण की अधिकता व अन्य तनाव की परिस्थितियां से पौधों की वृद्धि रूक जाती हैं, पत्तियां पीली पड़ जाती हैं तथा शाखाएं कम निकलती हैं।

सूत्रकृमि विज्ञान में आजीविका के अवसर

सूत्रकृमि विज्ञान में सूत्रकृमि मुक्त रोपण सामग्री का उत्पादन, सूत्रकृमि आधारित कीटनाशकों, का उत्पादन तथा जैविक नियंत्रण उत्पाद को तैयार करके आजीविका के अवसर बनाए जा सकते हैं।

सूत्रकृमि मुक्त रोपण सामग्री का उत्पादन

विभिन्न फसलों विशेषकर बागवानी फसलों में सूत्रकृमियों का संक्रमण नर्सरी में तैयार रोपण सामग्री से खेतों तक पहुंचता है, यदि हम नर्सरी में सूत्रकृमि मुक्त रोपण सामग्री तैयार करें तो काफी हद तक सूत्रकृमियों का संक्रमण को रोक सकते हैं। मृदा रहित संवर्धन माध्यम एवं अच्छे बीज का उपयोग करके रोपण सामग्री को तैयार करना एक बेहतर विकल्प है। इससे सूत्रकृमियों द्वारा होने वाली अत्यधिक हानि से बचा जा सकता है। इस प्रकार की पौधशाला को स्थापित करके रोज़गार के अवसर पैदा किए जा सकते हैं। भारत सरकार एवं कई राज्यों की सरकारें इस कार्य को किसानों एवं विशेषकर युवाओं को कृषि के क्षेत्र में रोज़गार के अवसर को बढ़ाने के लिए कई स्कीमों के तहत प्रोत्साहित कर रही हैं।

सूत्रकृमि रहित पौध (अमरूद एवं अनार) का विकास करना भी अनिवार्य है। ताकि मिट्टी द्वारा इनका फैलाव रोका जा सके मिट्टी एक बड़े कुकर में भाप देकर सूत्रकृमियों को मारने के लिए उपयोग करें तथा एक पक्के स्थान पर मिट्टी को मिलाकर पौध तैयार की जा सकती है।

संरक्षित खेती

उच्च गुणवत्ता, निर्यातोन्मुख बागवानी उत्पादों की मांग और वर्ष भर विशेष रूप से ऑफ सीजन में बागवानी फसल उत्पादन की उपलब्धता की आवश्यकता ने उत्पादकों को 1980 के दशक में संरक्षित खेती के तहत चुनिंदा फसलों की खेती करने के लिए मजबूर किया। परिणामस्वरूप, लोगों ने भारत के

सभी राज्यों में संरक्षित परिस्थितियों में बागवानी फसलों की खेती शुरू कर दी। जल्द ही संरक्षित खेती में उच्च तापमान, आर्द्रता की अनुकूल परिस्थितियों और पॉली हाउसों में उर्वरकों और पौधों के विकास प्रमोटरों जैसे उच्च कृषि संबंधी आदानों के उपयोग के कारण सूत्रकृमियों की समस्याएं गंभीर हो गईं और फसलों का अत्यधिक नुकसान होने लगा। प्रमुख बागवानी फसलों में कुल औसत वार्षिक उपज हानि संरक्षित खेती के तहत लगभग 60% तक हो जाती है। सूत्रकृमि संक्रमण का तेजी से फैलाव फसल सुरक्षा विशेषज्ञों और नीति निर्माताओं के लिए एक प्रमुख चिंता का विषय है। संरक्षित परिस्थितियों में सूत्रकृमि प्रबंधन का किसी सरकारी या मान्यता प्राप्त संस्थान या संस्था द्वारा प्रशक्षिण लेकर उन्हें इस क्षेत्र में अपनाकर रोज़गार के अवसर बना सकते हैं।

कृषि एवं बागवानी अधिकारियों द्वारा एक सर्टिफिकेट लेकर पोली हाउस का निर्माण किया जा सकता है। सूत्रकृमि रहित मिट्टी का होना आवश्यक है। यह सर्टिफिकेट डीएचओ द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।

कीटनाशक सूत्रकृमि आधारित कीटनाशकों का उत्पादन

जातियों के आधार पर, सूत्रकृमियों का सकारात्मक और नकारात्मक दोनों प्रकार से बहुत आर्थिक महत्व है। मिट्टी में सूत्रकृमियों की लाभकारी उपजातियां फसल को हानि पहुंचाने वाले कीड़ों की आबादी को नियंत्रित करने में मदद करती हैं।

सूत्रकृमि की वे उपजातियां जो कीटों को मारने की क्षमता रखती है, उन्हें सूत्रकृमि कीटनाशक कहते हैं। ये सूत्रकृमि बहुत सूक्ष्म, रंगहीन, पतले, खंड रहित सूत्रकृमि धागेनुमा, बेलनाकार, अतिसूक्ष्म, एक लिंगी तथा परिपोषी है। इन्हें नग्न आखों से नहीं देखा जा सकता है। इन्हें देखने के लिए सूक्ष्मदर्शी का प्रयोग करते हैं। सर्वप्रथम इसकी खोज जर्मनी के वैज्ञानिक स्टाइनर ने 1923 ईसवी में की थी। ये कीटों के बाह्य शरीर पर स्थित प्राकृतिक छिद्रों द्वारा कीटों के शरीर में प्रवेश करके जीवाणुओं का मोचन करते है जो विष का सृजन कर कीटों को मारने में भूमिका निभाते हैं।

अभी तक पूरे विश्व में तीन प्रकार के कीटनाशक सूत्रकृमि जैसे, *स्टीनरनीमा*, *हैटरोरैहबडाइटिस* तथा *ओशयस* की खोज हुई है, जोकि क्रमश: *जीनोरैहबडस*, *फोटोरैहबडस* तथा *सीरेशिया* नामक जीवाणुओं के साथ सहजीवी संबंध रखते हैं। यह जीवाणुओं कीटनाशक सूत्रकृमियों के तृतीय शिशु की आंत में पाए जाते हैं। ये कीटों के लिए प्राण घातक पूर्ण परजीवी हैं। विभिन्न फसलों में लेपिडोपटेरन, कोलिओपटेरन तथ डिपटेरन कीट समूह के नियंत्रण में इन कीटनाशक सूत्रकृमियों की महत्वपूर्ण भूमिका हैं।

कीटनाशक सूत्रकृमियों का वृहद उत्पादन कीटों अथवा कृत्रिम माध्यम से किया जा सकता है। कीटों के माध्यम से इनका उत्पादन क्रमशः *हेलिकोवर्पा आर्मीजेरा* के प्रति लार्वे से लगभग 50 हजार से दो लाख, *गैलेरिया मैलोनिला* से 2 लाख से 3 लाख तथा *कोरसायरा सिफेलोनिका* से 1 से 2 लाख शिशु सूत्रकृमि उत्पन्न किए जा सकते हैं। विभिन्न कृत्रिम माध्यम से 10 से 40 लाख प्रति 250 मिली. फ्लास्क से संवर्धित किए जा सकते हैं। एक हैक्टेयर क्षेत्रफल में कीट नियंत्रण हेतु लगभग 20 करोड़ शिशु सूत्रकृमियों की आवश्यकता होती है। कीटनाशक सूत्रकृमि के उचित भंडारण के लिए मिट्टी के पात्रों में गीली मिट्टी के साथ, टाल्क पाउडर के प्लास्टिक पैकेट में तथा कीटों के कोकून में भंडारित किया जा सकता हैं। इन दशाओं में इन्हें लगभग 6-12 महीनों तक भंडारित किया जा सकता है।

जैविक नियंत्रण उत्पाद

पौधों को हानि पहुंचाने वाले सूत्रकृमियों को रासायनिक कीटनाशकों द्वारा नियंत्रण किया जाता है। प्रायः देखा गया है कि किसान इनका प्रयोग जरूरत से अधिक करते हैं जिससे न केवल हानिकारक सूत्रकृमि अथवा मिट्टी में पाए जाने वाले लाभदायक जीव भी समाप्त हो जाते हैं। अधिक कीटनाशकों का प्रयोग हमारे पर्यावरण को नुकसान पहुंचाता है। ये कीटनाशक मिट्टी से होते हुए जमीन में जलस्तर तक पहुंच कर जल को भी प्रदूषित करते हैं। यह जल किसी भी जीव के लिए हानिकारक हो सकता है। यही कारण है कि अधिकतर सूत्रकृमिनाशी रसायनों के उत्पादन पर विश्वभर में पाबंदी लग गई है। अब केवल कुछ कीटनाशक ही बाजार में उपलब्ध हैं। इस बात को ध्यान में रखते हुए सूत्रकृमि विशेषज्ञों ने कृमियों को नष्ट करने हेतु दूसरे उपाय खोजने प्रारंभ किए जिसमें जैविक नियंत्रण प्रमुख है।

पादप परजीवी सूत्रकृमियों को नियंत्रण करने वाले जैविक नियंत्रण कारकों जैसे *ट्राईकोडर्मा हरजियानम* या *पैसिलियोमाइसिस लिलैसिन्स* (*पैसिलियोमाइसिस परपीसियूलम*) का उपयोग बीज

उपचार के लिए किया जाता है। वही *स्यूडोमोनास फ्लोरेसेन्स* को जड़ उपचार के लिए, कुछ जैविक नियंत्रण कारक जैसे *पोकोनिया क्लैमाईडोस्पोरिया* या *ट्राईकोडर्मा हरजियानम या ट्राईकोडर्मा विरिडी* केवल मिट्टी में खाद के साथ या सिंचाई के साथ उपयोग में लाए जाते हैं।

इन जैविक नियंत्रण कारकों को सूत्रीकरण करके उनका संपूरीकरण करके पादप परजीवी सूत्रकृमियों को नियंत्रण करने हेतु उत्पाद बना सकते हैं। सूत्रकृमि आधारित व्यावसायीकरण में अनेक संभावनाएं हैं जिसको अपनाने से कम लागत में अधिक लाभ से जीवन खुशहाल एवं सफल हो सकता है।

मायकोटॉक्सिन और मानव स्वास्थ्य पर उनका प्रभाव

दीबा कामिल, विष्णु माया बस्याल, रश्मि अग्रवाल, अमृता दास एवं महेंद्र सिंह सहारण

पादप रोग विज्ञान संभाग, भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110 012

वर्ष 2030 तक, दुनिया की आबादी 820 करोड़ तक पहुंचने का अनुमान है, जिसमें 84.2 करोड़ लोगों को अल्पपोषित माना जाता है। पौष्टिक भोजन की आपूर्ति एक बड़ी चुनौती बनने जा रही है। माइकोटॉक्सिन जैसे खतरनाक रसायनों की उपस्थिति अंतरराष्ट्रीय बाजारों में खाद्य उत्पादों की विपणन क्षमता को और सीमित कर देगी। मायकोटॉक्सिन कम आणविक द्रव्यमान के मेटाबोलाइट्स हैं जो मुख्य रूप से *एस्परजिलस*, *पेनिसिलियम* और *फुजैरियम* नामक फफूंद द्वारा निर्मित होते हैं जिनका पशु और मानव स्वास्थ्य पर विषाक्त प्रभाव पड़ता है। मानव या पशु स्वास्थ्य पर मायकोटॉक्सिन के प्रतिकूल प्रभावों की सीमा मुख्य रूप से जोखिम (खुराक और अवधि), मायकोटॉक्सिन के प्रकार, शारीरिक और पोषण संबंधी स्थिति के साथ-साथ अन्य रसायनों के संभावित सहक्रियात्मक प्रभावों पर निर्भर करती है। वर्ष 1960 में *एस्परजिलस फ्लेवस* के कारण टर्की एक्स रोग की घटना से मायकोटॉक्सिन पर ध्यान केंद्रित हुआ था, जिसमें 1,00,000 से अधिक टर्की पक्षी मारे गए थे। इसके बाद, यह पाया गया कि *एस्परजिलस फ्लेवस* केंसरकारी हैं और जानवरों और मनुष्यों में हेपेटोसेलुलर कार्सिनोमा (एचसीसी) का कारण बनते हैं, और इससे मायकोटॉक्सिन पर शोध को बढ़ावा मिला है। तब से, लगभग 400 मायकोटॉक्सिन ज्ञात हैं, लेकिन एएफ, ओक्रैटॉक्सिन, ज़ेरालेनोन (जेडईए), फूमोनिंसिन (एफबी) और ट्राइकोथेकेन ज्यादातर सार्वजनिक स्वास्थ्य मुद्दों पर केंद्रित हैं। मायकोटॉक्सिन विविध और शक्तिशाली विषाक्त प्रभावों को प्रेरित कर सकते हैं, कुछ कार्सिनोजेनिक, म्यूटाजेनिक, टेराटोजेनिक, एस्ट्रोजेनिक, हेमोरेजिक, इम्युनोटॉक्सिक, नेफ्रोटोक्सिक, हेपेटोटॉक्सिक, डर्माटॉक्सिक और न्यूरोटॉक्सिक हैं। अब व्यापक सहमति है कि पृथ्वी एक अभूतपूर्व दर से गर्म हो रही है। फसल के भौगोलिक वितरण और उत्पादन, साथ ही फसलों की पत्तियों में स्थित जीवाणु मंडल, परिवर्तन से दृढ़ता से प्रभावित होने की उम्मीद है। उदाहरण के लिए, माइकोटॉक्सिन उत्पादन करने वाले *एस्परजिलस फ्लेवस* उच्च तापमान और शुष्क मौसम की स्थिति में बढ़ने में सक्षम है। अत्यधिक गर्मी और शुष्क स्थिति के तहत *एफ्लेवस* की वृद्धि भूमध्य और अन्य समशीतोष्ण क्षेत्रों में एक उभरती हुई समस्या है। सर्बिया में मायकोटॉक्सिन उत्पादन पर जलवायु परिवर्तन के प्रभाव देखे गए हैं, जहां पहले कोई संदूषण नहीं हुआ था, लेकिन वर्ष 2012 में लंबे समय तक गर्म और शुष्क मौसम के परिणामस्वरूप 69% मक्का ए *फ्लेवस* से दूषित हो गया। मायकोटॉक्सिन आंतरिक जीवाणु मंडल संतुलन को बाधित करता है और इस तरह जानवरों और मनुष्यों की आंतों के कार्यों को निष्क्रिय कर देता है और स्थानीय प्रतिरक्षा प्रतिक्रिया को ख़राब करता है। जो अंततः प्रणालीगत विषाक्तता का परिणाम हो सकता है जो क्रोनिक मायकोटॉक्सिकोसिस कहलाता है। क्रोनिक मायकोटॉक्सिकोसिस स्थिति की गंभीरता को प्रोबायोटिक्स के माध्यम से आंतरिक माइक्रोबायोटा संतुलन और आंत स्वास्थ्य की बहाली द्वारा सकारात्मक रूप से नियंत्रित किया जा सकता है। प्रोबायोटिक आंत माइक्रोबायोटा के प्राकृतिक सद्भाव को बहाल करने में मदद करता है। जिससे स्वास्थ्य को बढ़ावा मिलता है।

परिचय

कई कवक प्रजातियां विषाक्त रासायनिक यौगिकों का उत्पादन करती हैं जिन्हें मायकोटॉक्सिन कहा जाता है जो मनुष्यों और जानवरों के लिए खतरनाक हैं और इससे बीमारियां और मृत्यु हो सकती है। ये कम आणविक भार के मेटाबोलाइट्स हैं जो बड़े पैमाने पर *एस्परजिलस*, *फुजैरियम* और *पेनिसिलियम* जैसे कवक के द्वारा निर्मित हैं। जब जहरीले कवक जानवरों में बढ़ते हैं और बीमारी पैदा करते हैं, तो इसे माइकोसेस कहा जाता है, जबकि विषाक्त कवक जब आहार, श्वसन, और त्वचीय संपर्क में आते हैं और रोग पैदा करते हैं, तो इसे मायकोटॉक्सिकोज कहा जाता है। मायकोटॉक्सिन द्वारा मानव और पशु स्वास्थ्य पर हानिकारक प्रभाव को मायकोटॉक्सिकोसिस के रूप में जाना जाता है और मायकोटॉक्सिकोसिस के अध्ययन को मायकोटॉक्सिकोलॉजी कहा जाता है। कुछ कवक प्रजातियां

मायकोटॉक्सिन का उत्पादन करती हैं जो बैक्टीरिया के विकास को रोकती हैं जैसे पेनिसिलिन को एंटीबायोटिक कहा जाता है। मायकोटॉक्सिन शब्द 1962 में टर्की एक्स रोग के परिणाम में दिया गया था जिसमें लगभग 1,00,000 टर्की पक्षी की मृत्यु लंदन और इंग्लैंड में मायकोटॉक्सिन के कारण हुई थी। टर्की एक्स रोग के अध्ययन के बाद, वैज्ञानिकों ने देखा कि फफूंद *एस्परजिलस फ्लेवस* द्वारा स्रावित एफ्लाटॉक्सिन से मूंगफली के बीज भी दूषित हो गए थे और शोधकर्ताओं ने पाया कि कई फफूंदों द्वारा उत्पादित द्वितीयक मेटाबोलाइट्स जहरीले हो सकते हैं। बाद में, लगभग 400 मायकोटॉक्सिन की पहचान की गई, उनमें से एफ्लाटॉक्सिन, ऑक्रैटॉक्सिन, ज़ेरालेनोन, फ्यूमोनिंसिन और ट्राइकोथेकेन लोगों के स्वास्थ्य के संबंध में बहुत महत्वपूर्ण हैं। कवक द्वारा उत्पादित सभी मायकोटॉक्सिन सभी विषाक्त नहीं हैं, विषाक्तता मुख्य रूप से खुराक की मात्रा अवधि, मायकोटॉक्सिन के प्रकार और शारीरिक और पोषण की स्थिति पर निर्भर करती है।

मायकोटॉक्सिन पर वैज्ञानिक प्रकाशन तेज़ी से बढ़े हैं। वर्ष 1965 में मायकोटॉक्सिन, एफ्लाटॉक्सिन (एएफ) की पहचान के बाद से स्कोपस में 16,821 पेपर दर्ज किए गए थे। डेटा ने स्पष्ट रूप से मायकोटॉक्सिन अनुसंधान के महत्व को दिखाया जिसकी इस पत्र में बाद में चर्चा की जाएगी। फिर भी, माइकोटॉक्सिन से उत्पन्न वैश्विक स्वास्थ्य मुद्दे को अभी भी कई कम आय वाले देशों में अक्सर अनदेखा किया जाता है, जहां मायकोटॉक्सिन प्रधान खाद्य पदार्थों को प्रभावित करते हैं।

कवक के अपने सर्वव्यापी स्वभाव के कारण, मायकोटॉक्सिन तेजी से स्वास्थ्य संगठनों की चिंता को आकर्षित कर रहे हैं जहां खाद्य पदार्थों में उनकी घटना को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है और पहले से ही उपभोक्ताओं के लिए खतरा है। बागवानी फसलों में रिपोर्ट किए गए प्रमुख मायकोटॉक्सिन और उनके प्रभाव निम्नलिखित तालिका-1. में सूचीबद्ध हैं:

तालिका-1. बागवानी फसलों पर मायकोटॉक्सिन के प्रभाव।

मायकोटॉक्सिन	संबंधित कवक	होस्ट	प्रभाव
एफ्लाटॉक्सिन	*एस्परजिलस फ्लेवस, एस्परजिलस पैरासाइटिकस*	चिली पेपर्स, काली मिर्च, धनिया, हल्दी, अदरक, पिस्ता, बादाम, अखरोट, और नारियल	डीएनए को नुकसान पहुंचा सकते हैं और जानवरों की प्रजातियों में कैंसर का कारण बन सकते हैं
ओक्रैटॉक्सिन ए	*एस्परजिलस ऑक्रैशियस, एस्परजिलस एलियाशियस, एस्परजिलस मेलिस, पेनिसिलियम विरिडिकैटम, पेनिसिलियम साइक्लोप्लाम*	कॉफी बीन्स, सूखी बेल फल, अंगूर का रस, मसाले और शराब	शराब, गुर्दे की क्षति, भ्रूण के विकास और प्रतिरक्षा प्रणाली पर प्रभाव पड़ता है
पटुलिन	*पेनिसिलियम एक्सपनसम, पेनिसिलियमपटुलम, पेनिसिलियम मेलिनी, पेनिसिलियम इक्विनम, एस्परजिलस क्लैवाटस, एस्परजिलस टेरियस* आदि।	सेब और सेब उत्पाद, अनाज और अन्य खाद्य पदार्थों में भी पेटुलिन हो सकता है।	यकृत, प्लीहा और गुर्दे की प्रतिरक्षा प्रणाली को क्षति और विषाक्तता पैदा करता है
अल्टरनेरिया टॉक्सिन (टेनुआज़ोनिक एसिड, अल्टरनेरिओल, अल्टरनेरिओल मिथाइल ईथर, एलेन्टुएन, और ट्रांसक्टॉक्सिन्स)	*अल्टरनेरिया* प्रजाति	टमाटर, सेब गाजर, रस, मदिरा	उत्परिवर्तन, स्फिंगोलिपिड चयापचय विघटन, या एंजाइम गतिविधि और फोटोफॉस्फोराइलेशन का निषेध

मायकोटॉक्सिन और आंतड़ी स्वास्थ्य

दूषित भोजन के अंतर्ग्रहण पर, आमाशय-आंत के पथ विशेष रूप से मायकोटॉक्सिन से प्रभावित होता है। आम तौर पर, जीआई पथ में आंतों की बाधा हानिकारक मायकोटॉक्सिन के खिलाफ एक फिल्टर के रूप में कार्य करती है। कुछ मायकोटॉक्सिन जीआई पथ में उनके हानिकारक प्रभावों के लिए जाने गए हैं। उदाहरण के लिए, मायकोटॉक्सिन सामान्य आंतों के कार्य जैसे कि पोषक

तत्व अवशोषण को बदल सकता है। कुछ मायकोटॉक्सिन आंत के हिस्टोमॉर्फोलॉजी पर भी प्रभाव डालते हैं। मायकोटॉक्सिन के प्रभावों में ट्राइकोथेकेन, ज़ेरालेनोन, फूमोनिंसिन, ओक्रैटॉक्सिन और एएफ शामिल हैं, जिनकी सामान्य और आंत स्वास्थ्य पर व्यापक रूप से समीक्षा की जाएगी।

ट्राइकोथेकेन

फ़ुसैरियम ग्रामिनियरम मुख्य कवक प्रजाति है जो ट्राइकोथेनेस का उत्पादन करती है। टी-2 टॉक्सिन (टाइप ए) और डॉन (टाइप बी) प्रमुख मायकोटॉक्सिन हैं जो मौखिक अंतर्ग्रहण के माध्यम से मनुष्यों और जानवरों को विषाक्तता का कारण बनते हैं।

ओक्रैटॉक्सिन

ओक्रैटॉक्सिन मुख्य रूप से *एस्परजिलस* प्रजातियों और *पेनिसिलियम* प्रजातियों द्वारा निर्मित होता है। ओक्रैटॉक्सिन ए (ओटीए) इस समूह का सबसे प्रचलित कवक विष है। ओटीए का मुख्य लक्ष्य स्थल किडनी है। जानवरों पर पिछले निष्कर्षों से पता चला कि ओटीए एक शक्तिशाली किडनी कार्सिनोजेन है। इंटरनेशनल एजेंसी फॉर रिसर्च ऑन कैंसर (आईएआरसी) ने समूह 2 बी कार्सिनोजेन के तहत मनुष्यों के लिए संभवतः कार्सिनोजेनिक के रूप में ओटीए को वर्गीकृत किया।

अफ़्लाटोक्सिन

अफ़्लाटोक्सिन एक मायकोटॉक्सिन है जो *एस्परगिलस फ्लेवस* और *एस्परगिलस पैरासाइटिकस* द्वारा निर्मित है। मानव भोजन और पशु आहार में पाया जाने वाला सबसे आम माइकोटॉक्सिन, एएफ़बी1 है। वास्तव में, एएफ़बी1 स्तनधारियों में मान्यता प्राप्त सबसे शक्तिशाली हेपेटोकार्सिनोजेन है और आईएआरसी द्वारा समूह 1 कार्सिनोजेन के रूप में सूचीबद्ध है। यकृत एएफ़बी1 का मुख्य लक्ष्य स्थल है। एफ्लाटॉक्सिकोसिस से पेट में दर्द, उल्टी, एडिमा और मृत्यु हो सकती है।

प्रबंधन रणनीतियों का माइकोटॉक्सिजेनिक कवक और संबंधित मायकोटॉक्सिन पर प्रभाव

माइकोटॉक्सिन से प्रभावित चावल, मक्का, गेहूं, सोयाबीन, शर्बत और मूंगफली जैसी प्रमुख खाद्य फसलें एवं कई अन्य फसलें भी प्रभावित होती हैं। खाद्य उत्पादन के सतत विकास के लिए मायकोटॉक्सिजेनिक कवक और उनके मायकोटॉक्सिन का प्रबंधन करना बहुत आवश्यक है क्योंकि भोजन मानव और जानवरों की बुनियादी आवश्यकता है। कवक और मायकोटॉक्सिन संदूषण के प्रबंधन के लिए कई रणनीतियां हैं। उनमें से, प्रतिरोधी विविधता का उपयोग, रासायनिक नियंत्रण और उत्पादन अनुप्रयोगों में परिवर्तन और पौधे के तनाव को कम करना शामिल है। नियमित रूप से, प्रतिरोधी पौधे की विविधता का उपयोग माइकोटॉक्सिजेनिक कवक और मायकोटॉक्सिन को नियंत्रित करने के लिए एक प्रभावी और पर्यावरण के अनुकूल रणनीति प्रदान करता है। रसायनों द्वारा मायकोटॉक्सिन का प्रबंधन प्रमुख अनाज फसलों के लिए सफलतापूर्वक किया गया है, लेकिन अन्य महत्वपूर्ण फसलों के लिए, कोई विधि स्थापित नहीं की गई है। मानव और जानवरों पर रसायनों के हानिकारक प्रभावों के कारण, हम जैविक नियंत्रण द्वारा माइकोटॉक्सिन के प्रबंधन पर ध्यान केंद्रित कर रहे हैं। *एस्परगिलस फ्लेवस* द्वारा उत्पादित एफ्लाटॉक्सिन अनाज फसलों के एक बड़े समूह को प्रभावित करता है, इसलिए शोधकर्ता वर्तमान में एफ्लाटॉक्सिन के लिए जैविक नियंत्रण दृष्टिकोण पर ध्यान केंद्रित कर रहे हैं। उन्नत फसल से पहले और बाद के तरीके, माइकोटॉक्सिन प्रबंधन में मदद कर सकते हैं लेकिन एकीकृत तरीकों का उपयोग फसलों में मायकोटॉक्सिन का अधिक प्रभावी प्रबंधन भी प्रदान कर सकता है। दुर्भाग्य से, किसानों और उत्पादकों को मायकोटॉक्सिन, माइकोटॉक्सिजेनिक कवक एवं उनके प्रबंधन के बारे में थोड़ा ज्ञान है।

भविष्य की रणनीति

भविष्य में खाद्य आपूर्ति श्रृंखलाओं के लिए मायकोटॉक्सिन एक बड़ी चिंता का विषय बनने की उम्मीद है। मायकोटॉक्सिन का पता लगाने, उन्हें प्रबंधित करने और भोजन आपूर्ति में मायकोटॉक्सिन से संबंधित बीमारियों को कम करने में मदद पर शोध केंद्रित करने की आवश्यकता है। मायकोटॉक्सिन को एक उभरती हुई चिंता के रूप में माना जाना चाहिए और उपभोक्ता को कम जोखिम के लिए उन्हें नियंत्रण में रखने की कोशिश करनी चाहिए। लोगों के जीवन को बचाने के लिए उनके अग्रदूत कवक को नियंत्रित करने के लिए कई उपकरण विकसित किए जाने चाहिए।

अमरुद की वैज्ञानिक बागवानी

मधुबाला ठाकरे, पूनम मौर्या, शुभम जग्गा, संजय सिरोही, अमित कुमार गोस्वामी एवं चवलेश कुमार

फल एवं औद्यानिकी प्रौद्योगिकी संभाग, भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110 012

अमरुद को "ऊष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों का सेब" कहा जाता है। यह उपाधि इसे इसकी पौष्टिक गुणवत्ता की वजह से दी जाती है। इसके न सिर्फ फलों का बल्कि पेड़ के सभी भागों का उपयोग बहुत-सी बीमारियों को ठीक करने के लिए किया जाता है। फलों में यह विटामिन-सी का तीसरा सबसे बड़ा स्रोत है तथा कैल्शियम एवं रेशों से भी भरपूर है। यह आर्थिक दृष्टि से भी किसानों के लिए एक उत्तम विकल्प है। यही वजह है कि पिछले कुछ वर्षों में किसानों का इस फल की बागवानी के प्रति रुझान बड़ा है। भारत विश्व में अमरुद उत्पादन में अग्रणी स्थान रखता है। कुछ बहुत कम या अधिक तापमान एवं वर्षा वाले स्थानों को छोड़कर इसकी बागवानी देश के सभी भागों में होती है। ऐसे क्षेत्र जहां शीत ऋतु काफी ठंडी तथा ग्रीष्म ऋतु में पर्याप्त गर्मी होती है, इसके उत्पादन के लिए उपयुक्त होते हैं। अमरुद की बागवानी बहुत अधिक जटिलता भरी नहीं है। कुछ तथ्यों को ध्यान में रखकर सफलतापूर्वक इसकी वैज्ञानिक बागवानी की जा सकती है। इस लेख में सर्वप्रथम इसकी प्रमुख समस्याओं के समाधान के बारे में बात की गई है, तत्पश्चात ऋतुओं के अनुसार इसके बागों की देखभाल की जानकारी वर्णित है, जो निम्नलिखित है:

1. **उकठा (विल्ट) रोग एवं सूत्रकृमि:** यह दो अलग- अलग समस्याएं हैं, किंतु परस्पर जुड़ी हुई हैं। उकठा रोग मुख्यतः फयूसरियम नामक फफूंद से होता है, जिसकी बहुत सी प्रजातियां इस रोग से जुडी हुई है। इसमें फफूंद जड़ों में उपस्थित घाव से प्रवेश करता है, और पौधे के जाइलेम को अपनी माइसेलियम से बंद कर देता है, जिसकी वजह से मृदा से पानी और पोषक तत्त्व पौधे की पत्तियों तक नहीं पहुंच पाते हैं। परिणामस्वरूप पौधा धीरे-धीरे सूखने लगता है। मेलिडोगाइने एन्टेरोलोबाई नामक निमेटोड अमरुद की जड़ों में गांठे बनाकर परजीवी की तरह रहता है। इसकी वजह से जड़ें अपना काम ठीक से नहीं कर पाती हैं, जिससे पौधों की वृद्धि प्रभावित होती है।

   उकठा रोग एवं सूत्रकृमि दोनों ही मिलकर अमरुद में पतन का कारण है। निमेटोड के संक्रमण की वजह से उकठा रोग के फफूंद को पौधों में प्रवेश का रास्ता मिल जाता है, और दोनों मिलकर अमरुद के पौधे के सूखने का कारण बनते है। इन दोनों का शुरुवाती दौर में प्रबंधन बहुत आवश्यक है।

प्रबंधन: पौधों की जड़ों में किसी तरह की चोट ना लगे, जो कि फफूंद के लिए प्रवेश द्वार बने। बाग में किसी भी प्रकार की अंतर-सस्य क्रिया को सोच समझ के करना चाहिए। यदि किसी पौधे में विल्ट के लक्षण दिखाई दे रहें हैं, तो उसमें प्रणालीगत कवकनाशी (कार्बेन्डाजिम, 2 ग्राम/ ली.) के घोल को जड़ों में फुहारे की सहायता से डालें। लक्षणों के आधार पर इसे दोहराए, यदि फिर भी पेड़ ठीक ना हो, तो उसे उखाड़कर बाग से दूर कर दें तथा गड्ढे को खुला रख कर उसे कार्बेन्डाजिम (2-3 ग्राम/ ली.) से उपचारित करें। इसके अलावा बाग में खुला पानी विधि से सिंचाई व जल जमाव न होने दें।

सूत्रकृमि से ग्रसित पौधे की पर्याप्त वृद्धि नहीं होती और बहुत अधिक प्रकोप होने की स्थति में पौधे सूख जाते हैं। इनके प्रबंधन के लिए निमेटीसाइड का उपयोग करना चाहिए। नर्सरी से सूत्रकृमि ग्रसित पौधों का रोपण इनके फैलने का एक प्रमुख है। अतः रोपण पूर्व निमेटीसाइड से नए पौधों को उपचारित करना अत्यंत आवश्यक है।

2. **फल मक्खी:** यह अमरुद का एक बहुत ही हानिकारक कीट है [चित्र-1. (iii-v)]। इसका प्रकोप वर्षा ऋतु के फलों पर अधिक होता है। जून के महीने में मादा फल मक्खी फलों के अंदर अंडे दे देती है, इनमें से इल्लियां निकल कर फल को ख़राब कर देती है व फल खाने योग्य नहीं रहते। इसलिए इसका प्रबंधन मक्खी द्वारा अंडे देने से पहले किया जाना आवश्यक है।

प्रबंधन: फल मक्खी का सबसे आसान प्रबंधन करने का तरीका फलों की बैगिंग है। इसके लिए विभिन्न प्रकार के पेपर बैग्स इत्यादि बाजार में आसानी से उपलब्ध हैं। जब फल नींबू के

आकर के या उससे थोड़े छोटे होते हैं, तभी बैगिंग करना उचित होता है। इसके अतिरिक्त मिथाइल यूजीनोल के फेरोमोन ट्रैप्स का भी उपयोग किया जा सकता है, जो बाजार में आसानी से उपलब्ध हैं। इन दोनों तरीकों से फल मक्खी का प्रबंधन अमरुद की जैविक बागवानी में भी किया जा सकता है। इसके अलावा बाग में साफ सफाई रखना, फल तुड़ाई की पश्चात जुताई करना तथा समय पर प्रणालीगत कीटनाशी जैसे इमिडाक्लोरोपिड (3 मिली/10 ली) का छिड़काव करना है।

3. **सघन बागवानी का प्रबंधन:** आजकल अमरुद को ज्यादातर सघन बागवानी में लगाते हैं। अमरुद में फूल नए प्ररोह पर आते हैं, इसलिए इसमें कई बार प्रूनिंग करना संभव है, क्योंकि हर बार प्रूनिंग के बाद जो नए प्ररोह निकलेंगे, उन पर फूल आएंगे और फलत पर कोई असर नहीं पड़ेगा। पहले अमरुद को 6 मी × 6 मी की दूरी या इससे अधिक दूरी पर पर लगाया जाता था, किंतु अब इसका रोपण 3 मी × 3 मी, 4 मी × 4 मी और मीडो बागवानी में 2 मी x 1 मी पर किया जाता है। प्रूनिंग का समय, स्थान विशेष की जलवायु पर निर्भर करता है। ऐसे स्थान जहां सर्दियों में ठंड होती है, जैसे कि उत्तर भारत के इलाके, वहां निम्नलिखित प्रूनिंग प्रक्रिया को अपनाया जा सकता है। सघन बागवानी की बात करें तो अमरुद को 3 मी x 1.5 मी, 3 मी x 3 मी, और 3 मी x 6 मी पर भी अमरुद लगाते हैं। इस सघनता में अमरुद को बाग में लगाने के एक-दो माह बाद पौधों को ज़मीन से 60-70 सेमी पर कांट देना चाहिए। इसका उद्देश्य इस ऊंचाई से मुख्य तने पर नई शाखाओं की वृद्धि को प्रोत्साहित करना है। हमेशा एक बात ध्यान में रखना चाहिए कि जितनी कम दूरी (अधिक घना) पर बाग लगाते हैं, मुख्य तने पर प्राथमिक शाखाओं की ज़मीन से ऊंचाई उतनी कम होनी चाहिए। इसके बाद जो नई शाखांए निकलेगी उनमें से तीन-चार प्राथमिक शाखाओं का चयन करके उन्हें बढ़ने देना चाहिए, जिन्हें 4 से 5 महीने बाद इनकी लंबाई का 50% कांट देना चाहिए। फिर इन्हें 3-4 महीने बढ़ने देना चाहिए उसके बाद पुनः 50% कांट देना चाहिए। यह प्रक्रिया दो साल तक करनी चाहिए। इसके पश्चात साल में दो बार प्रूनिंग (लंबाई का 50% कांटना) करना चाहिए, पहले जनवरी-फरवरी तथा दूसरा मई-जून में।

   अमरुद को मीडो बागवानी (2 मी x 1 मी) में पौधों को ज़मीन से 30-40 सेमी ऊपर कांट कर, 3-4 शाखाओं का चयन करके उन्हें बढ़ने दिया जाता है, जिन्हें 3-4 महीने के बाद उनकी लंबाई का 50% कांट दिया जाता है। इस प्रक्रिया को फिर से दोहराया जाता है। जब पौधों में फूल आना प्रारंभ हो जाते हैं, तब वर्ष में तीन बार (जनवरी-फरवरी, मई-जून और सितंबर-अक्टूबर) प्रूनिंग करनी पड़ती है, और हर बार शाखाओं को उनकी लंबाई के 50% तक कांट दिया जाता है। इन तीन समय पर प्रूनिंग करने के बाद फूल क्रमश: जुलाई-सितंबर, दिसंबर-जनवरी और मार्च-अप्रैल में आते हैं। पांच साल के बाद जब पौधे ज्यादा घने हो जाते हैं, तो उनके छत्रक का 50% भाग हटा देना चाहिए।

   ऐसे क्षेत्र जहां वर्ष भर सामान्य तापमान रहता है, वहां पर वर्ष-पर्यन्त वानस्पतिक वृद्धि चलती रहती है, वहां हल्की प्रूनिंग किसी भी समय की जा सकती है। इन स्थानों में अमरुद के पौधे के कुछ प्ररोहों के ऊपरी सिरों को हटा दिया जाता है। जिससे नए प्ररोह निकल पाएं और वो वृद्धि करने के पश्चात कलियां उत्पन्न करें। जब अमरुद को सामान्य दूरी पर लगाया जाता है तब उसमें सर्दियों के फलों की तुड़ाई के बाद प्रूनिंग की जाती है। इस प्रूनिंग में टूटी हुई शाखाओं को हटाया जाता है इसके अलावा एक दूसरे को कांटने वाली शाखाओं को भी हटा दिया जाता है (चित्र-2)।

उचित मूल्य: फलों का उचित मूल्य ना मिलना, अमरुद की एक आम समस्या है। सामान्यतः अमरुद का मंडी में थोक मूल्य 20-50 रुपए/किग्रा जाता है जबकि खुदरा मूल्य 50-100 रुपए/किग्रा मिलता है। यह मूल्य किस्म एवं समय के हिसाब से निर्धारित होता है। अतः यह आवश्यक है कि किसान अपने क्षेत्र में अमरुद लगाने से पहले मार्केटिंग की सभी पहलुओं पर विचार कर लें। फलों की अच्छे मूल्य के लिए किसानों को मिलकर समूह बनाकर मार्केटिंग करनी चाहिए। इससे वे बिचौलिए की वजह से होने वाले नुकसान से बच सकते हैं।

4. **अमरूद की उन्नत किस्में:** अमरूद की बहुत सी उन्नत किस्में उपलब्ध हैं, जिनका विवरण तालिका-1. में वर्णित है। किसान भाईयों को किस्म का चयन करने से पूर्व रोपण दूरी, अपने क्षेत्र की मृदा एवं जलवायु, संसाधनों की उपलब्धता (खाद, उर्वरक, श्रमिक इत्यादि) एवं तकनीकी ज्ञान को ध्यान में रखना चाहिए।

5. **फसल नियंत्रण:** अमरुद में वर्षा ऋतु के फलों की गुणवत्ता

अच्छी नहीं होती है। इसलिए भारत के बहुत से भागों में शीत ऋतु/सर्दियों की फसल लेना ज्यादा पसंद करते हैं। इसके लिए वर्षा ऋतु के फलों के फूल जो कि अप्रैल-मई के माह में आते हैं, को विभिन्न विधियों द्वारा हटाना होता है। यही वह समय होता है जब पेड़ पर नए प्ररोह आते हैं, जिन पर कलियां, फूल एवं फल आते हैं, जो वर्षा ऋतु में परिपक्व होते हैं। यदि किसान वर्षा ऋतु में फल नहीं लेना चाहते हैं या कम लेना चाहते हैं तो इसी समय वे फसल नियंत्रण कर सकते हैं। फसल नियंत्रण के लिए विधि का चयन स्थान विशेष पर निर्भर करता है। फसल नियंत्रण की विधियों में कांट-छांट, वृद्धि-नियामकों या कहीं-कहीं तो यूरिया का उपयोग भी किया जाता है। इसमें से सबसे अच्छी विधि कांट-छांट है। अप्रैल के अंतिम सप्ताह में फलयुक्त प्ररोह में एक जोड़ा पत्ती कृंतन किया जा सकता है। इस विधि में नए कल्लों के आधार पर एक जोड़ा पत्ती को छोड़कर शेष ऊपर के भाग को कांट देते हैं। इस तरह फूल एवं कलियां जो कि नए कल्लों के ऊपर होती हैं (जो वर्षा ऋतु में फल उत्पन्न करती) वृक्ष से अलग हो जाती है। इस विधि का एक और लाभ यह है कि कृन्तन के बाद नीचे गिरी पत्तियां ग्रीष्म ऋतु में पलवार की तरह काम करती है। और भूमि में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा बढ़ाती है। यह कार्य अप्रैल माह से लेकर मई के शुरुआती दिनों तक चलता है। किंतु ऐसे क्षेत्र जंहा वर्ष भर तापमान सामान्य रहता है अर्थात अधिक ठंड नहीं पड़ती वंहा पर फसल नियंत्रण की आवश्यकता नहीं होती। सिर्फ गर्मियों में जब तापमान अधिक होता है तब कलियों को या कलीयुक्त प्ररोह के कुछ भाग को हटा दिया जाता है। क्योंकि उस समय अधिक तापमान की वजह से फूल से फल नहीं बन पाते हैं।

इन प्रमुख समस्याओं के अलावा भी बहुत से ऐसे आयाम हैं जिनका ध्यान रखना बहुत आवश्यक है।

ग्रीष्म ऋतु में तापमान वृद्धि की वजह से कम अंतराल में सिंचाई की आवश्यकता होती है। सिंचाई के लिए टपक सिंचाई विधि सबसे उपयुक्त होती है। इसके अलावा यदि थाला विधि द्वारा सिंचाई कर रहे हैं तो चित्र-3. में दिखाए गए तरीके से करें। इससे बाग में उकठा रोग का संक्रमण नहीं फैलता है। जून माह के अंत तक मानसून आ जाता है इसलिए बाग की अच्छी से सफाई करें एवं इंडोफिल एम-45 (0.2%) या **बेविस्टीन** (0.1-0.2%) का छिड़काव करें। जिससे वर्षा ऋतु में फलों में एन्थ्रक्नोज [चित्र(vii)] ना आने पाए। गर्मियों में चलने वाली तेज हवाओं से यदि कुछ शाखाएं टूट गई है तो उन्हें कांट कर अलग कर दें और यदि पेड़ झुक गए हैं तो उन्हें लकड़ियों की सहायता से सहारा दें। बाग को अच्छी तरह से साफ करें, खरपतवार ना रहने दें। कुछ खरपतवार भी फल मक्खी की जनसंख्या वृद्धि में सहायता करते हैं। यदि फल मक्खी की समस्या अधिक है तो स्पिनोसैड (3-5 मिली./10 ली.) का छिड़काव कर सकते हैं। यदि तनों पर कैंकर रोग का प्रकोप दिख रहा है [तनों एवं टहनियों की छाल बीच मे से चिटक कर सूखने लगती है, चित्र-1. (i)], तो रोगग्रस्त स्थान को तेज चाकू से थोड़ा छील कर ब्लाईटाक्स -50 के गाढे घोल का लेप लगाए।

वर्षा ऋतु में वर्षा की वजह से बाग में खरपतवार बहुत बढ़ जाते हैं उन्हें समय से नष्ट करें। बाग में कहीं भी जल जमाव ना होने दें। वृक्ष के नीचे थालों को अच्छे से साफ करके नाइट्रोजन की आधी मात्रा डालें (जुलाई माह में)। बाग की मृदा का परीक्षण करवाकर ही उसमें पोषक तत्वों को डालें। सामान्यतः अमरुद के छह वर्ष के वृक्ष के लिए नाइट्रोजन 450 ग्राम, फॉस्फोरस 400 ग्राम एवं 600 ग्राम पोटैशियम की आवश्यकता होती है। इसलिए 225 ग्राम नाइट्रोजन (लगभग 490 ग्राम यूरिया) प्रति वृक्ष की दर से डालें। इस समय फिर इंडोफिल एम-45 या बेविस्टीन का छिड़काव करें। फलों की सही समय पर तुड़ाई करते रहें। पक्षियों से फलों की रक्षा करें। सितंबर माह में छाल भक्षी इल्ली [चित्र (ii)] की रोकथाम का प्रबंध करें। जहां-जहां तने और शाखाओं पर जाला जैसा दिखाई दें, वहां पर इसका प्रकोप होता है। जाले को हटा कर उसके समीप स्थित छिद्र में तार या साइकिल का स्पोक डालकर घुमाएं। इसके पश्चात रुई या कपड़े के छोटे से भाग को केरोसीन या पेट्रोल में डुबाकर छेद में डालें। तत्पश्चात छेद को गीली मिट्टी से बंद कर दें। जुलाई-अगस्त में बोरेक्स 0.6-0.8 प्रतिशत का छिड़काव करें। इसका छिड़काव 15-20 दिन बाद फिर से किया जा सकता है। बोरोन की कमी की वजह से फल ज्यादा बढ़ते नहीं तथा कड़क रहते हैं। एवं बीज के पास भूरे-काले रंग के धब्बे पाए जाते हैं। फल मक्खी के प्रकोप से बचने के लिए मिथाइल यूजीनोल के फेरोमोन ट्रैप [चित्र-1. (vi)] का प्रयोग करना चाहिए। फल मक्खी से ग्रसित फलों को यहां-वहां ना फेंके। एक गड्ढे

में डालें और उसे मिटटी से बंद कर दें। अमरुद में स्टाइलर एन्ड सड़न से बचाओं के लिए कॉपर ऑक्सीक्लोराइड का 0.3% (3 ग्राम/ली.) का छिड़काव शीत ऋतु के फल बनने के पहले करें। अमरुद में मीली बग का प्रकोप भी होता है [चित्र(viii)] बहुत से सफ़ेद रंग के रुई के समान कीट प्ररोहों पर दिखाई देते हैं। यदि प्रकोप कम है तो प्रभावित प्ररोहों को तोड़कर गड्ढों में दबा दें। किंतु यदि प्रकोप ज्यादा है तो इससे बचाओं के लिए थायमेथोक्सम का छिड़काव (5 ग्राम /10 ली.) करें। शीत ऋतु में फलों की तुड़ाई करें। जैसे ही यह कार्य समाप्त होंगे, बाग की सफाई करें। टूटी, सूखी, रोगग्रस्त, ज़मीन को छूती शाखाओं तथा अवांछित शाखाओं को कांट दे। तथा कटे हुए भागों पर ब्लाइटॉक्स या बोर्डो पेस्ट लगाएं। आवश्यकतानुसार सिंचाई करें। समय-समय पर खरपतवार हटाते रहें। अक्टूबर माह में नाइट्रोजन की शेष मात्रा (225 ग्राम/ वृक्ष अर्थात 490 ग्राम यूरिया/ वृक्ष) डालें। सर्दियों के फलों को समय-समय पर तोड़ते रहें। ध्यान रहे की किसी भी क्रिया से फलों की बाहरी सतह पर कोई चोट ना आए। उन्हें साफ करके, श्रेणीकरण करके अच्छी तरह से पैक करके मार्केटिंग करनी चाहिए। पक्षियों से फलों की रक्षा करें। फलों की तुड़ाई समाप्त हो जाए तो, बाग की अच्छी तरह से सफाई करें। अब 50-60 किलोग्राम गोबर की अच्छी से सड़ी हुई खाद तथा फॉस्फोरस एवं पोटाश [400 ग्राम प्रति वृक्ष (1.25 किलोग्राम डबल सुपर फॉस्फेट) एवं 600 ग्राम प्रति वृक्ष (1 किलोग्राम सल्फ़ेट ऑफ़ पोटाश) क्रमशः] डालें। इन्हे वृक्ष के छत्रक के नीचे एक पट्टी के रूप में डालकर 20-30 सेमी. गहराई तक मिला दें। टूटी, सूखी तथा अवांछित शाखाओं को कांट दें।

तालिका-1: भारत में उगाई जाने वाली अमरूद की उन्नत किस्में

क्र. सं.	किस्म	जनक किस्में	मुख्य विशेषताएं	संस्थान
1.	इलाहाबाद सफेदा	अंकुरीय वरण	फल गोल, चिकनी सतह, बीज कम, मध्यम आकार (180 ग्राम), पीला-सफेद गूदा युक्त तथा अधिक विटामिन सी युक्त होते हैं। इस किस्म की भंडारण क्षमता काफी अच्छी है, ये लंबे समय तक फ्रेश रहते हैं	इलाहाबाद (प्रयागराज), उत्तर प्रदेश
2.	एल- 49 (सरदार)	इलाहाबाद सफेदा का अंकुरीय वरण	अर्ध-बौने पेड़, बड़े फल (250-500 ग्राम), हरी-पीली त्वचा, दूधिया सफेद गूदा, अधिक उपज देने वाले और नरम, मीठे गूदे के लिए जाना जाता है	गणेशखिंड फल अनुसंधान केंद्र, पुणे
3.	पंत प्रभात	इलाहाबाद सफेदा का अंकुरीय वरण	अत्यधिक उत्पादक; गुणवत्ता और उपज में उत्कृष्ट, मध्यम आकार, चिकनी सतह, सफेद गूदा, मध्यम-नरम बीज तथा विशिष्ट सुगंधयुक्त फलों लिए जाना जाता है	गोविन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, पंतनगर, उत्तराखंड
4.	पंजाब पिंक	पुर्तगाल × L-49	गुलाबी गूदे वाली अमरूद की संकर किस्म। चिकनी सतह, मध्यम-बड़े फल, ताजा खाने और प्रसंस्करण के लिए उपयुक्त है	पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना, पंजाब
5.	अर्का मृदुला	इलाहाबाद सफेदा का अंकुरीय वरण	गोल आकार, चिकनी पीली सतह, सफेद गूदा, मुलायम बीज। औसतन वजन 180-200 ग्राम, अधिक पेक्टिन होने के कारण यह जेली बनाने के लिए उपयुक्त है। इस किस्म की भंडारण क्षमता भी काफी अच्छी होती है	भा.कृ.अनु.प.-भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान, बेंगलुरु
6.	अर्का किरन	कामसारी x पर्पल लोकल	फल गोल, मध्यम आकार (200-230 ग्राम), गहरा लाल गूदा, मध्यम मुलायम बीज तथा अधिक लाइकोपीन वाले होते हैं। इसमें एक वर्ष के भीतर फलन शुरू हो जाता है	भा.कृ.अनु.प.-भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान, बेंगलुरु

क्र. सं.	किस्म	जनक किस्में	मुख्य विशेषताएं	संस्थान
7.	अर्का पूर्णा	पर्पल लोकल × इलाहाबाद सफेदा	फल गोल, मध्यम से बड़े आकार के (200-230 ग्राम) चिकने, चमकदार छिलके वाले होते हैं। गूदा सख्त, सफेद, कुल ठोस पदार्थ (10.0-12.0° ब्रिक्स), अधिक विटामिन सी (190-198 मिलीग्राम/100 ग्राम गूदा) से युक्त है। ताजा खाने और प्रसंस्करण के लिए उपयुक्त, मध्यम- सघन बागवानी के लिए भी उचित है	भा.कृ.अनु.प.-भारतीय बागवानी, अनुसंधान संस्थान, बेंगलुरु
8.	ललित	एप्पल कलर से चयनित	फल गोल, मध्यम आकार (185-225 ग्राम), केसरी-पीली सतह, गुलाबी गूदे एवं मोटे छिलके वाले होते हैं। फल विटामिन सी से भरपूर; पेय पदार्थों में स्थिर गुलाबी रंग देते हैं। यह किस्म कांट-छांट के प्रति अत्यधिक संवेदनशील है	केंद्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ
9.	श्वेता	एप्पल कलर से चयनित	फल कम बीज, गोल, मुलायम और सफेद गूदे वाले होते हैं। यह पीले रंग की आभायुक्त मध्यम आकार की किस्म है जिसमें कभी-कभी लालिमा भी उभर आती है। फल अत्याधिक विटामिन सी (300 मिलीग्राम/100 ग्राम गूदा) युक्त तथा उत्कृष्ट गुणवत्ता वाले होते हैं	केंद्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ
10.	हिसार सफेदा	इलाहाबाद सफेदा × सीडलैस	यह चिकनी पीली-हरी सतह, कम बीज और सफेद गूदे वाली किस्म है। इसके फल अधिक मिठास और खाने में काफी स्वादिष्ट होते हैं। इस अमरूद की खेती मध्यम वर्षा वाले इलाकों में अच्छी तरह से की जा सकती है	चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार, हरियाणा
11.	हिसार सुरखा	एप्पल कलर अमरूद × बनारसी सुरखा	इसका फल गोल और छिलका हल्के पीले रंग का होता है। फल का गूदा गुलाबी रंग का होता है जो अधिक मिठास वाला होता है	चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार, हरियाणा
12.	वीएनआर बिही	-	यह बड़े फल (300-1000 ग्राम), एक समान रंग, न्यूनतम बीज गुहा, मोटे छिलके और साल भर उत्पादन देने वाली किस्म है। इसमे पानी की कमी और उच्च आर्द्रता के प्रति अच्छी प्रतिरोधक क्षमता पाई जाती है	वीएनआर नर्सरी
13.	पूसा आरुषि	पंत प्रभात × अर्का किरन	फल मध्यम आकार (200-220 ग्राम), गुलाबी गूदे, बीज कम और मुलायम तथा अधिक कुल ठोस पदार्थ (12.5-13.0° ब्रिक्स) से युक्त होते हैं। फल अधिक विटामिन सी (160-180 मिलीग्राम/100 ग्राम गूदा) युक्त तथा प्रसंस्करण के लिए उपयुक्त होते हैं। यह किस्म सघन बागवानी के लिए भी उचित है	भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली
14.	पूसा प्रतीक्षा	हिसार सफेदा × पर्पल अमरूद	इसका फल मध्यम आकार (175-190 ग्राम), सफेद गूदे, बीज कम और मुलायम तथा अधिक कुल ठोस पदार्थ (12.0-13.0° ब्रिक्स), अधिक विटामिन सी (190.0-210.0 मिलीग्राम/100 ग्राम गूदा) युक्त है	भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

क्र. सं.	किस्म	जनक किस्में	मुख्य विशेषताएं	संस्थान
15.	त्रिची-1	-	यह चमकीले हरे पीले रंग, कुल ठोस पदार्थ (10.0° ब्रिक्स), अधिक विटामिन सी (181.0 मिलीग्राम/100 ग्राम गूदा) युक्त, तथा बेमौसमी फल देने वाली किस्म है	अनिल धर्मलिंगम कृषि महाविद्यालय और अनुसंधान संस्थान, तमिलनाडु कृषि विश्वविद्यालय कोयंबटूर, तमिलनाडु
16.	ताइवान पिंक	-	फल मध्यम आकार का, अंडाकार, गुलाबी गूदे वाला, और इसकी त्वचा हल्की हरी, थोड़ी ऊबड़-खाबड़ हो सकती है	ताइवान

(i) तना कैंकर से ग्रसित अमरुद का पेड़

(ii) छाल भक्षी इल्ली का प्रकोप

(iii) अमरुद में फल मक्खी का प्रकोप

(iv) अमरुद के फल की सतह पर फल मक्खी द्वारा किए गए छिद्र

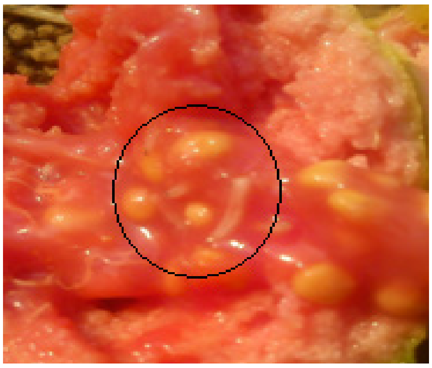
(v) फल मक्खी की इल्ली

(vi) मिथाइल यूजीनोल का फेरोमोन ट्रैप

(vii) स्टाइलर एन्ड सड़न

(viii) मीली बग का प्रकोप

चित्र-2: ज़मीन को छूती हुई शाखाओं को एवं एक दूसरे को कांटती हुई शाखाओं को फलों की तुड़ाई के पश्चात कांट दें

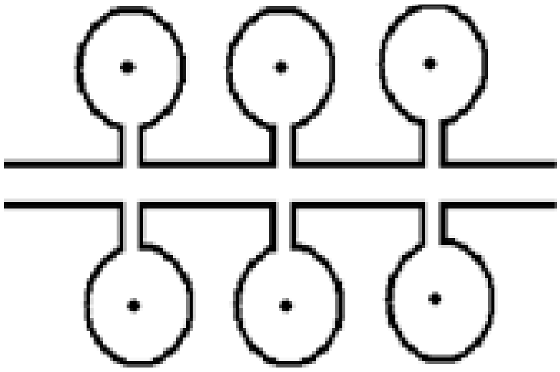

चित्र-3: अमरुद में थाला विधि द्वारा सिंचाई

आम की सघन बागवानी तकनीक से किया कमाल : एक प्रगतिशील किसान की करोड़पति बनने की कहानी

नरेंद्र मोहन सिंह[1], अलका सिंह[1], नफ़ीज़ अहमद[2], निशी शर्मा[2] एवं प्रतिभा जोशी[2]

[1]कृषि अर्थशास्त्र संभाग एवं [2]कृषि प्रौद्योगिकी आकंलन एवं स्थानांतरण केंद्र
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110 012

हमारे देश में भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली के कृषि वैज्ञानिकों के अथक प्रयासों व कड़ी मेहनत द्वारा विकसित की गई आधुनिक तकनीकों व फलों की प्रजातियों के दम पर बागवानी कृषि पर समुचित ध्यान केंद्रित करने से हमारे देश मे फलों के उत्पादन और निर्यात में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। भारत देश के कई राज्यों में बागवानी फसलें ग्रामीण किसानों की कमाई का मुख्य स्रोत बन चुकी है। भारत में बागवानी की वर्तमान स्थिति एक मजबूत विकास प्रक्षेपवक्र की है। हमारे देश में लगभग सभी प्रकार की उष्णीय, अर्ध उष्णीय तथा शीतकालीन बागवानी फसलें पैदा की जाती हैं। बागवानी फसलें खाद्य व पोषण सुरक्षा में महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं, साथ ही इनमें ज्यादा मात्रा में एंटीअक्सिडेंट पाए जाते हैं जो हमें रोगों से बचाते है। बागवानी कृषि में उन्नत अनुसंधान करने हेतु भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का बागवानी संभाग, 10 केंद्रीय संस्थानों, 6 निदेशालयों, 7 राष्ट्रीय अनुसंधान केंद्रों,13 अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजनाओं और 6 नेटवर्क प्रोयोजनाओं व प्रसार कार्यकर्मो के जरिए भारत में कृषि मंत्रालय के अंतर्गत भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान द्वारा बागवानी अनुसंधान पर कार्य चल रहा है। बागवानी उत्पादों में 7 गुणा वृद्धि से पोषण सुरक्षा और रोज़गार के अवसरों में वृद्धि हुई है। बागवानी कृषि का देश के कई राज्यों के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान है और कृषि जीडीपी में इसका योगदान 30.4% प्रतिशत है। भारत आम, केला, नारियल, काजू, पपीता, अनार आदि का शीर्ष उत्पादक देश है व आने वाले दिनों में हमारा देश सभी बागवानी फसलों के उत्पादन में विश्व में पहले स्थान पर होगा। गत कई दशकों से बागवानी फसलों के उत्पादन में लगातार वृद्धि 9.5 प्रतिशत वार्षिक हो रही है।

भारत सरकार द्वारा दी जा रही योजनाओं का भी पूरा लाभ सामाजिक एवं आर्थिक सशक्तिकरण के लिए उठाते हुए कुछ किसान निरंतर सफलता की ओर बढ रहे हैं, इसका श्रेय हमारे कृषि वैज्ञानिकों के साथ-साथ हमारे जागरूक किसानों को

चित्र-1: श्री धनंजय कुमार सिंह जी द्वारा आम किस्म पूसा आम्रपाली (ग्राफटेड) का सघन बागवानी तकनीक प्रदर्शन

भी जाता है जो कृषि वैज्ञानिकों के लगातार संपर्क में रहते हुए आधुनिक तकनीकी ज्ञान का प्रयोग अपनी कृषि या बागवानी में करते रहते हैं और भारत सरकार द्वारा दी जा रही योजनाओं का भी पूरा लाभ स्वयं के कल्याण के साथ–साथ ग्रामीण आर्थिक सशक्तिकरण के लिए उठाते हुए निरंतर सफलता की ओर बढ़ रहे हैं। ऐसे ही एक यशस्वी सफल किसान हैं धनंजय कुमार सिंह जी, जो ग्राम पहाड़पुर, हवेली खड़कपुर, मुंगेर के रहने वाले है। इन्होंने जिस तरह से बागवानी को समझा और एक सफलता की गाथा लिखी इसके लिए ये सम्मान के अधिकारी हैं। इसके साथ ही अब ये दूसरे किसानों के लिय भी प्रेरणा का स्रोत बनकर, उनका मार्गदर्शन कर रहे है।

श्री धनंजय कुमार सिंह जी ग्रामीण परिवेश में पले-बड़े हैं। उनके गांव की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी उनका शुरूआती जीवन बहुत संघर्षमय बीता खेती से भी परिवार का पालन मुश्किल से होता था, लेकिन उनकी ज्ञान-अर्जन, जुझारूपन, अध्यन व मेहनत करने की लगन ने सभी सफलताओं व मान-सम्मान के द्वार खोल दिए व औरों के भी कल्याण और मार्गदर्शन के निमित बन गए। साथ-साथ 15 से 20 ग्रामीण युवाओं को रोज़गार देकर ग्रामीण विकास में अपना योगदान भी दे रहे हैं। धनंजय कुमार सिंह जी कहते हैं, कि कौन कहता है कि खेती में अच्छा मुनाफा नहीं हो सकता, बस थोड़ा अलग सोचने व थोड़ा समझदारी से काम लेने की जरूरत होती है। साथ में वैज्ञानिकों के लगातार संपर्क में रहते हुए उनकी सलाह अनुसार तकनीकी ज्ञान के प्रयोग द्वारा निश्चित रूप से सफलता प्राप्त होती है,क्योंकि विभिन्न सामाजिक, आर्थिक और पर्यावरणीय चुनौतियों को दृष्टिगत रखते हुए परंपरागत खेती में कुछ अहम बदलाव करने

चित्र-2 : भा.कृ.अनु.सं द्वारा विकसित आम की किस्मों का सघन बागवानी प्रदर्शन

की आवश्यकता होती है। इन्होंने बागवानी कृषि के लिए कृषि विज्ञान केंद्र मुंगेर व भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली के साथ जुड़कर मार्गदर्शन प्राप्त किया और सिर्फ 5 बीघा से आधुनिक सिचाई (इरीगेशन) तकनीक द्वारा आम का बाग लगाकर **सघन बागवानी तकनीक से** कुछ वर्ष पहले जो शुरुआत की थी, आज 70 बीघा जमीन पर आम की बागवानी व इसके साथ-साथ इंटिग्रटेड फ़ार्मिंग सफलतापूर्वक कर रहे हैं।

धनंजय कुमार सिंह जी कहते हैं कि अध्ययन मनुष्य को समृद्धि की ओर ले जाता है व इसी अध्ययन के अंतर्गत खेती का पैटर्न बदलने में शुरूआती खर्च जरूर आया पर धीरे-धीरे मुनाफा बढ़ता गया। इन्होंने प्रचलित सब्जियों व अन्य फसलों के साथ-साथ आम का बाग लगाकर बागवानी को अपनाया व मुंगेर के आस-पास की फल मंडियों का लाभ उठाते हुए खूब मुनाफा कमाया व सफलता की पायदान चढ़ते चले गए। इन्होंने आम की कई प्रचलित किस्मों जैसे आम्रपाली, मल्लिका, पूसा अरुणिमा, पूसा सूर्या आदि को लगाया व इसके अलावा दशहरी, लंगरा व अन्य पुरानी प्रचलित आम की किस्मों में सुधार भी करते चले गए व कई नई किस्मों को भी इन्होंने विकसित किया। शुरुआत में जब इनके सामने कृषि संबंधी समस्याएं आई, तो इन्होंने ग्राम के लोगों व अपने मित्रों से इनकी चर्चा की तो मित्रों ने सलाह दी कि इसके लिए कृषि विज्ञान केंद्र मुंगेर के वैज्ञानिकों से सलाह मशवरा करना उचित होगा। श्री धनंजय कुमार सिंह जी के सामने एक और मुख्य चुनौती थी कि ग्राम के लोगों में आम का बगीचा लगाने के लिए किस तरह से रुझान व जागरूकता पैदा की जाए व साथ-साथ पौधों की आपूर्ति ग्रामीण किसानों तक करना एवं कृषि वैज्ञानिकों के दृष्टिकोण से बगीचे में अंतर्वर्ती फसल लगाना ताकि किसानों को जो पहले खेत से आमदनी हो रही थी, वो बरकरार रहे। श्री धनंजय कुमार सिंह जी चाहते थे कि किसी तरह से गांव वालों का प्रशिक्षण के माध्यम से जागरूकता जागरण हो जाए जिससे वे अपने कृषि व्यवसाय में उन्नति करें और अपनी कृषि से संबंधी समस्याओं का खुद निदान कर सकें। सबसे पहले श्री धनंजय कुमार सिंह जी ने स्वयं अपने खेत में पौधे लगाने का कार्य शुरू किया और फिर ग्रामीणों को मुफ्त पौधे दिलवाकर उनको भी खेत में पौधे लगाने को प्रोत्साहित किया व उनके खेतों में भी पौधे लगने का कार्य प्रारंभ करवाने के निमित बने।

सारणी-1: बागवानी व मुख्य फसलों का आर्थिक विवरण (वर्ष 2016-17)

क्र. स.	मुख्य फसलें	कुल भूमि/ एकड़	कुल लागत (रुपए)	कुल आय (रुपए)	शुद्ध आय (रुपए)
1	आम	20	150000	640000	490000
2	धान	4	20800	76800	56000
3	गेहूं	1	4200	16000	11800
4	दलहनी	2	9000	24000	15000
5	सरसों	1	5000	12000	7000
6	पशुपालन /डेरी	5	110250	315000	204750
7	मछली पालन	1	50000	160000	110000

सारणी-2: बागवानी व मुख्य फसलों का आर्थिक विवरण (वर्ष 2020-21)

क्र. स.	मुख्य फसलें	कुल भूमि/ एकड़	कुल लागत (रुपए)	कुल आय (रुपए)	शुद्ध आय (रुपए)
1	आम	20	140000	1440000	1300000
2	धान	4	30000	135000	105000
3	गेहूं	1	6500	25650	19150
4	दलहनी	2	13000	55000	42000
5	सरसों	1	4500	22500	18000
6	पशुपालन /डेरी	5	220500	490000	269500
7	मछली पालन	1	75000	250000	175000
	शुद्ध आय	34	489500	2418150	1928650

इस तरह से कृषि विज्ञान केंद्र मुंगेर के वैज्ञानिकों के संपर्क व देखरेख में आम की बागवानी शुरू की व सफलता के मार्ग को प्रशस्त किया। बगीचा लगाने का उचित समय का चुनाव, प्रभेदों का चुनाव, खाद व उर्वरकों का उचित उपयोग एवं मात्रा, कीटनाशी एवं फफूंदीनाशक आदि का प्रयोग, पौधों की पौधों से उचित दूरी, आम के पौधों से कलम तैयार करना व पौधों की देखभाल आदि का प्रशिक्षण खुद के साथ –साथ ग्रामीणों को भी दिलवाकर ग्रामीण उत्थान में अपना संपूर्ण सहयोग तन-मन-धन लगाकर दिया, जिसके लिए वे सच में सम्मान के अधिकारी है।

प्रगतिशील किसान 'कृषि अवार्ड' से सम्मानित: श्री धनंजय कुमार सिंह जी को वर्ष 2007 में प्रखंड स्तर पर अपने जिले कृषि विभाग से किसान श्री का सम्मान प्राप्त हुआ व वर्ष 2007 में ही हरिहरपुर कृषि मेले में इन्हें कुल 11 प्रदर्शनों पर प्रथम एवं दूसरा पुरस्कार के साथ-साथ उद्यान पंडित का भी सम्मान प्राप्त हुआ। वर्ष 2011 में मुंगेर के पोलो मैदान में आयोजित उद्यान महोत्सव में सब्जी के बीजोत्पादन एवं फल उत्पादन पर प्रथम पुरस्कार हासिल कर अपने पहाड़पुर ग्राम को आम ग्राम के नाम से ख्याति दिलाने का श्रेय प्राप्त किया। इनके कठिन परिश्रम व लगातार कृषि वैज्ञानिकों से संपर्क द्वारा बागवानी को एक उत्तम स्तर पर ले जाने के लिए वर्ष 2017 में बिहार कृषि विश्वविद्यालय द्वारा 'प्रगतिशील कृषि अवार्ड' से सम्मानित किया गया।

चित्र-3: श्री धनंजय कुमार सिंह जी ने माननीय कृषि मंत्री द्वारा वर्ष 2020 में नवाचारी किसान अवार्ड' से सम्मानित करते हुए

भा.कृ.अनु.प.-भातीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा नई दिल्ली में माननीय कृषि मंत्री द्वारा वर्ष 2020 में भा.कृ.अनु.प. नवाचारी किसान अवार्ड' से सम्मानित किया गया जिसमें माननीय कुलपति प्रोफ़ेसर व भा.कृ.अनु.प. के महानिदेशक व भातीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा नई दिल्ली के निदेशक डॉ. अशोक कुमार सिंह उपस्थित थे **(चित्र-3.)** एवं तत्पश्चात वर्ष 2023 में माननीय प्रधानमंत्री द्वारा **करोड़पति** किसान का सम्मान प्राप्त हुआ। वर्ष 2024 में उन्हें जिला पदाधिकारी मुंगेर द्वारा यशस्वी किसान का गौरव प्राप्त हुआ।

राजभाषा खंड...

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान

राजभाषा प्रगति रिपोर्ट

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110 012

हिंदी चेतना मास का आयोजन

संस्थान में प्रतिवर्ष की भांति इस वर्ष भी दिनांक 01 सितंबर से 30 सितंबर, 2024 तक हिंदी चेतना मास के रूप में मनाया गया। चेतना मास का उद्‌घाटन दिनांक 02 सितंबर, 2024 को जल प्रौद्योगिकी केंद्र के सभागार में आयोजित किया गया। इस अवसर पर डॉ. विश्वनाथन चिन्नुसामी, संयुक्त निदेशक (अनुसंधान) एवं डॉ.पी.एस. ब्रह्मानंद, परियोजना निदेशक, जल प्रौद्योगिकी केंद्र मुख्य अतिथि के रूप में तथा श्रीमती सीमा चोपड़ा, पूर्व निदेशक (राजभाषा) एवं श्री सारस्वत मोहन मनीषी, प्रसिद्ध कवि को इस कार्यक्रम के विशिष्ट अतिथि के रूप में आमंत्रित किया गया था। सर्वप्रथम मां सरस्वती की वन्दना की गई तथा दीप प्रज्ज्वलन के साथ कार्यक्रम का शुभारंभ किया गया तदुपरांत मुख्य अतिथि एवं विशिष्ट अतिथियों का पुष्पगुच्छ से स्वागत किया गया। सुश्री कृति शर्मा, तकनीकी सहायक/हिंदी अनुवादक (टी-3) ने हिंदी चेतना मास की रूपरेखा प्रस्तुत की और प्रतियोगिताओं की विस्तृत जानकारी प्रदान की, जिनमें काव्य पाठ, आशुभाषण प्रतियोगिता (तीन वर्गों यथा - 1. वैज्ञानिक वर्ग, 2. तकनीकी/प्रशासनिक वर्ग, 3. आरए/एसआरएफ/जेआरएफ/वाईपी/प्रोजेक्ट सहायक/संविदा कार्यालय सहायक/संविदा आशुलिपिक वर्ग के लिए), प्रश्न मंच, चित्र पर आधारित कहानी या काव्य लेखन, श्रुतलेख, टिप्पणी एवं मसौदा लेखन, हिंदी टंकण तथा सामान्य ज्ञान (एमटीएस/

दीप प्रज्वलन करते हुऐ परियोजना निदेशक व संभागाध्यक्ष

दैनिक वेतन भोगी कर्मचारियों के लिए) प्रतियोगिताएं आयोजित की गई।

संस्थान के संयुक्त निदेशक (अनुसंधान) ने सर्वप्रथम अपने भाषण में हिंदी भाषा के महत्व पर विशेष ध्यान आकर्षित करते हुए कहा कि हिंदी न केवल हमारी मातृभाषा है, बल्कि यह हमारे सांस्कृतिक और सामाजिक एकता का प्रतीक भी है। उन्होंने बताया कि हिंदी का प्रचार-प्रसार सिर्फ सरकारी कार्यों तक सीमित नहीं रहना चाहिए, बल्कि इसे हमारे दैनिक जीवन में भी अपनाया जाना चाहिए। हिंदी भाषा के माध्यम से हम अपनी संस्कृति, विचारों और भावनाओं को अधिक प्रभावी ढंग से व्यक्त कर सकते हैं। साथ ही, संयुक्त निदेशक (अनुसंधान) ने हिंदी चेतना मास के आयोजन का महत्व भी बताया कि इस तरह के आयोजनों से हम न केवल हिंदी भाषा के प्रति जागरूकता बढ़ाते हैं, बल्कि यह हमें अपनी रचनात्मकता और ज्ञान का प्रदर्शन करने का एक अद्भुत अवसर प्रदान करता है। इसके बाद, संयुक्त निदेशक (अनुसंधान) ने निर्णायक महोदय का स्वागत किया और सभी अधिकारियों/कर्मचारियों को हिंदी चेतना मास के दौरान आयोजित होने वाली विभिन्न प्रतियोगिताओं में बढ़-चढ़ कर भाग लेने के लिए प्रेरित किया। उन्होंने कर्मचारियों से आग्रह किया कि वे प्रतियोगिताओं का हिस्सा बनकर हिंदी भाषा के प्रति अपनी प्रतिबद्धता को और मजबूत करें। उद्घाटन सत्र के उपरांत, काव्य पाठ प्रतियोगिता का आयोजन किया गया, जिसमें संस्थान के वैज्ञानिक/तकनीकी और प्रशासनिक वर्ग के अधिकारियों/कर्मचारियों ने बड़े उत्साह और जोश के साथ भाग लिया। प्रतियोगिता का माहौल बहुत ही उत्साही और प्रेरणादायक था, जिसमें कर्मचारियों ने हिंदी कविता के माध्यम से अपने विचार, भावनाएं और अनुभव व्यक्त किए। यह प्रतियोगिता न केवल हिंदी भाषा के प्रति प्रेम को बढ़ावा देने वाली थी, बल्कि संस्थान के कर्मचारियों के बीच एकजुटता और सामूहिक प्रेरणा का भी कारण बनी। इस कार्यक्रम का समापन एक सकारात्मक और प्रेरणादायक वातावरण में हुआ,

जिसमें सभी ने हिंदी भाषा को बढ़ावा देने और उसके प्रचार में योगदान देने का संकल्प लिया।

इसके बाद, दोनों निर्णायकों महोदय ने परिणाम तैयार कर उसे घोषित किया। प्रतियोगिता में भाग लेने वाले विजयी प्रतिभागियों के नाम इस प्रकार रहे:

1. **श्री शिव कुमार सिंह**

   तकनीकी अधिकारी, आनुवंशिकी संभाग - **प्रथम**

2. **श्री अनुज कुमार मलिक**

   तकनीकी सहायक, आनुवंशिकी संभाग - **द्वितीय**

3. **श्रीमती नीलम**

   सहायक प्रशासनिक अधिकारी, पी.एम.ई.।। (आर.सी.) अनुभाग - **तृतीय**

4. **डॉ. उत्कर्ष तिवारी**

   वैज्ञानिक, कृषि अर्थशास्त्र संभाग - **प्रोत्साहन**

5. **डॉ. विष्णु माया**

   वरिष्ठ वैज्ञानिक, पादप रोग विज्ञान संभाग - **प्रोत्साहन**

काव्य पाठ प्रतियोगिता के बाद, हिंदी चेतना मास के तहत अन्य प्रतियोगिताओं का भी आयोजन किया गया। इन प्रतियोगिताओं में आशुभाषण, चित्र पर आधारित कहानी या काव्य लेखन, श्रुतलेख, टिप्पणी एवं मसौदा लेखन, हिंदी टंकण तथा सामान्य ज्ञान जैसी प्रतियोगिताएं शामिल थीं। इन प्रतियोगिताओं का उद्देश्य न केवल कर्मचारियों में हिंदी भाषा के प्रति रुचि और जागरूकता बढ़ाना था, बल्कि उनकी रचनात्मकता और विचारों को भी प्रोत्साहित करना था। इसके बाद, संस्थान के सभी वर्गों के अधिकारियों/कर्मचारियों को अन्य प्रतियोगिताओं

आशुभाजन प्रतियोगिता में भाग लेते प्रतिभागी

में भाग लेने के लिए प्रेरित किया गया, ताकि वे न केवल अपनी व्यक्तिगत क्षमताओं को उजागर करें, बल्कि हिंदी भाषा के प्रचार और प्रसार में भी योगदान दे सकें।

हिंदी कार्यशालाएं

रिपोर्टाधीन अवधी के दौरान 02 एक दिवसीय हिंदी कार्यशालाओं का आयोजिन किया गया जोकि निम्न प्रकार से है:-

कार्यशाला (अप्रैल से जून, 2024)

संस्थान मुख्यालय के समस्त संभागों/अनुभागों व इकाइयों में कार्यरत वैज्ञानिक/तकनीकी प्रशासनिक वर्ग के अधिकारियों/कर्मचारियों के लिए दिनांक 02 मई, 2024 को संस्थान के डॉ. बी.पी. पाल सभागार में, **"नए दौर के तकनीकी नवाचार और राजभाषा हिंदी"** विषय पर एक दिवसीय हिंदी कार्यशाला का आयोजन किया गया। कार्यशाला के दौरान प्रतिभागियों को राजभाषा हिंदी के महत्व और इसे तकनीकी कार्यों में प्रभावी तरीके से अपनाने के उपायों पर विस्तृत जानकारी दी गई। इसके साथ ही, उन्होंने आधुनिक तकनीकी उपकरणों और सॉफ़्टवेयर के माध्यम से हिंदी में कार्य करने की प्रक्रियाओं को सरल बनाने के उपायों पर भी चर्चा की। इस कार्यशाला का उद्देश्य न केवल राजभाषा हिंदी को बढ़ावा देना था, बल्कि तकनीकी नवाचारों के क्षेत्र में हिंदी के उपयोग को प्रोत्साहित करना भी था। उक्त कार्यशाला में 96 अधिकारियों/कर्मचारियों ने भाग लिया।

कार्यशाला (जुलाई से सितंबर, 2024)

संस्थान के कीट विज्ञान संभाग में कार्यरत वैज्ञानिक/तकनीकी/प्रशासनिक वर्ग के अधिकारियों/कर्मचारियों के लिए दिनांक 23 जुलाई, 2024 को **"राजभाषा कार्यान्वयन : समस्या और समाधान"** विषय पर एक दिवसीय हिंदी कार्यशाला का आयोजन किया गया। जिसमें प्रतिभागियों को राजभाषा हिंदी के सही प्रयोग, सरकारी कार्यों में हिंदी का प्रभावी उपयोग और राजभाषा नीति के अनुपालन के बारे में जानकारी दी गई। कार्यशाला में व्याख्याता द्वारा यह बताया गया कि किस प्रकार हिंदी भाषा को तकनीकी और वैज्ञानिक क्षेत्र में सहज रूप से लागू किया जा सकता है, ताकि कार्यों में अधिक स्पष्टता और दक्षता आए। इसके साथ ही, उपस्थित अधिकारियों/कर्मचारियों को हिंदी के महत्व को समझने और उसे प्रभावी रूप से अपने रोज़मर्रा के कार्यों में अपनाने के लिए प्रेरित किया गया। कार्यशाला में कुछ

सामान्य समस्याओं जैसे कि हिंदी में तकनीकी शब्दों का प्रयोग, अनुवाद संबंधी समस्याएं और हिंदी की सही व्याकरणिक संरचना पर भी चर्चा की गई। साथ ही, इन समस्याओं के समाधान के लिए विभिन्न उपाय और रणनीतियां साझा की गईं, ताकि सरकारी कामकाज में राजभाषा का प्रभावी रूप से पालन किया जा सके। इस कार्यशाला का मुख्य उद्देश्य था कि कर्मचारियों में राजभाषा हिंदी के प्रति जागरूकता बढ़े और वे हिंदी का अधिकाधिक उपयोग अपने कार्यों में करने के लिए प्रेरित हो।

राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठकों का आयोजन

संस्थान द्वारा निदेशक की अध्यक्षता में राजभाषा कार्यान्वयन समिति (ओएलआईसी) का गठन किया गया है तथा यह समिति राजभाषा अधिनियम 1963, राजभाषा नियम 1976 की नीति एवं नियमों का अनुपालन सुनिश्चित करती है। रिपोर्टाधीन अवधि (छमाही) के दौरान संस्थान के निदेशक की अध्यक्षता में गठित संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति की 02 बैठकें क्रमशः दिनांक 09 अगस्त, 2024 एवं 24 दिसंबर, 2024 को आयोजित की गई।

राजभाषा के प्रगतिशील प्रयोग का निरीक्षण

राजभाषा विभाग की अनुशंसाओं के अनुसार तथा राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार के वार्षिक कार्यक्रम में निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए संयुक्त निदेशक (अनुसंधान), डॉ. विश्वनाथन चिन्नुसामी की अध्यक्षता में राजभाषा निरीक्षण समिति का गठन किया गया है। समिति ने संस्थान के सभी संभागों, इकाइयों, अनुभागों एवं क्षेत्रीय केंद्रों में राजभाषा के प्रगतिशील प्रयोग का निरीक्षण किया। समिति ने संबंधित संभाग/अनुभाग/केंद्र आदि में राजभाषा कार्यान्वयन की वांछित प्रगति करने के लिए बहुमूल्य सुझाव दिए और निरीक्षण रिपोर्ट प्रस्तुत की। रिपोर्टाधीन अवधि के दौरान कुल 11 राजभाषा कार्यान्वयन समिति निरीक्षण आयोजित किए गए।

मूलरुप से सरकारी कामकाज हिंदी में करने के लिए नकद पुरस्कार योजना (वर्ष 2023-24)

वर्ष भर हिंदी में सर्वाधिक काम करने के लिए नकद पुरस्कार योजना राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार की है। भारत सरकार के दिशा-निर्देशानुसार संस्थान के कर्मचारियों को पूरे वर्ष में सर्वाधिक कार्यालयीन कार्य हिंदी में करने पर नकद पुरस्कार दिया गया। वर्ष 2023-24 के लिए 5000/- रुपए का पहला नकद पुरस्कार क्रमशः सुश्री ज्योत्सना गोन्नाड़े, सहायक, कार्मिक-2 अनुभाग, निदेशालय एवं डॉ. रणबीर सिंह, सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी, सस्य विज्ञान संभाग को दिया गया। रुपए 3000/- का दूसरा नकद पुरस्कार क्रमशः श्री बी.एस. रावत, निजी सचिव, प्रकाशन इकाई, श्रीमती सुनीता गुलाटी, सहायक, आरटीआई/आईएमसी अनुभाग, निदेशालय एवं श्रीमती मधुबाला, सहायक, वेतन बिल अनुभाग को दिया गया। रुपए 2000/- का तीसरा नकद पुरस्कार क्रमशः श्री मुकेश कुमार, सहायक, संपदा एवं नयाचार अनुभाग, निदेशालय एवं डॉ. वीरेन्द्र कुमार, सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी, जल प्रौद्योगिकी केंद्र का दिया गया।

हिंदी व्यवहार प्रतियोगिता (वर्ष 2023-24)

यह प्रतियोगिता संस्थान के समस्त संभागों/अनुभागों/इकाइयों एवं क्षेत्रीय केंद्रों के स्तर पर आयोजित की गई। इस प्रतियोगिता में वर्षभर हिंदी में सर्वाधिक कार्य करने वाले दो संभागों, दो अनुभागों/इकाइयों एवं क्षेत्रीय केंद्रों को शील्ड से सम्मानित किया जाता है। वर्ष 2023-24 में हिंदी में सर्वाधिक कार्य करने के लिए संभाग स्तरीय प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार जल प्रौद्योगिकी केंद्र को एवं द्वितीय पुरस्कार जैव रसायन विज्ञान संभाग को प्रदान किया गया। क्षेत्रीय केंद्र स्तरीय प्रतियोगिता में पुणे को प्रथम पुरस्कार एवं कटराईं (कुल्लू घाटी) को द्वितीय पुरस्कार दिया गया। गत वर्ष अनुभाग/इकाई स्तरीय प्रतियोगिता में केवल एक ही अनुभाग से इस प्रतियोगिता हेतु प्रविष्टि प्राप्त हुई थी, जिसके परिणामस्वरूप कार्मिक-2 अनुभाग, निदेशालय को अनुभाग/इकाई स्तरीय प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

सर्वश्रेष्ठ राजभाषा नोडल अधिकारी पुरस्कार प्रतियोगिता (वर्ष 2023-24)

संस्थान के प्रत्येक संभाग/केंद्र/इकाई व क्षेत्रीय केंद्र के बीच बेहतर समन्वय स्थापित करने के उद्देश्य से नामित किए गए राजभाषा नोडल अधिकारियों की भूमिका को महत्व प्रदान करने एवं उन्हें प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से उत्कृष्ट राजभाषा नोडल अधिकारी पुरस्कार योजना प्रारंभ की गई है। इसी क्रम में वर्ष 2023-24 का **"सर्वश्रेष्ठ राजभाषा नोडल अधिकारी"** का पुरस्कार डॉ. विजय कुमार प्रजापति, वैज्ञानिक, जल प्रौद्योगिकी केंद्र को 5000/- रुपए के नकद पुरस्कार से सम्मानित किया गया है।

अधिकारियों द्वारा हिंदी में डिक्टेशन (श्रुतलेख) देने हेतु प्रोत्साहन योजना (वर्ष 2023-24)

यह पुरस्कार योजना राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा चलाई जा रही है। भारत सरकार के दिशा-निर्देशों के अनुसार संस्थान के कर्मचारियों को नकद पुरस्कार दिया गया। अधिकारियों को पूरे वर्ष हिंदी में अधिकतम श्रुतलेख देने के लिए प्रोत्साहित करने हेतु नकद पुरस्कार प्रदान किया जाता है। रिपोर्टावधि के दौरान डॉ. अलका सिंह, अध्यक्ष, कृषि अर्थशास्त्र संभाग एवं श्रीमती सतिंद्र कौर, सहायक प्रशासनिक अधिकारी, जल प्रौद्योगिकी केंद्र को संयुक्त रूप से रुपए 2500/- का पुरस्कार प्रदान किया गया।

संस्थान की प्रकाशन इकाई द्वारा चलाई जा रही कृषि विज्ञान से संबंधित विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं हिंदी लेखों हेतु पुरस्कार योजना (कैलेण्डर वर्ष 2023-24) तथा वैज्ञानिक/तकनीकी विषयों पर हिंदी में सर्वश्रेष्ठ व्याख्यान देने पर पूसा विशिष्ट हिंदी प्रवक्ता पुरस्कार योजना (वित्त वर्ष 2023-24)

संस्थान के वैज्ञानिकों/तकनीकी अधिकारियों के लिए लोकप्रिय विज्ञान लेखन प्रतियोगिता आयोजित की गई एवं विजेताओं को क्रमश: 7000/-, 5000/-, 3000/- रुपए का प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय पुरस्कार और विभिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित उनके लेखों के लिए 2000/- रुपए के तीन प्रोत्साहन पुरस्कार दिए गए। रिपोर्टाधीन अवधि के दौरान प्रथम नकद पुरस्कार:- डॉ. प्रतिभा जोशी, वरिष्ठ वैज्ञानिक, कैटेट, डॉ. गिरिजेश सिंह महरा, वैज्ञानिक, कृषि प्रसार संभाग एवं डॉ. गीतांजलि जोशी, वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी, कृषि ज्ञान प्रबंधन इकाई को उनके लेख का शीर्षक, *''कृषि में सौर ऊर्जा: वर्तमान स्थिति, चुनौतियां एवं संभावनाएं (कवर स्टारी)''* के लिए दिया गया। द्वितीय पुरस्कार :- डॉ. रणबीर सिंह, सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी, सस्यविज्ञान संभाग, को उनके लेख का शीर्षक, *'कृत्रिम बुद्धिमत्ता का कृषि में उपयोग''* के लिए दिया गया। तृतीय पुरस्कार :- डॉ. वीरेन्द्र कुमार, सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी, जल प्रौद्योगिकी केंद्र को उनके लेख का शीर्षक, *'कृषि अपशिष्ट प्रबंधन''* के लिए दिया गया। प्रथम प्रोत्साहन पुरस्कार :- डॉ. चिराग माहेश्वरी, वैज्ञानिक, जैवरसायन विज्ञान संभाग को उनके लेख शीर्षक, *'श्री अन्न: पोषक-अनाज''* एवं द्वितीय प्रोत्साहन पुरस्कार :- डॉ रविश चौधरी, वरिष्ठ तकनीकी सहायक, बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संभाग को उनके लेख शीर्षक, *'बीज खराब होने की अवधारणा, इसके लक्षण, कारण और विभिन्न सिद्धांत''* एवं तृतीय प्रोत्साहन पुरस्कार :- डॉ. ज्ञान प्रकाश मिश्रा, अध्यक्ष, डॉ रविश चौधरी, वरिष्ठ तकनीकी सहायक, डॉ संगीता यादव, प्रधान वैज्ञानिक, श्री धर्मपाल सिंह, वरिष्ठ तकनीकी सहायक, (बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संभाग); डॉ. शिव कुमार यादव, अध्यक्ष, क्षेत्रीय केंद्र, करनाल एवं डॉ धर्मेन्द्र सिंह, प्रधान वैज्ञानिक (आनुवंशिकी संभाग) को उनके लेख शीर्षक, *'मसूर का गुणवत्तापूर्ण बीज उत्पादन और उसका प्रबंधन''* के लिए दिया गया।

इसी क्रम में, सर्वश्रेष्ठ पूसा विशिष्ट हिंदी प्रवक्ता पुरस्कार (2023-24) से डॉ. इंदु चोपड़ा, वरिष्ठ वैज्ञानिक, मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायनविज्ञान संभाग को रुपए 10,000/- की पुरस्कार धनराशि से सम्मानित किया गया।

संस्थान मुख्यालय के साथ-साथ संस्थान के संभागों और अधीनस्थ क्षेत्रीय केंद्रों में भी हिंदी में जागरूकता उत्पन्न करने और हिंदीमय परिवेश बनाने के उद्देश्य से अपने स्तर पर कई प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। इसी क्रम में-

बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संभाग

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली-110 012

प्रतिवर्ष की भांति इस वर्ष भी बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संभाग में हिंदी के प्रचार-प्रसार एवं अधिक से अधिक सरकारी कार्य हिंदी में करने के लिए हिंदी दिवस का आयोजन किया गया। इसके अंतर्गत विभिन्न प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया, जिसमें संभाग के वैज्ञानिक, तकनीकी अधिकारी, छात्र, एवं अनुबंध पर अनुसंधान में कार्य करने वाले (वाई.पी.-1,जे.आर.एफ., फील्ड वर्कर, इत्यादि) एवं उनके बच्चों ने बढ़-चढ़कर भाग लिया और विभिन्न पुरस्कार प्राप्त किए। संभाग में हिंदी दिवस एवं पुरस्कार वितरण समारोह का आयोजन दिनांक 30 सितंबर, 2024 को किया गया। इस कार्यक्रम का आयोजन भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद से डॉ. सुधाकर पाण्डेय (सहायक महानिदेशक प्रधान, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद) मुख्य अतिथि, डॉ ज्ञान प्रकाश मिश्रा (संभागीय राजभाषा समिति एवं संभाग के अध्यक्ष) एवं श्री धर्मपाल सिंह (संभाग के राजभाषा नोडल अधिकारी) द्वारा संभाग में आयोजित प्रतियोगिताओं के विजेताओं को स्मृति चिह्न एवं प्रमाण-पत्र प्रदान कर सम्मानित किया गया। इसका उद्देश्य हिंदी भाषा को प्रोत्साहन देना और उसे संभाग, संस्थान और राष्ट्रीय स्तर पर प्रचारित करना है। हिंदी राजभाषा को बढ़ावा देने के लिए कार्यक्रम के मंच का संचालन हिंदी राजभाषा के 'ग' क्षेत्र की छात्रा सुश्री हिना एच. कोसर एवं डॉ. रविश चौधरी (तकनीकी अधिकारी) द्वारा किया गया। इस समारोह के अंतर्गत सितंबर माह में संभाग में निम्नलिखित प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया था।

1. **संभाग में कार्यरत सभी अधिकारी एवं कर्मचारीयों के लिए प्रतियोगिताएं :-**
    1. हिंदी प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता
    2. श्रुतु लेखन प्रतियोगिता
2. **संभाग में कार्यरत अधिकारियों एवं कर्मचारियों के बच्चों के लिए:-**
    1. प्राथमिक कक्षा स्तर के लिए हिंदी प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता:-
    2. हिंदी प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता माध्यमिक स्तर:-

संभाग में कार्यरत सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों के बच्चों के लिए हिंदी प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता के आयोजन का उद्घाटन संभाग के अध्यक्ष महोदय डॉ. ज्ञान प्रकाश मिश्रा द्वारा किया गया। इस प्रतियोगिता का अंतिम परिणाम, निर्णायक, डॉ. रविश चौधरी (तकनीकी अधिकारी) बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संभाग के द्वारा दिया गया।

पुरस्कार वितरण कार्यक्रम

कार्यक्रम के अंत में विजेताओं को पुरस्कृत मुख्य अतिथि, अध्यक्ष महोदय एवं संभाग के राजभाषा नोडल अधिकारी द्वारा किया गया। तीनों प्रतियोगिताओं में प्रथम, द्वितीय, तृतीय एवं सांत्वना विजेताओं को स्मृति चिह्न एवं प्रमाण-पत्र प्रदान कर सम्मानित किया गया। इसके अलावा, हिंदी में उत्कृष्ट प्रदर्शन करने वाले कर्मचारियों को भी विशेष सम्मान दिया गया।

मुख्य अतिथि का संदेश

इस अवसर पर मुख्य अतिथि ने अपने संबोधन में हिंदी भाषा की महत्ता और हिंदी में सृजनात्मकता बढ़ाने के लिए प्रेरित किया। जिसमें हिंदी भाषा के इतिहास, विकास और वर्तमान संदर्भ में इसकी भूमिका पर प्रकाश डाला गया। उन्होंने यह संदेश दिया कि हिंदी केवल एक भाषा ही नहीं, बल्कि हमारी सांस्कृतिक धरोहर है, जिसे हमें संरक्षित और प्रचारित करना चाहिए। हिंदी राजभाषा को बढ़ावा देने के लिए इस प्रकार के आयोजन की प्रशंसा की और भविष्य में कुछ और प्रतियोगिताओं को कराने के लिए प्रेरित किया।

समापन

कार्यक्रम का समापन नोडल अधिकारी राजभाषा के धन्यवाद ज्ञापन से हुआ। उन्होंने मुख्य अतिथि, अध्यक्ष महोदय, राजभाषा समिति के अध्यक्ष, उपाध्यक्ष, प्रतियोगिताओं में भाग लेने वाले सभी बच्चों एवं प्रतिभागियों, व्याख्यान कक्ष में उपस्थित सभी व्यक्तियों को धन्यवाद दिया। जिन्होंने इस आयोजन को सफलतापूर्वक आयोजित करवाया। हिंदी के प्रति इसी उत्साह को बनाए रखने का सभी से आग्रह किया।

कार्यक्रम की झलक

हिंदी दिवस

बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी
SEED SCIENCE AND TECHNOLOGY

हिंदी दिवस
एवं
पुरस्कार वितरण समारोह २०२४

आनुवंशिकी संभाग

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली-110 012

हिंदी चेतना मास-2024 के दौरान आनुवंशिकी संभाग में 18.09.2024 को संभाग स्तर पर हिंदी श्रुतलेख प्रतियोगिता और हिंदी सामान्य ज्ञान प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। इन प्रतियोगिताओं में स्थाई और अस्थाई अधिकारियों और कर्मचारियों ने बढ़-चढ़ कर उत्साह से भाग लिया। संभाग के राजभाषा नोडल अधिकारी, डॉ. निवेदिता ने मुख्य अतिथियों सहित प्रतियोगिताओं में भाग लेने वाले संभाग के सभी कार्मिकों का अभिनंदन किया और संभाग में हिंदी किए गए उल्लेखनीय कार्य/उपलब्धियों का संक्षिप्त विवरण दिया। कार्यक्रम के दौरान उपस्थित निर्णायक मंडल, डॉ. राजेंद्र कुमार, प्रधान वैज्ञानिक, डॉ. संजय कुमार सिंह, प्रधान वैज्ञानिक एवं मुख्य प्रशासनिक अधिकारी, पीयूष शुक्ला ने राजभाषा हिंदी के महत्त्व व देश की प्रगति में हिंदी के योगदान पर अपने विचार रखें तथा संभाग के सभी कार्मिकों से राजभाषा के उत्थान में अपना सहयोग देने का आग्रह किया। कार्यक्रम का समापन सभी को धन्यवाद प्रस्ताव से हुआ। प्रतियोगिता के अंत में निर्णायक मंडल ने प्रतियोगियों को पुरस्कार हेतु चयनित किया।

हिंदी चेतना मास-2024 के दौरान आनुवंशिकी संभाग में विभिन्न प्रतियोगिताओं मे विजयी प्रतिभागी का विवरण निम्न प्रकार से है:-

हिंदी श्रुतलेख प्रतियोगिता

क्र.सं.	नाम व पदनाम	परिणाम
1	रश्मि छाबड़ा, डीएसटी-महिला वैज्ञानिक	प्रथम
2.	राजेश कुमार सिंह, तकनीकी सहायक	द्वितीय
3.	राम बिहारी शुक्ला, वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी	तृतीय
4.	बी. सुनीता, तकनीकी सहायक	प्रोत्साहन
5.	अनुज कुमार मल्लिक, तकनीकी सहायक	प्रोत्साहन

हिंदी सामान्य ज्ञान प्रतियोगिता

क्र.सं.	नाम व पदनाम	परिणाम
1	सुषमा रानी, सहायक	प्रथम
2.	अनुज कुमार मल्लिक, तकनीकी सहायक	द्वितीय
3.	साकेत गौरव, तकनीकी सहायक	तृतीय
4.	सुमन, कार्यालय सहायक	प्रोत्साहन
5.	मनजीत कुमार, वैज्ञानिक	प्रोत्साहन

सूत्रकृमि विज्ञान संभाग

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली-110 012

हिंदी चेतना मास-2024 का आयोजन सूत्रकृमि विज्ञान संभाग में सितंबर मास में किया गया था। इसमें संभाग के सभी वर्गों (वैज्ञानिक वर्ग, प्रशासनिक वर्ग, तकनीकी वर्ग, सहायक वर्ग) के सदस्यों ने बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया था। हिंदी चेतना मास के अंतर्गत विभिन्न प्रकार की प्रतियोगिताओं का आयोजन समय-समय पर किया गया एवं अंत में पुरस्कार वितरण समारोह का आयोजन किया गया, विजेता रहे सभी वर्ग के प्रतिभागियों को पुरस्कार वितरण कर सम्मानित किया गया था। इस प्रकार के आयोजन से हिंदी में कार्य करने के प्रति संभाग के सभी सदस्यों में जागरूकता पैदा हुई और वे भविष्य में अधिक से अधिक कार्य हिंदी में करने के प्रति लालायित हुए।

हिंदी चेतना मास के अंतर्गत आयोजित होने वाली अंर्तसंभागीय प्रतियोगिताएं

- काव्य पाठ प्रतियोगिता
- पी.पी.टी. प्रस्तुतीकरण प्रतियोगिता
- आशुभाषण प्रतियोगिता
- प्रश्न मंच प्रतियोगिता
- सुलेख प्रतियोगिता

काव्य पाठ प्रतियोगिता

काव्य पाठ प्रतियोगिता में विभिन्न वर्गों के सदस्यों ने सक्रिय रूप से भाग लिया एवं बड़े ही मनोरंजक ढंग से अपनी-अपनी प्रस्तुतियां दी

काव्य पाठ प्रतियोगिता में काव्य पाठ करते हुए प्रतिभागी

पी.पी.टी. प्रस्तुतीकरण प्रतियोगिता

पी.पी.टी प्रतियोगिता में प्रतिभागियों ने ''लाभदायक सूत्रकृमि'' के विषय पर अपने-अपने विचार बड़े ही गर्मजोशी के साथ रखे।

पी.पी.टी प्रतियोगिता में प्रस्तुतीकरण देते हुए प्रतिभागी

आशुभाषण प्रतियोगिता

आशुभाषण प्रतियोगिता में भाग लेते हुए विभिन्न वर्गों के प्रतिभागियों ने बड़े ही उत्कृष्ट विचार रखे एवं भाषण के माध्यम से ज्ञानवर्धक जानकारियां साझा की।

आशुभाषण प्रतियोगिता में भाषण देते हुए प्रतिभागी

प्रश्नमंच प्रतियोगिता

प्रश्नमंच प्रतियोगिता में भी विभिन्न वर्गों के प्रतिभागियों ने बड़े ही गर्म जोशी से भाग लिया एवं अपने-अपने तर्कों के आधार पर प्रश्नों के जवाब दिए।

प्रश्नमंच प्रतियोगिता में प्रश्नों का जवाब देते हुए प्रतिभागी

सुलेख प्रतियोगिता

सुलेख प्रतियोगिता एक विशेष प्रकार की प्रतियोगिता है जो संभाग में एक विशेष सहायक वर्ग कर्मियों के लिए रखी गई थी, जिसमें उन्होंने महिला सुरक्षा के विषय पर सुलेख लिखा।

पुरस्कार वितरण

पुरस्कार प्राप्त करते हुए प्रतिभागी

पुरस्कार वितरण समारोह अध्यक्ष महोदय, डॉ. पंकज, प्राध्यापक, डॉ. अनिल सिरोही तथा परियोजना समन्वयक, डॉ. गौतम चावला के साथ मिलकर संभागीय स्तर पर किया गया था।

विभिन्न प्रतियोगिताओं में पुरस्कार प्राप्त करने वाले प्रतिभागियों की सूची इस प्रकार है:-

सुलेख प्रतियोगिता

श्रीमती आशा देवी (प्रथम), श्री जय सिंह (द्वितीय), श्री विकास शर्मा (तृतीय), श्री विजय कुमार (प्रोत्साहन), श्री विपिन कुमार (प्रोत्साहन)।

काव्य पाठ प्रतियोगिता

डॉ. महेंद्र सिंह (प्रथम), सुश्री तान्या खट्टर (द्वितीय), श्रीमती हिमानी पसरीचा (तृतीय), श्री चांदवीर सिंह (प्रोत्साहन), सुश्री रोहिणी (प्रोत्साहन)।

पी.पी.टी. प्रस्तुतीकरण प्रतियोगिता

डॉ. के वी वी एस क्रांति (प्रथम), डॉ. अंजु कामरा (द्वितीय), डॉ. चंद्रमणि वाघमारे (तृतीय), श्री गौरव ठाकरान (प्रोत्साहन), श्री मुकेश कुमार मीणा (प्रोत्साहन)।

आशुभाषण प्रतियोगिता

डॉ. विकास बामल (प्रथम), श्रीमती तान्या खट्टर (द्वितीय), श्री महेश्वर दास (तृतीय), डॉ. के वी वी एस क्रांति (प्रोत्साहन), श्री पवन चौधरी (प्रोत्साहन)।

प्रश्नमंच प्रतियोगिता

प्रथम पुरस्कार डॉ. विशाल सिंह सोमवंशी एवं उनकी टीम, द्वितीय पुरस्कार डॉ. एम. आर.खान एवं उनकी टीम, तृतीय पुरस्कार डॉ. राशिद परवेज़ एवं उनकी टीम।

इस प्रकार संभाग में हिंदी चेतना मास अध्यक्ष महोदय, डॉ. पंकज (प्रधान वैज्ञानिक) एवं संचालक, डॉ. विकास बामल (वैज्ञानिक), सुश्री सोनी देवी (हिंदी नोडल अधिकारी) एवं सभी सदस्यों के सहयोग से बड़े ही मनोरंजक ढंग से हिंदी में नवीन जानकारी प्राप्त करते हुए एवं राजभाषा हिंदी के प्रति बढ़ती जागरूकता के साथ हर्षोल्लास के साथ संपन्न हुआ।

जैव रसायन विज्ञान संभाग

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली-110 012

हिंदी चेतना मास के उपलक्ष्य में 12 सितंबर, 2024 को जैव रसायन संभाग में संभाग स्तर पर विभिन्न हिंदी प्रतियोगिताएं (सामान्य ज्ञान प्रश्नोत्तरी, तात्कालिक भाषण और प्रश्नोत्तरी) आयोजित की गई। प्रतियोगिता के विशिष्ट अतिथियों में पादप कार्यिकी संभाग के प्रधान वैज्ञानिक, डॉ. अजय अरोड़ा और आनुवंशिकी संभाग के तकनीकी अधिकारी, श्री शिव कुमार शामिल थे, जिन्होंने निर्णायक मंडल के सदस्य के रूप में भी काम किया। कार्यक्रम की शुरुआत जैव रसायन संभाग की हिंदी नोडल अधिकारी, श्रीमती प्राची त्यागी के भाषण से हुई। कार्यक्रम की शुरुआत दीप प्रज्ज्वलन के साथ हुई, इसके बाद संभागाध्यक्ष द्वारा अतिथियों को पुष्पगुच्छ देकर सम्मानित किया गया। संभाग की अध्यक्ष डॉ. अरुणा त्यागी, प्रधान वैज्ञानिक, जैव रसायन संभाग ने स्वागत भाषण दिया, अपने विचार साझा किए और सभी अतिथियों और उपस्थित लोगों का स्वागत किया। डॉ. त्यागी ने हिंदी चेतना जनसभा के लिए शुभकामनाएं दी, सितंबर, 2024 तक हिंदी में किए गए उल्लेखनीय कार्यों से सभा को अवगत कराया, सभी को हिंदी से संबंधित कार्यों में अपनी भागीदारी बढ़ाने के लिए प्रोत्साहित किया और हिंदी भाषा के उन्नयन में उल्लेखनीय योगदान देने वाले अधिकारियों को सम्मानित किया। इसके बाद, पहली प्रतियोगिता, हिंदी सामान्य ज्ञान प्रश्नोत्तरी, जैव रसायन विज्ञान संभाग की सहायक श्रीमती जन्नत द्वारा आयोजित की गई। प्रश्नोत्तरी लिखित प्रारूप में आयोजित की गई थी। प्रथम पुरस्कार जैव रसायन विज्ञान संभाग के छात्र श्री हरीश ढल को दिया गया। डॉ. अरुणा त्यागी और श्रीमती कृष्णा बिष्ट ने संयुक्त रूप से दूसरा पुरस्कार प्राप्त किया। प्रश्नोत्तरी के बाद जलपान परोसा गया। श्रीमती प्राची त्यागी द्वारा तात्कालिक भाषण प्रतियोगिता का संचालन किया गया। संभाग के सभी अनुभागों के लोगों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया। द्वितीय पुरस्कार छात्र श्री अशोक कुमार और छात्र श्री बृजेश यादव ने जीता, जबकि तृतीय पुरस्कार कुमारी सोनल और श्री दीपक पटेल को मिला। अंतिम प्रतियोगिता, क्विज प्रतियोगिता का संचालन श्रीमती मोनिका राय और श्रीमती प्राची त्यागी ने किया। इस प्रतियोगिता में डॉ. अजय अरोड़ा, कुमारी मुस्कान और श्री शिव कुमार की टीम ने प्रथम स्थान प्राप्त किया। दूसरा स्थान श्री बृजेश यादव, श्री अशोक

जैव रसायन विज्ञान संभाग में हिंदी प्रतियोगिता कार्यक्रम

कुमार एवं श्री भोला महतो की टीम को मिला, जबकि तीसरा स्थान डॉ. अरुणा त्यागी, डॉ. सुरेश कुमार एवं श्री भरत की टीम को मिला। निर्णायक मंडल के सदस्यों, पादप कार्यिकी संभाग के प्रधान वैज्ञानिक, डॉ. अजय अरोड़ा आनुवंशिकी संभाग के तकनीकी अधिकारी, श्री शिव कुमार ने अपने विचार साझा किए। उन्होंने प्रत्येक प्रतिभागी की प्रशंसा की और अध्यक्ष डॉ. अरुणा त्यागी और आयोजन समिति की उनके प्रयासों के लिए सराहना की। कार्यक्रम के अंत में, विशिष्ट अतिथियों एवं संभागाध्यक्ष को स्मृति चिन्ह देकर सम्मानित किया गया। हिंदी प्रतियोगिताओं के परिणाम घोषित किए गए। अंत में, जैव रसायन विज्ञान संभाग की सहायक श्रीमती जन्नत ने औपचारिक धन्यवाद ज्ञापन प्रस्तुत किया। इसके अतिरिक्त, दोपहर के जल-पान की व्यवस्था भी की गई थी। इस कार्यक्रम की संयोजिका श्रीमती प्राची त्यागी, तकनीकी सहायक एवं संभागीय राजभाषा नोडल अधिकारी थी।

कृषि रसायन संभाग

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली-110 012

हिंदी चेतना मास के दौरान 10 सितंबर, 2024 को कृषि रसायन संभाग में एक दिवसीय हिंदी दिवस समारोह का आयोजन किया गया। इस अवसर पर विभिन्न प्रतियोगिताएं आयोजित की गईं। जिनमें सहायक कर्मचारियों के लिए तात्कालिक भाषण, हिंदी अनुवाद, श्रुतलेख एवं सुलेख प्रतियोगिताएं शामिल थीं। इस प्रतियोगिता में संभाग के सभी अधिकारियों और कर्मचारियों ने बड़े उत्साह के साथ भाग लिया।

कृषि रसायन संभाग में हिंदी कार्यक्रम की एक झलक

कैटेट

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली-110 012

संभागीय राजभाषा कार्यान्वयन समिति द्वारा आयोजित हिंदी दिवस कार्यक्रम 30 सितंबर, 2024 को कैटेट (CATAT) के सेमिनार हॉल में आयोजित किया गया। कार्यक्रम के अंतर्गत कुल पांच प्रतियोगिताएं आयोजित की गईं, जिनमें कैटेट, एटिक और पूसा कृषि उत्पाद विक्रय केंद्र के सभी कर्मचारी भाग लेने के पात्र थे। प्रतियोगिताओं में वाद-विवाद, कविता पाठ, श्रुतलेख, संस्मरण लेखन (एमटीएस, दैनिक वेतन भोगी और संविदा कर्मचारियों के लिए) और तात्कालिक भाषण शामिल थे। विजेताओं के लिए पुरस्कार वितरण समारोह आयोजित किया गया और गैर-हिंदी भाषी क्षेत्र से होने के बावजूद उत्साहपूर्वक भाग लेने के लिए एक विशेष पुरस्कार दिया गया।

संयुक्त निदेशक (प्रसार) विजेताओं को पुरस्कार प्रदान करते हुए

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान

क्षेत्रीय केंद्र, पुणे-411 067

दिनांक 20 सितंबर, 2024 को "हिंदी की वैश्विक स्थिति" विषय पर हिंदी कार्यशाला का आयोजन

क्षेत्रीय केंद्र में दिनांक 20 सितंबर, 2024 को हिंदी कार्यशाला एवं हिंदी दिवस का आयोजन किया गया। इस अवसर पर डॉ. ओ. एन. शुक्ला, उप-प्रबंधक राजभाषा (सेवानिवृत्त),भारतीय उष्णदेशीय मौसम विज्ञान संस्थान, पाषाण, पुणे-411008 ने **"हिंदी की वैश्विक स्थिति"** विषय पर व्याख्यान दिया। कार्यशाला में 12 अधिकारियों और कर्मचारियों ने भाग लिया। कार्यक्रम का आयोजन क्षेत्रीय केंद्र के अध्यक्ष डॉ. अनिल खार की अध्यक्षता में हुआ। इस कार्यशाला में सभी अधिकारियों और कर्मचारियों ने उत्साह से भाग लिया। यह कार्यशाला बहुत ही रोचक एवं इंटरैक्टिव सत्र था।

क्षेत्रीय केंद्र, पुणे में कार्यशाला का आयोजन (20/9/2024)

दिनांक 17 मई, 2024 को "भारतीय संविधान में भाषा संबंधी प्रावधान, देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता और वर्ष 2024-25 का राजभाषा संबंधी वार्षिक कार्यक्रम" विषय पर एक हिंदी कार्यशाला का आयोजन

क्षेत्रीय केंद्र में दिनांक 17 मई, 2024 को हिंदी कार्यशाला का आयोजन किया गया। इस अवसर पर डॉ. रमाशंकर व्यास, वरिष्ठ हिंदी अधिकारी (सेवानिवृत्त), राष्ट्रीय रासायनिक प्रयोगशाला, पुणे ने **"भारतीय संविधान में भाषा संबंधी प्रावधान, देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता और वर्ष 2024-25 का राजभाषा संबंधी वार्षिक कार्यक्रम"** विषय पर व्याख्यान

क्षेत्रीय केंद्र, पुणे में कार्यशाला का आयोजन (17/5/2024)

दिया। कार्यशाला में 12 अधिकारियों और कर्मचारियों ने भाग लिया। कार्यक्रम का आयोजन क्षेत्रीय केंद्र के अध्यक्ष डॉ. अनिल खार की अध्यक्षता में हुआ। इस कार्यशाला में सभी अधिकारियों और कर्मचारियों ने उत्साह से भाग लिया । यह कार्यशाला बहुत ही रोचक एवं इंटरैक्टिव सत्र था।

राजभाषा कार्यान्वयन उपसमिति की नियमित बैठकें

रिपोर्टाधीन अवधि में केंद्र पर राजभाषा कार्यान्वयन उपसमिति की तिमाही बैठकों के आयोजन नियमित रूप से किया जा रहा है। समिति की बैठकों की रिपोर्ट को समय से संस्थान मुख्यालय को जाती है।

अन्य

दिनांक 07.06.2024 को नराकास की छमाही बैठक में भी भाग लिया- डॉ अनिल खार, अध्यक्ष।

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान

क्षेत्रीय केंद्र, शिमला-141 001

हिंदी सप्ताह का शुभारंभ

प्रत्येक वर्ष की भांति इस वर्ष भी केंद्र में राजभाषा के प्रचार-प्रसार के लिए हिंदी सप्ताह का आयोजन केंद्र के टुटीकंड़ी में किया गया। इसका शुभारंभ दिनांक 23 सितंबर, 2024 को केंद्र के अध्यक्ष, डॉ. धर्मपाल और मुख्य अतिथि डॉ. यश पाल शर्मा, पूर्व अध्यक्ष व प्रधान वैज्ञानिक की मौजूदगी में किया गया। इस कार्यक्रम का संचालन केंद्र की राजभाषा नोडल अधिकारी, डॉ. मधु पटियाल, वरिष्ठ वैज्ञानिक द्वारा श्री बेग राम, सहायक के सहयोग से किया गया।

दिनांक 23.09.2024 को त्वरित टिप्पणी, श्रुतलेख एवं हिंदी शब्द ज्ञान इत्यादि प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। इन प्रतियोगिताओं में सभी वर्गों के उपस्थित स्टाफ ने बढ़-चढ़ कर भाग लिया। इस कार्यक्रम में डॉ. संतोष वाटपाडे, वैज्ञानिक, श्री सुनील कुमार गर्ग, सहायक, डॉ. मनोज कुमार, तकनीकी सहायक, श्री संजीव कुमार, वरिष्ठ तकनीशियन, श्री शशी भूषण कुमार, तकनीशियन, श्री ओम प्रकाश, एमटीएस और निविदा कर्मियों ने भाग लिया।

हिंदी समापन समारोह

दिनांक 30.09.2024 को प्रातः 10:00 बजे से लेकर 1:00 बजे तक इस केंद्र पर चल रहे हिंदी सप्ताह का समापन समारोह आयोजित किया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता मुख्य अतिथि, डॉ. मोहर सिंह, प्रभारी व प्रधान वैज्ञानिक, राष्ट्रीय पादप आनुवंशिकी संसाधन ब्यूरो, क्षेत्रीय केंद्र, फागली शिमला ने इस केंद्र के अध्यक्ष, डॉ. धर्मपाल, प्रधान वैज्ञानिक और डॉ. कल्लोल कुमार प्रमाणिक, फार्म प्रभारी एवं प्रधान वैज्ञानिक की मौजूदगी में की।

इस कार्यक्रम का संचालन डॉ. जितेंद्र कुमार, तकनीकी अधिकारी द्वारा श्री सुनील कुमार गर्ग की सहायता से किया गया।

दिनांक 30.09.2024 को मसौदा लेखन एवं सामान्य ज्ञान प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। समारोह के अंत में हिंदी सप्ताह के दौरान आयोजित की गई प्रतियोगिताओं में विजेता रहे प्रतिभागियों को प्रमाण-पत्र भी प्रदान किए गए।

हिंदी कार्यशाला का आयोजन

क्षेत्रीय केंद्र, शिमला के अमरतारा स्थित कार्यालय पर दिनांक 30 सितंबर, 2024 को एक दिवसीय हिंदी कार्यशाला का आयोजन किया गया। इस कार्यशाला में डॉ. नरेंद्र नेगी, वैज्ञानिक, राष्ट्रीय पादप आनुवंशिकी संसाधन ब्यूरो, क्षेत्रीय केंद्र, फागली, शिमला मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित रहे। कार्यक्रम की अध्यक्षता इस केंद्र के अध्यक्ष, डॉ. धर्मपाल, प्रधान वैज्ञानिक ने की।

इस कार्यशाला में डॉ. संतोष वाटपाडे, वरिष्ठ वैज्ञानिक और

अध्यक्ष, राजभाषा कार्यान्वयन उपसमिति, क्षेत्रीय केंद्र, शिमला भी उपस्थित थे। मुख्य अतिथि डॉ. नरेंद्र नेगी ने हिंदी में कार्य करने के सरल तरीकों से उपस्थित सभी को अवगत कराया। केंद्र के अध्यक्ष, डॉ. धर्मपाल ने भी अपने हिंदी ज्ञान को साझा किया।

कुल मिलाकर, हिंदी कार्यशाला सफल रही और इसमें तीन अधिकारी, तीन कर्मचारी तथा तीन अनुबंध कर्मियों को प्रशिक्षित किया गया।

एक दिवसीय हिंदी कार्यशाला में भाग लेते हुए प्रतिभागी।

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान

क्षेत्रीय केंद्र, कालिम्पोंग-734 301

प्रत्येक वर्ष 5 जून को **विश्व पर्यावरण दिवस** मनाया जाता है। इस विशेष दिन की शुरुआत वर्ष 1972 में की गई थी, और वर्ष 1974 से इसे औपचारिक रूप से मनाया जाने लगा। इस वर्ष का विषय था, **"भूमि पुनर्स्थापन, मरुस्थलीकरण और सूखा प्रतिरोध"** और मेज़बानी सऊदी अरब द्वारा की गई थी।

आज के समय में पर्यावरण संरक्षण की आवश्यकता पहले से कहीं अधिक हो गई है, क्योंकि तेजी से हो रहे औद्योगिकीकरण और शहरीकरण के कारण पेड़-पौधों की अंधाधुंध कटाई न केवल मानव जीवन के लिए हानिकारक है, बल्कि यह प्राणी जगत पर भी नकारात्मक प्रभाव डाल रही है। बड़ी संख्या में पेड़ काटे जाने से पशु-पक्षी और कीट-पतंगे बेघर हो रहे हैं, और कुछ पशु-पक्षी तो विलुप्त भी हो गए हैं। प्रदूषण, वन कटाई, जलवायु परिवर्तन और जल संकट जैसे मुद्दे हमारे ग्रह के लिए गंभीर खतरे बन चुके हैं। कहीं सूखा पड़ रहा है तो कहीं बाढ़ का प्रकोप बढ़ रहा है, और प्राकृतिक आपदाएं लगातार बढ़ती जा रही हैं।

पर्यावरण संरक्षण के लिए व्यक्तिगत और सामूहिक स्तर पर प्रयासों की आवश्यकता है। सरकार को सख्त पर्यावरणीय नीतियों और कानूनों का निर्माण करना चाहिए, साथ ही हमें भी अपने दैनिक जीवन में छोटे-छोटे कदम उठाने की आवश्यकता है, जैसे कि ऊर्जा की बचत, पानी का संरक्षण, प्लास्टिक का कम उपयोग और अधिक से अधिक पेड़-पौधे लगाना।

इसी क्रम में, **"विश्व पर्यावरण दिवस 2024"** के अवसर पर 5 जून, 2024 को भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र, कालिम्पोंग और अखिल भारतीय महिला सम्मेलन, कालिम्पोंग शाखा के संयुक्त तत्वावधान में अधिकारियों, कर्मचारियों और सदस्यों द्वारा पुलिस अधीक्षक के कार्यालय,

विश्व पर्यावरण दिवस

बिड़ला हाउस, कालिम्पोंग में पूर्वाह्न में कुछ पेड़-पौधे लगाए गए। इसके बाद, दोपहर को क्लूनी वुमेन्स कॉलेज, कालिम्पोंग में कर्मचारियों, सदस्यों और विद्यार्थियों द्वारा भी पेड़ लगाए गए। उसी दिन शाम को क्षेत्रीय केंद्र, कालिम्पोंग में प्रभारी महोदय और कर्मचारियों द्वारा कार्यालय परिसर में भी पेड़-पौधे लगाए गए।

पर्यावरण संरक्षण केवल एक दिन का काम नहीं होना चाहिए, बल्कि यह हमारी दिन-प्रतिदिन की गतिविधियों और आदतों का हिस्सा बनना चाहिए। हमें अपने आस-पास के पर्यावरण की रक्षा के लिए हर संभव प्रयास करना चाहिए, ताकि हमारी आने वाली पीढ़ियां भी इस सुंदर ग्रह का आनंद उठा सकें। इसके लिए हमें एकजुट होकर गंभीरता से काम करना होगा।

हिंदी का वैश्विक स्तर

रणबीर सिंह एवं ओम प्रकाश सिंह

सस्यविज्ञान संभाग एवं कृषि प्रसार संभाग
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली-110 012

भारत शिक्षा, कला, साहित्य, संगीत और अनेक सांस्कृतिक विरासत सहित अनेक भाषाओं वाला देश है। जिसमें विश्व प्रवासन प्रतिवेदन 2022 के अनुसार, वर्ष 2020 में विश्व भर में सबसे बड़ी प्रवासी जनसंख्या भारतीयों की थी, मैक्सिकों, रूस और चीन का स्थान इसके बाद आता है, जिनकी भाषा हिंदी है। हिंदी एक ऐसी भाषा है, जो दुनियाभर के लोगों के लिए बहुत महत्व रखती है। यह लोगों से संवाद करने और स्वयं को अभिव्यक्त करने में सहायक है। वैश्विक स्तर पर हिंदी का प्रचार-प्रसार भारत सरकार की सर्वोच्च प्राथमिकता रही है। संयुक्त राष्ट्र जैसे अंतरराष्ट्रीय मंचों पर इसकी मान्यता और उपयोग बढ़ाने के उल्लेखनीय प्रयासों के साथ, हिंदी, संयुक्त राष्ट्र में नौ कामकाजी भाषाओं में अपनी उपस्थिति दर्ज करा चुकी है। यह उपलब्धि अंतरराष्ट्रीय समुदाय में हिंदी भाषा के बढ़ते महत्व और उसकी प्रासंगिकता को दर्शाती है।

विश्व हिंदी दिवस: वर्तमान में चीन के बाद हिंदी विश्व की दूसरी सबसे बड़ी भाषा है तथा राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हिंदी एक सफल और समृद्ध भाषा के रूप में उभर कर सामने आ रही है। विश्व स्तर पर हिंदी भाषा की बढ़ती लोकप्रियता उत्साहवर्धक है। वैश्विक स्तर पर हिंदी भाषा के प्रसार को बढ़ावा देने के लिए प्रतिवर्ष 10 जनवरी को विश्व हिंदी दिवस मनाया जाता है। भारत में प्रथम हिंदी सम्मेलन 1975 में नागपुर (महाराष्ट्र) आयोजित किया गया था तथा विश्व हिंदी दिवस पहली बार 10 जनवरी, 2006 में मनाया गया। वर्ष 1949 में भारतीय संघ की संविधान सभा द्वारा हिंदी को भारत संघ की आधिकारिक भाषा में अपनाने के दिन की याद में 14 सितंबर को प्रतिवर्ष राष्ट्रीय स्तर पर मनाया जाता है। वर्ष 2003 में संयुक्त राष्ट्र महासभा में पूर्व प्रधानमंत्री स्वर्गीय श्री अटल बिहारी वाजपेयी द्वारा हिंदी में भाषण दिया गया था। जिसने विश्व स्तर पर हिंदी भाषा को बढ़ावा देने हेतु भारतीय प्रयासों के लिए एक रास्ता बनाया। वर्तमान में प्रधानमंत्री माननीय श्री नरेन्द्र मोदी ने तब से अनेक अवसरों पर संयुक्त राष्ट्र महासभा को हिंदी में संबोधित किया है और कूटनीति की भाषा के रूप में हिंदी को बढ़ावा देने के लिए सराहनीय कार्य है।

वैश्विक हिंदी परिदृश्य: वैश्विक स्तर पर हिंदी एक महत्वपूर्ण भाषा बनती जा रही है। इसने राष्ट्रीय सीमाओं को पार करते हुए नेपाल, फिजी, मॉरीशस, सूरीनाम और गुयाना जैसे देशों में अपनी लोकप्रियता प्राप्त की है। यह अंतरराष्ट्रीय भाषा के रूप में पहचान है। आज हिंदी माध्यम से विश्व के 73 देशों में 180 विश्वविद्यालयों में अध्ययन और अध्यापन हो रहा है तथा अनेक देशों के विश्वविद्यालयों में हिंदी पर अनुसंधान कार्य भी हो रहे हैं। अकेले अमेरिका में ही लगभग 150 से अधिक शैक्षणिक संस्थानों में हिंदी का पठन-पाठन हो रहा है। एक प्रतिवेदन के अनुसार आज हिंदी बोलने वालों की संख्या 55 करोड़ से अधिक है और हिंदी समझने वालों की संख्या लगभग 1 अरब से भी अधिक है। आज विश्व के आधे से अधिक सर्वाधिक पढ़े जाने वाले समाचार पत्र हिंदी में प्रकाशित होते हैं। सोशल मीडिया के माध्यम जैसे; ईमेल,

ई-कॉमर्स, ई-बक्स, इंटरनेट, एसएमएस, फेसबुक, व्हाट्सएप, यूट्यूब, ट्विटर आदि तक हिंदी की पहुंच है। माइक्रोसॉफ्ट, गूगल, याहू, आईबीएम, ओरेकल आदि विश्व स्तरीय कंपनियां विशाल बाजार और अधिक लाभ हेतु हिंदी भाषा के उपयोग को बढ़ावा दे रही है। अब हिंदी समर्पित वेब सर्विसेज ईमेल अनुवाद टेक्स्ट टू स्पीक ई-कमर्स क्लाउड आधारित सर्विसेज का उपयोग कठिन नहीं रहा है। इसके अतिरिक्त वेब, विज्ञापन, संगीत, सिनेमा और बाजार के क्षेत्र में हिंदी की मांग तेजी से बढ़ रही है।

सारांशः आज हिंदी विश्वभर की दूसरी और भारत की सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषा बन गई है। हिंदी ने नए वैश्विक स्तर पर अपने चलन के कारण अंग्रेजी भाषा को काफी पीछे छोड़ दिया है। डॉ. सुधीश पचौरी लिखते हैं "तथ्य यह है कि हिंदी लगातार बढ़ रही है, फैल रही है और यह विश्व भाषा बन चली है।" विश्व स्तर पर हिंदी का प्रचार-प्रसार तथा उसकी लोकप्रियता एवं व्यावहारिक टी.वी. धारावाहिक, विज्ञापन, सिनेमा, आकाशवाणी, पत्रकारिता, विद्यालय, महाविद्यालय तथा उच्च शिक्षा में हिंदी भाषा के बढ़ते प्रयोग से और अधिक बढ़ रहा है। इसकी बढ़ती लोकप्रियता के कारण आज वैश्विक परिदृश्य में रोज़गार की संभावनाएं भी बढ़ रही हैं। हिंदी के गौरव की रक्षा करें व सभी अपने-अपने कार्य क्षेत्रों हिंदी के लिए, हिंदी उत्थान के लिए आवश्यक कार्य करें तथा विश्व में उसका एक स्थान निश्चित करने में अपना सक्रिय योगदान दें।

आओ मनाएं अब हिंदी वर्ष!

"साहित्य संगीतकला विहीनः साक्षात् पशुः पुच्छविषाणहीनः" (अर्थात- भाषा, साहित्य, संगीत और कला से रहित मनुष्य बिना, सींग और पूंछ के पशु समान है यानी एक तो ऐसे मनुष्य की कल्पना भी नहीं की जा सकती परंतु यदि ऐसा व्यक्ति समाज में रहता भी है तो उसकी उपयोगिता किसी काम की दिखाई नहीं पड़ती।)

भाषा केवल संवाद का माध्यम नहीं अपितु विचारों, भावनाओं व ज्ञान का संवाहक है जो हमें आपस में जोड़ती है या यूं कहें कि हमें दी गई 'सामाजिक प्राणी' की संज्ञा को परिभाषित करती है।

यह भाषा ही है जिसके माध्यम से हम अपनी संस्कृति व सभ्यता के प्राचीनतम पन्नों को पीछे पलटकर उस पर गौरव महसूस करते हैं और जब कभी हम अपने ऐतिहासिक मूल्यों को लिपि के माध्यम से नहीं समझ पाते तो उस काल की कलाओं, मूर्तियों आदि को अपनी अभिधा, व्यंजना व लक्षणा से समझना चाहते हैं।

हिंदी भाषा का सांस्कृतिक महत्व

देववाणी संस्कृत हिंदी भाषा की जननी है। संस्कृत के तत्सम शब्द शनैः शनैः तद्भव शब्दों में बदलते गए व कालांतर में देशज शब्दों के अतिरिक्त विदेशी शब्द भी इसके शब्दकोश में शामिल होते चले गए। इसमें हमारे देश की विविधता एवं एकता, दोनों का समावेश भली-भांति मिलता है। यह भाषा साहित्य, संगीत, नाटक और लोक कथाओं का माध्यम बन कर हमारी परंपराओं को संजोए हुए है।

तुलसी, कबीर, सूरदास ने अपने आध्यात्म और भक्ति में हिंदी भाषा को चुना तो वहीं दूसरी ओर प्रेमचंद, महादेवी वर्मा, दिनकर आदि ने इससे आधुनिक युग में राष्ट्रवाद को संबल प्रदान किया। स्वतंत्रता आंदोलन में भारत के आम जनमानस की भाषा बनकर हिंदी ने भारत को उत्तर से दक्षिण, पूरब से पश्चिम और दिलों को दिलों से जोड़ने का कार्य तो काफी पहले से ही शुरू कर दिया था।

भाषा अपनी तरह की संस्कृति को जन्म देती है

अंग्रेजी की एक प्रचलित कहावत "एव्रीथिंग इज़ फेयर इन लव एंड वॉर" तो आपने सुनी ही होगी जिसका अनुवाद किया जाता है— "इश्क़ और जंग में सब जायज़ है"। परंतु ध्यातव्य है कि न तो इश्क़ हिंदी का है, न ही जंग और न ही जायज़। परंतु क्या आपने कभी हिंदी में ऐसी कहावत सुनी है कि "प्रेम और युद्ध में सब उपयुक्त है"। जी नहीं, क्योंकि हिंदी के प्राण में ऐसे विचार ही नहीं आ सकते। हमारे यहां तो युद्ध का भी एक धर्म होता है और प्रेम की भी एक मर्यादा होती है व उसमें त्याग दिखाई देता है।

हिंदी भाषा की व्यापकता एवं भव्यता

वसुधैव कुटुंबकम के सिद्धांत पर चलने वाला भारतीय समाज भले ही आज रिश्तों-नातों को भुलाने की राह पर निकल चुका हो परंतु इस बात को बीते इतना भी लंबा समय नहीं हुआ जब हम अपने गांव-पड़ोस में रहने वाले हर व्यक्ति को बुआ-मौसी, चाचा-मामा जैसे संबोधनों से जोड़कर रखते थे। प्रत्येक संबंध की अलग-अलग सार्थकता एवं महत्व होता था। पश्चिम की संस्कृति में हम इन्हीं संबोधनों को बस आंटी और अंकल तक सीमित कर देते हैं।

इसी प्रकार शब्दों के पर्याय सर्वदा स्पष्ट अर्थ दर्शाते हैं। उदाहरणतः, पैर के पर्यायवाची - पांव, चरण, टांग, पद, लात, दुलत्ती आदि हैं। यदि चरण का प्रयोग किया गया है तो स्वयं सिद्ध है कि किसी देव, आचार्य, महापुरुष अथवा माता-पिता का ही उल्लेख किया जा रहा होगा, न कि किसी आम व्यक्ति के लिए। उसी प्रकार से दुलत्ती का प्रयोग केवल गधे के लिए ही होगा।

इसी प्रकार हिंदी भाषा में लिंग, वचन, कारक, अलंकार एवं छंदों-उपमाओं की समृद्ध व्यवस्था देखने को मिलती है जो कि हिंदी को वैश्विक पटल पर अधिक वैभवशाली बनाती है।

वैश्विक पटल पर हिंदी का प्रभाव

भारत की विकासशील से विकसित अर्थव्यवस्था की यात्रा केवल जीडीपी वृद्धि तक सीमित नहीं है। आज भारत अपनी छवि एक निर्यातक के रूप में बना रहा है। यह निर्यात प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में भी है, उत्पादन संबंधी भी व कला-भाषा-साहित्य का भी। आज दुनिया भारत के इतिहास को जानना चाहती है, इसकी संस्कृति से जुड़ना चाहती है व इस भारतीयता को अपनाना चाहती है। हिंदी भी इसी यात्रा में अपनी उड़ान पकड़े हुए है। आज दुनियाभर में

हमारे कई वैश्विक नेता व राजनयिक हिंदी के प्रचारक की भूमिका भली-भांति निभा रहे हैं।

भाषा का भविष्य—नागरिकों की भूमिका व सरकारों का प्रयास

भाषा का संरक्षण हम सभी का कर्त्तव्य है। भाषा अपनी यात्रा घर से ही शुरू करती है। एक बच्चा आमतौर पर अपने माता-पिता, घर वालों से ही भाषा व संस्कार सीखता है। यह हम पर निर्भर करता है कि हम बच्चे को उसकी मातृभाषा से जोड़े रखना पसंद करेंगे या फिर किसी विदेशी भाषा के अधूरे ज्ञान पर इतराना। आज सरकार परीक्षाओं व प्रशिक्षण में न केवल हिंदी को अपितु अन्य भारतीय भाषाओं को भी आगे बढ़ा रही है। यह बेहद प्रशंसनीय है। सरकारी व सार्वजनिक उपक्रमों में राजभाषा अधिकारी, हिंदी अधिकारी, अनुवादक, दुभाषिया, हिंदी प्राध्यापक आदि की नियुक्ति भी भाषा के परिप्रेक्ष्य में एक बड़ा कदम है।

हिंदी के प्रचार-प्रसार में भारतीय सैन्य संगठनों का महत्व

वैसे तो राजभाषा विभाग के प्रयासों से आज शायद ही कोई ऐसा सरकारी कार्यालय होगा जहां हिंदी में कार्य न हो रहा हो। कहीं पर यह कार्य अनुपालन व कार्यान्वयन को ध्यान में रखकर किया जा रहा है तो किन्हीं संगठनों में यह हिंदी वहां के कर्मचारियों की आत्मा में ही बस चुकी है। सेना और अर्धसैनिक बलों ने हिंदी के प्रचार-प्रसार में जो कार्य किया है वह प्रशंसनीय है। सेना में चाहे आप तेलंगाना से आते हों, या फिर मिजोरम से, हिंदी के बिना आपका काम चल ही नहीं सकता चूंकि वहां आपके साथी भी अलग-अलग बोली-भाषाओं से संबंध रखते हैं तो ऐसे में हिंदी वहां अलग-अलग क्षेत्रों से आए जवानों में संवाद स्थापित करने का कार्य करती है। सेना की सभी रेजिमेंट्स अपने-अपने रणहुंकारों (वॉर क्राइज़) के लिए जानी जाती हैं। रणहुंकार एक सैनिक की आत्मा की आवाज़ होती है इसीलिए आपको सभी रेजिमेंट्स के रणहुंकार भारतीय भाषाओं में ही देखने को मिलेंगे। सेना में पत्र-व्यवहार में भी आपसे अपेक्षित होता है कि आप हिंदी का ही प्रयोग करें। उसी प्रकार से सैनिकों के परिवार जो आमतौर पर छावनी में रहते हैं, हिंदी धीरे-धीरे उनकी भी पसंदीदा भाषा बन जाती है। यही वजह है कि आप बिना कोई राजभाषा विभाग स्थापित किए बिना भी हमारी सेना, अर्धसैनिक बल जैसी संस्थाओं से यह अपेक्षा कर सकते हैं कि वह हिंदी का प्रचार-प्रसार ऐसे ही निरंतर करते रहेंगे।

हिंदी जो हमारी आत्मा का हिस्सा है व हमारे देश की पहचान है, जो हमें आपस में जोड़ती है एवं सशक्त समाज का निर्माण करती है, आइए इसे आत्मसात करें और बस हिंदी दिवस तक ही सीमित न रहें। भारत में हिंदी को बचाए रखने के लिए अब हिंदी दिवस व हिंदी पखवाड़ा नहीं अपितु हिंदी वर्ष मनाने का समय आ चुका है।

हिंदी दिवस नहीं अब हिंदी वर्ष मनाएंगे
तभी तो हम सच्चे भारतीय कहलाएंगे
बैर नहीं हमें किसी विदेशी बोली-भाषा से
पर पहले हम भारतीय भाषाओं का परचम लहराएंगे।

जय हिंद! जय हिंदी! जय भारत!

हरे राम मिश्र
सहायक कमांडेंट (सेवानिवृत्त)
सीआरपीएफ

चलना तो पड़ेगा

पानी है मंजिल कोई बड़ी
बड़े रास्तों पर चलना तो पड़ेगा
बन ना है शूरवीर अपने जीवन का
युद्धों में हरदम, लड़ना तो पड़ेगा
देखने एक दिन वो कामयाबी का,
कई दिन, कई रातों का बलिदान देना तो पड़ेगा

देखने वो शिखर कहीं, छूना हो बुलंदी को
छोड़ के अपनी जमीन, आसमान में उड़ना तो पड़ेगा
मिले ना मरहम कोई दर्दों पर
खुद ही हंस के, सहना तो पड़ेगा

चमकना है आसमान में वो सितारे की तरह
रात के अंधेरों में झांकना तो पड़ेगा
जब हो अंधेरा चारों और, ना दिखें रोशनी कही
खुद के लिए, खुद को जलाना तो पड़ेगा

जब बन ना है कठोर चट्टान की भांति,
समेट के दर्द सारे दिल में, छुपाना तो पड़ेगा
अहमियत हो मंजिल की तुमको, जुनून हो सीने में
कभी गैरों से, तो कभी अपनों से भी, लड़ना तो पड़ेगा

छोड़ के वादे वो झूठे प्यार के,
अपनी मंजिल से, सच्चा प्यार तो करना पड़ेगा
एक तुम ही हो, राही अपनी मंजिल के
तुम्हे हर दम, चलना तो पड़ेगा ॥

- ध्रुमेशकुमार चावड़ा

तोल-मोल के बोल

अंधी दुनिया का अंधा कानून
जिसमें फंसता इंसान मासूम
बोलों पर है लगी लगाम
नियमों की हैं ऊंची कमान

कर रहे अस्मत पर वार
मिथ्या, झूठ और भष्ट्राचार
दुखी अपनों की सच्चाई
बैठे-बिठाए लाज गवाईं

जान गए हम सच का वादा
भूल गए वो मर्यादा
जान पे आज मेरी बन आई
हो गई मेरी रूसवाई

नियम, कानून पर अटल सत्य
बैठा है यूं घात लगाए
जतन तुम चाहे कर लो जितने
इस जंजीर को तोड़ न पाए
आओ मिलकर जागे हम सब
अपना हो, यूं दृढ़ विश्वास
बोले और आंखे खोलें
फिर अस्मत से कोई न खेलें।

नीलम
सहायक प्रशासनिक अधिकारी
पी.एम.ई. (आर.सी.) अनुभाग, निदेशालय

पुरस्कार व सम्मान

हिंदी चेतना मास-2024 के दौरान आयोजित विभिन्न प्रतियागिताओं के पुरस्कृत प्रतिभागियों की सूची।

क्र.सं.	प्रतियोगिता, विजयी प्रतिभागी का नाम, पदनाम व स्थापना	परिणाम	पुरस्कार धनराशि (रु.)
काव्य पाठ प्रतियोगिता (02 सितंबर, 2024)			
1.	श्री शिव कुमार सिंह, तकनीकी अधिकारी, आनुवंशिकी संभाग	प्रथम	2500/-
2.	श्री अनुज कुमार मलिक, तकनीकी सहायक, आनुवंशिकी संभाग	द्वितीय	2000/-
3.	श्रीमती नीलम, सहायक प्रशासनिक अधिकारी, पी.एम.ई.II (आर.सी.) अनुभाग	तृतीय	1500/-
4.	डॉ. उत्कर्ष तिवारी, वैज्ञानिक, कृषि अर्थशास्त्र संभाग	प्रोत्साहन	600/-
5.	डॉ. विष्णु माया, वरिष्ठ वैज्ञानिक, पादप रोग विज्ञान संभाग	प्रोत्साहन	600/-
आशुभाषण प्रतियोगिता (वैज्ञानिक वर्ग/प्रशासनिक एवं तकनीकी वर्ग/आरए/एसआरएफ/ जेआरएफ/वाईपी/प्रोजेक्ट असिस्टेंट/ संविदा कार्यालय सहायक/संविदा आशुलिपिक) (06 सितंबर, 2024)			
वैज्ञानिक वर्ग में			
1.	डॉ. रेनू सिंह, प्रधान वैज्ञानिक, पर्यावरण विज्ञान संभाग	प्रथम	2500/-
2.	डॉ. दिनेश कुमार शर्मा, प्रधान वैज्ञानिक, पर्यावरण विज्ञान संभाग	द्वितीय	2000/-
3.	डॉ. धारा सिंह गुर्जर, वरिष्ठ वैज्ञानिक, जल प्रौद्योगिकी केंद्र	तृतीय	1500/-
4.	डॉ. इन्दु चोपड़ा, वरिष्ठ वैज्ञानिक, मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन संभाग	प्रोत्साहन	600/-
5.	डॉ. मोनालिशा प्रमाणिक, वरिष्ठ वैज्ञानिक, जल प्रौद्योगिकी केंद्र	प्रोत्साहन	600/-
(तकनीकी/प्रशासनिक वर्ग में)			
1.	श्रीमती शिवानी चौधरी, सहायक, स्नातक विद्यालय-I अनुभाग	प्रथम	2500/-
2.	श्री आनंद विजय दुबे, सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी, कैटेट संभाग	द्वितीय	2000/-
3.	श्रीमती साधिका मलिक ठकराल, सहायक, सुरक्षा अनुभाग	तृतीय	1500/-
4.	डॉ. बबीता यादव, तकनीकी अधिकारी, कीट विज्ञान संभाग	प्रोत्साहन	600/-
5.	डॉ. लोकेन्द्र सिंह, तकनीकी अधिकारी, संरक्षित कृषि प्रौद्योगिकी केंद्र	प्रोत्साहन	600/-

आरए/एसआरएफ/जेआरएफ/वाईपी/प्रोजेक्ट असिस्टेंट/संविदा कार्यालय सहायक/संविदा आशुलिपिक वर्ग में			
1.	सुश्री टीना, संविदा आशुलिपिक, मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन संभाग	प्रथम	2500/-
2.	-----	--	--
3.	श्री अरविन्द सिंह, वाईपी-I, बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संभाग	तृतीय	1500/-
4.	श्री सुनील कुमार, वाईपी-I, बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संभाग	प्रोत्साहन	600/-
5.	श्री अमित गुप्ता, एसआरएफ, कृषि अभियांत्रिकी संभाग	प्रोत्साहन	600/-
प्रश्न मंच प्रतियोगिता (10 सितंबर, 2024)			
1.	डॉ. अतुल कुमार, प्रधान वैज्ञानिक, बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संभाग		200/-
2.	डॉ. विकास बामल, वरिष्ठ वैज्ञानिक, सूत्रकृमि विज्ञान संभाग		100/-
3.	डॉ. धारा सिंह गुर्जर, वरिष्ठ वैज्ञानिक, जल प्रौद्योगिकी केंद्र		200/-
4.	डॉ. विजय प्रजापति, वैज्ञानिक, जल प्रौद्योगिकी केंद्र		200/-
5.	डॉ. धर्मपाल सिंह, वरिष्ठ तकनीकी सहायक, बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संभाग		200/-
6.	श्री गुलाब सिंह, तकनीशियन, सूक्ष्मजीव विज्ञान संभाग		200/-
7.	डॉ. रेनू सिंह, प्रधान वैज्ञानिक, पर्यावरण विज्ञान संभाग		200/-
8.	डॉ. मनोज श्रीवास्तव, प्रधान वैज्ञानिक, पर्यावरण विज्ञान संभाग		100/-
9.	डॉ. रणबीर सिंह, सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी, सस्य विज्ञान संभाग		200/-
10.	श्री सुरेश चन्द शर्मा, सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी, मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन संभाग		200/-
11.	डॉ. लोकेन्द्र सिंह, वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी, संरक्षित कृषि प्रौद्योगिकी केंद्र		200/-
12.	श्री विजयभान सिंह, तकनीकी अधिकारी, कैटेट		300/-
13.	श्रीमती पूनम, सहायक प्रशासनिक अधिकारी, कृषि ज्ञान प्रबंधन इकाई		200/-
14.	सुश्री शिवानी विधुड़ी, सहायक वित्त एवं लेखा अधिकारी, ऑडिट-3 अनुभाग		200/-
15.	श्री पुनीत, सहायक, कार्मिक-2 अनुभाग		200/-
16.	श्रीमती नीलम, सहायक प्रशासनिक अधिकारी, पी.एम.ई.II (आर.सी.) अनुभाग		100/-

17.	श्रीमती सुनीता शर्मा, निजी सचिव, मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन संभाग		200/-
18.	श्री अजय कुमार, वरिष्ठ तकनीकी सहायक, जल प्रौद्योगिकी केंद्र		300/-
19.	श्री अनुज कुमार मलिक, तकनीकी सहायक, आनुवंशिकी संभाग		200/-
20.	श्री शशिकान्त सिन्हा, सहायक, जल प्रौद्योगिकी केंद्र		200/-
21.	श्री संजय कुमार, सहायक, जल प्रौद्योगिकी केंद्र		200/-
22.	श्री अमित कुमार, सहायक, कार्मिक-5 अनुभाग		100/-
23	श्रीमती शिवानी चौधरी, सहायक, स्नातक विद्यालय-1 अनुभाग		200/-
24.	श्रीमती शिवांगी रावत, सहायक, भुगतान अनुभाग, ऑडिट विंग		200/-
25.	श्री शिव कुमार सिंह, तकनीकी अधिकारी, आनुवंशिकी संभाग		200/-
26.	श्री प्रताप सिंह, एमटीएस, जल प्रौद्योगिकी केंद्र		100/-
27.	श्री भरत कुमार शर्मा, टी-1, जल प्रौद्योगिकी केंद्र		100/-
क्र.सं.	**प्रतियोगिता, विजयी प्रतिभागी का नाम, पदनाम व स्थापना**	**परिणाम**	**पुरस्कार धनराशि (रु.)**
चित्र पर आधारित कहानी अथवा काव्य लेखन प्रतियोगिता (13 सितंबर, 2024)			
1.	श्री जुगेन्द्र कुमार, तकनीकी सहायक, संरक्षित कृषि प्रौद्योगिकी केंद्र	प्रथम	2500/-
2.	सुश्री कृतिका, वित्त एवं लेखा अधिकारी, सामान्य भविष्य निधि अनुभाग	द्वितीय	2000/-
3.	सुश्री कृति गुप्ता, सहायक प्रशासनिक अधिकारी, सर्तकता अनुभाग	तृतीय	1500/-
4.	श्री विजयभान सिंह, तकनीकी अधिकारी, कैटेट	प्रोत्साहन	600/-
5.	सुश्री जन्नत, सहायक, जैव रसायन संभाग	प्रोत्साहन	600/-
श्रुतलेख प्रतियोगिता (17 सितंबर, 2024)			
1.	सुश्री कृति गुप्ता, सहायक प्रशासनिक अधिकारी, सर्तकता अनुभाग	प्रथम	2500/-
2.	श्रीमती शिवानी चौधरी, सहायक, स्नातक विद्यालय-। अनुभाग	द्वितीय	2000/-
3.	श्री बी.एस.रावत, निजी सचिव, प्रकाशन इकाई	तृतीय	1500/-

4.(i)	डॉ. इन्दु चोपड़ा, वरिष्ठ वैज्ञानिक, मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन संभाग	प्रोत्साहन	300/-
4. (ii)	सुश्री तृप्ति, सहायक, सर्तकता अनुभाग		300/-
5.(i)	श्री शशिकांत सिन्हा, सहायक, जल प्रौद्योगिकी केंद्र	प्रोत्साहन	300/-
5. (ii)	श्रीमती विनीता, सहायक प्रशासनिक अधिकारी, आईएमसी अनुभाग		300/-
टिप्पण एवं मसौदा लेखन प्रतियोगिता (20 सितंबर, 2024)			
1.	श्री आनंद विजय दुबे, सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी, कैटेट	प्रथम	2500/-
2.	श्री जुगेन्द्र कुमार, तकनीकी सहायक, संरक्षित कृषि प्रौद्योगिकी केंद्र	द्वितीय	2000/-
3.	सुश्री शुभदा गहलौत, सहायक प्रशासनिक अधिकारी, कार्मिक-2 अनुभाग	तृतीय	1500/-
4.	श्री बलदेव राज, सहायक प्रशासनिक अधिकारी, संरक्षित कृषि प्रौद्योगिकी केंद्र	प्रोत्साहन	600/-
5.	श्री पुनीत, सहायक, कार्मिक-2 अनुभाग	प्रोत्साहन	600/-
सामान्य ज्ञान प्रतियोगिता (24 सितंबर, 2024)			
1.	श्री विनोद कुमार, एमटीएस, संयुक्त निदेशक (प्रशासन) का निजी अनुभाग	प्रथम	2500/-
2.	श्री राम बिलास साह, एमटीएस, कृषि प्रसार संभाग	द्वितीय	2000/-
3.	श्री बृज किशोर, दैनिक वेतन भोगी, सामान्य भविष्य निधि अनुभाग	तृतीय	1500/-
4.	श्रीमती मोना, एमटीएस, स्नातक विद्यालय-1 अनुभाग	प्रोत्साहन	600/-
5.	श्री खूबराज सिंह, एमटीएस, ऑडिट-3 अनुभाग	प्रोत्साहन	600/-
हिंदी टंकण प्रतियोगिता (27 सितंबर, 2024)			
1.	श्री बी.एस.रावत, निजी सचिव, प्रकाशन इकाई	प्रथम	2500/-
2.	श्रीमती सुनीता नागपाल, निजी सचिव, संयुक्त निदेशक (प्रशासन) का निजी अनुभाग	द्वितीय	2000/-
3.	श्री चन्देश्वर कापर, सहायक, भंडार अनुभाग	तृतीय	1500/-
4.	श्री अजय कुमार, अवर श्रेणी लिपिक, कीट विज्ञान संभाग	प्रोत्साहन	600/-
5.	श्री संजय सिंह, अवर श्रेणी लिपिक, स्नातक विद्यालय-1 अनुभाग	प्रोत्साहन	600/-

प्रो. एम एस स्वामीनाथन पुस्तकालय
Prof. M S SWAMINATHAN LIBRARY